ORIGIN AND PROCESS OF CULTURAL DEVELOPMENT IN THE MIDDLE GANGA PLAIN

मध्य गागेय मैदान मे सस्कृतियो का उद्भव एव विकास प्रक्रिया

डी0 फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध
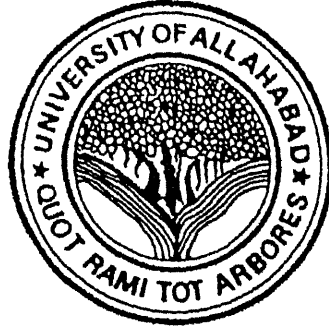
पर्यवेक्षक
प्रो0 वी0 डी0 मिश्र
प्राचीन इतिहास, सस्कृति
एव पुरातत्व विभाग,

शोधकर्ता
आभा पाल
प्राचीन इतिहास, सस्कृति
एव पुरातत्व विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद,
2002

प्राक्कथन

भारत मे मानव सभ्यता के विकास मे गगाघाटी का विशिष्ट स्थान रहा है। आदि काल से अपनी विस्तृत अजस्रधारा मे अनेक सस्कृतियो के विकास और पतन की कहानी को समेटे हुए यह आज "ी भारत की जीवनदायिनी शक्ति के रूप मे लोकविश्रुत है । विन्ध्य क्षेत्र की पर्वत कन्दराओ से मानव ने जब पहली बार गगा के मध्यवर्ती मैदान मे कदम रखा तो उसे सहजरूप से पहाडो की दुरूह जिन्दगी से अवश्य ही राहत मिली होगी फलत मानव ने गगा के विस्तृत समतल मैदान को अपना स्थायी आवास बना लिया ।

यदि कालक्रम के सन्दर्भ मे देखे तो मानव का गगा के मध्यवर्त्ती मैदान मे आब्रजन सर्वप्रथम अनुपुरापाषाण काल मे हुआ । इसी समय से मानव विन्ध्य क्षेत्र की शुष्क जलवायु से सत्रस्त होकर क्षुधापूर्ति की तलाश मे गगा—यमुना नदी को पारकर समतल मैदान मे कदम रखा । यद्यपि मानव का यह आब्रजन प्रारम्भ मे अस्थाई एव ऋतुनिष्ठ था लेकिन मैदान की अनुकूल जलवायु से वह इतना प्रभावित था कि हथियारो के लिए प्रयुक्त होने वाले पत्थरो की तलाश मे चाहे बार—बार विन्ध्य क्षेत्र मे वापस जाना हो या पुस्तैनी स्थल से मोह का सकट हो इन सबसे क्रमश मुक्त होकर मानव ने मध्य गगा मैदान को ही अपना स्थायी आवास बना लिया । गगा के सम्पूर्ण अपवाह क्षेत्र को भू—विज्ञान की दृष्टि से तीन भागो मे विभक्त किया गया है 1 ऊपरी गगा का मैदान 2 मध्य गगा का मैदान एव 3 निचली गगा का मैदान। इनमे आवासीय अनुकूलताओ की दृष्टि से गगा का मध्यवर्ती मैदान सर्वाधिक उपयुक्त है परिणामत मानव सभ्यता के प्रमाण यहॉ पर प्रारम्भ से अद्यावधि अविच्छिन्न रुप से प्राप्त होते है । चाहे स्थायी आवास बनाने का मानव का प्रथम प्रयास हो या नगरीकरण का विकास हो सभी दृष्टियो से यह क्षेत्र मानव सभ्यता के विकास की स्पष्ट कहानी कहता नजर आता है। पुरातात्विक दृष्टि से इसकी महत्ता का प्रमाण इस बात से भी मिलता है कि आजादी से पूर्व और अब तक इस क्षेत्र का पुरातत्वविदो ने गहन सर्वेक्षण के साथ ही अनेक स्थलो

का वृहद पैमाने पर उत्खनन किया है जिससे मानव सभ्यता के अनेक अनसुलझे प्रश्नो को समझने मे सहायता मिली है ।

प्रस्तुत विषय विशेष को शोध का विषय बनाने के मूल मे मेरी यही अवधारणा रही है कि मध्य गगा घाटी मे मानव सभ्यता के विकास की कहानी को एक सुव्यवस्थित क्रम मे प्रस्तुत किया जाये । क्योकि मध्यगगा के इस 1 44 209 वर्ग किमी के विस्तृत परिक्षेत्र मे अनेक विश्वविद्यालयो एव सस्थानो के पुरातत्वविदो ने अपने स्तर पर सर्वेक्षण, उत्खनन एव प्राप्त सामग्रियो का अध्ययन प्रस्तुत किया है लेकिन अब तक सभी साक्ष्यो को एक साथ रखकर सम्पूर्ण परिक्षेत्र के मानव सभ्यता के उद्भव और विकास के अनुक्रम को प्रस्तुत करने की ओर प्राय कम ही ध्यान गया है । मेरा प्रयास है कि मध्यगगाघाटी मे मानव सभ्यता के उद्भव और विकास की कहानी को एक सुव्यवस्थित अनुक्रम मे रख कर प्रस्तुत करे । प्रथम सहस्राब्दी ई0 पू0 के मध्य मे गगा के मैदान मे आर्थिक सम्पन्नता के फलस्वरूप जिस द्वितीय नगरीकरण का आविर्भाव, गौतम बुद्ध तथा महावीर के क्रमश बौद्ध और जैन नामक जिन धर्मों को स्थापित किया और सोलह महाजनपदो तथा उसके बाद चार राजतन्त्रात्मक राज्यो तथा अतत मगध साम्राज्य का जो उत्कर्ष हुआ वह सब आकस्मिक नही था । उसकी पृष्ठभूमि का स्वरूप क्या था ? इस प्रश्न के समुचित उत्तर प्राप्ति हेतु भी मैने इस दृष्टि से शोध विषय का अनुशीलन किया ।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से प्रस्तुत शोध प्रबध को मानव सभ्यता के विकास के अनुरूप क्रमश पूर्वपाषाण काल मध्यपाषाण काल, नवपाषाण काल, ताम्रपाषाण काल एव लौह काल के कालानुक्रम के परिप्रेक्ष्य मे मध्य गगाघाटी मे सभ्यता के उद्भव और विकास को क्रमश देखने का प्रयास किया गया है । उल्लेखनीय है कि मध्यगगा घाटी मे मानव का सर्वप्रथम पदार्पण मध्यपाषाण के पूर्व और उच्चपूर्वपाषाण काल के अतिम चरण जिसे पुरातत्वविदो ने अनुपुरापाषाण काल नाम दिया है मे हुआ । तब से लेकर मानव सभ्यता का वर्णन प्रारभिक ऐतिहासिक काल तक अर्थात नगरीकरण की प्रक्रिया के प्रारम्भ होने तक करने का प्रयास प्रस्तुतीकरण को ध्यान मे रखते हुए निम्नलिखित छ अध्यायो मे विभाजित किया है

विश्लेषण एव विवेचन के क्रम मे मैने अपने शोध प्रबध को अध्ययन और शोध प्रबध के **प्रथम अध्याय** मे गगा नदी के महत्व के ही साथ उसकी भौतिक दृष्टि से उपयोगिता का विवेचन ऊपरी मध्य और निम्नगगाघाटी के उपसदर्भो मे किया है। सम्पूर्ण अपवाह क्षेत्र की भौगोलिक विशिष्टताओ तथा प्राकृतिक ससाधनो का विवरण तथा सास्कृतिक अनुक्रम इस अध्याय के अन्तर्गत दिया गया है । **द्वितीय अध्याय** मे मध्य गगाघाटी मे मानव के पदार्पण की कहानी एव प्रथम सस्कृति– मध्यपाषाण सस्कृति को अनुपुरापाषाण काल के साथ ही बढते हुए क्रम मे देखने का प्रयास किया है । इस अध्याय मे मध्य गगाघाटी के मध्य पाषाण कालीन स्थलो से प्राप्त पुरासामग्रियो एव उनके अब तक के विश्लेषणो को सम्यक दृष्टि से सम्पूर्ण पक्षो के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है । **तृतीय अध्याय** मे मध्य गगाघाटी की प्रथम स्थायी और कृषक सस्कृति अर्थात नवपाषाण काल का व्यापक सन्दर्भो मे विवेचन करने का प्रयास किया गया है । ध्यातव्य है कि मध्य गगाघाटी से इस सस्कृति के अपेक्षाकृत कम स्थल एव सामग्रियॉ प्रतिवेदित हुई है। इस तथ्य के विविध पहलुओ पर भी इसी अध्याय मे विचार करने का प्रयास किया गया है । **चतुर्थ अध्याय** मे ताम्रपाषाण युगीन सस्कृति के विविध पक्षो पर दृष्टिपात करते हुए विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है । इस सस्कृति के अनेक स्थानो के उत्खननो से प्राप्त सामग्रियो का जहॉ पर विवेचन करते समय विशेष ध्यान रखा गया है । वही पर अनेक स्थलो से सर्वेक्षण से प्राप्त सामग्रियो को भी उनके साथ सदर्भित करते हुए विश्लेषण किया गया है । **पॉचवे अध्याय** मे उत्तर भारत की महत्वपूर्ण पात्र–परम्परा उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड परम्परा (एन0बी0पी0 डब्लू0) सस्कृति के पूर्व की पात्र परम्परा सस्कृति (प्री0 एन0बी0पी0 डब्लू0) को लोहे के साथ विकास की विभिन्न अवस्थाओ मे देखने और विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है । स्मरणीय है कि महत्वपूर्ण पात्र–परम्परा एन0बी0पी0 डब्लू0 के पूर्व भारत मे प्री0 एन0बी0पी0 डब्लू0 सस्कृति से मिलते–जुलते काले, लाल और काली–एव–लाल लेपित (Black-and-Red-Slipped) मृदभाण्ड अनेक स्थलो से प्राप्त होते है जो आगामी नगरीय सस्कृति की पूर्वपिठिका स्वरूप है । इस सस्कृति को नगरीकरण की पूर्वपीठिका के सन्दर्भ मे

देखने और विश्लेषण करने का प्रयास प्रस्तुत अध्याय मे किया गया है । इसी अध्याय मे उत्तरी काली पात्र परम्परा सस्कृति के विविध पहलुओ को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है । साथ ही नगरीकरण की प्रक्रिया एव उसके समग्र पक्षो पर भी इस सस्कृति से जुडे अनेक स्थल अब तक प्रकाश मे आए है। इन सभी स्थलो से प्रतिवेदित सामग्रियो को अपने विवेचन के आधार मे मैने सम्मिलित करने की कोशिश की है । अत मे शोध प्रबन्ध के **छठे अध्याय** मे उपर्युक्त समस्त विवेचनो का सार प्रस्तुत किया है ।

प्रस्तुत शोध विषय पर भारतीय इतिहास अनुसधान परिषद नई दिल्ली ने मुझे कनिष्ठ शोध अध्येतावृत्ति प्रदान की एतदर्थ मै वहॉ के अधिकारियो एव कर्मचारियो के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिसके फलस्वरूप यह कार्य सुगमता से सम्पन्न हो सका । मैने इस कार्य के लिए देश के अनेक पुस्तकालयो एव शोध सस्थानो से पुस्तकीय मदद ली जिसमे मुख्य तौर पर भारत सरकार का केन्द्रीय पुरातत्व पुस्तकालय नई दिल्ली भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग, डेक्कन कालेज पुणे इलाहाबाद म्यूजियम का सग्राहालय एव पुस्तकालय, बी0 एच0 यू0 के केन्द्रीय एव विभागीय पुस्तकालय तथा अपने विभाग के पुस्तकालय एव फोटोग्राफी तथा ड्राइग सेक्सन से मैने विभिन्न प्रकार का समय समय पर सहयोग लिया । मै इन सभी सस्थानो के अधिकारियो एव कर्मचारियो के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ ।

सुविख्यात पुरातत्वविद एव इतिहासकार प्रो0 वी0 डी0 मिश्र मेरे शोध पर्यवेक्षक है उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना आसान नही है । यह दुर्लभ सयोग है कि मेरे पूज्य पिताजी को भी उनका शिष्य होने का गौरव प्राप्त है । उनका मेरा भी गुरू होना तथा उससे भी अधिक बढकर शोध पर्यवेक्षक होना मेरे लिए अत्यन्त सौभाग्य की बात है । उनका, विद्धतापूर्ण विमर्श एव आर्शीवाद मेरे जीवन की पूँजी रहेगी । प्रस्तुत शोध प्रबध को पूर्ण करने मे मैंने उनके मार्ग दर्शन एव सानिध्य से पुरातत्व की छोटी से बडी जिज्ञासाओ का समाधान प्राप्त किया । उनका मुझ पर सदैव पुत्रीवत् स्नेह रहा है। मै यह कामना करती हूँ कि उनका इसी प्रकार आर्शीवाद और स्नेह सदैव बना रहे ।

ख्यातिप्राप्त पुरातत्वविद् प्रो० राधाकान्त वर्मा जो मेरे पूज्य पिताजी के भी गुरू रहे है । उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना अत्यन्त दुरूह कार्य है । उनकी विषयपरक दृष्टि अमूल्य सुझावो एव समस्या के सहज समाधान के लिए मै अगाध श्रृद्धा एव कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ । यही नही डॉ० नीरा वर्मा के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना भी मेरा सहजधर्म है ।

इस कार्य मे विभाग के वर्तमान एव अवकाश प्राप्त समस्त गुरूजनो का मेरे प्रति आदर एव स्नेह रहा सबके प्रति मै श्रृद्धावनत हूँ । परम श्रद्धेय प्रो० जी० सी० पाण्डेय प्रो० जे० एस० नेगी प्रो० बी० एन० एस० यादव, प्रो० यू० एन० राय प्रो० एस० एन० राय डॉ० सध्या मुकर्जी प्रो० एस० सी० भट्टाचार्य प्रो० डी० मण्डल डॉ० बी० बी० मिश्रा प्रो० आर० के० द्विवेदी प्रो० गीता देवी के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा पुनीत कर्तव्य है।

प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग के सम्प्रति विभागाध्यक्ष प्रो० ओम प्रकाश के अमूल्य सुझावो एव उत्साहवर्धक मार्गदर्शन के लिए मै कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। विभाग के अन्य गुरूजनो प्रो० आर० पी० त्रिपाठी प्रो० जी० के० राय, प्रो० जे० एन० पाण्डेय प्रो० रजना बाजपेई, डा० एच० एन० दूबे श्री ओमप्रकाश श्रीवास्तव डॉ० उमेश चन्द्र चट्टोपाध्याय डॉ० वनमाला मधोल्कर, डा० ए० पी० ओझा डॉ० पुष्पा तिवारी डॉ० अनामिका राय डा० सी० डी० पाण्डेय, डॉ० डी० पी० दुबे, डॉ० डी० के० शुक्ला डॉ० हर्ष कुमार डॉ० शशिकान्त राय डॉ० प्रकाश सिन्हा डॉ० सुधा कुमार डॉ० सुनीति पाण्डेय, डॉ० विमल चन्द्र शुक्ला के प्रति मै उनकी प्रेरणा एव शोधपरक सुझावो के लिए आभारी हूँ ।

डॉ श्रीराम पाल डॉ० मानिक चन्द्र गुप्ता डॉ० सुशील त्रिवेदी डॉ० अनिल कुमार दुबे डॉ० प्रहलाद बरनवाल डॉ० राम नरेश पाल श्री शैलेन्द्र त्रिपाठी ने विविध रूपो मे मेरा मार्ग दर्शन किया और अमूल्य सुझाव दिया मै उनके प्रति धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ ।

अनेक विश्वविद्यालयो एव पुरातत्व सस्थाओ के विद्वानो एव अधिकारियो का जो अमूल्य सहयोग प्राप्त है उसके लिए मै कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ । इनमे प्रो०

वी0 सी0 श्रीवास्तव (पूर्व विभागाध्यक्ष एव सम्प्रति निदेशक भारतीय उच्च अध्ययन सस्थान शिमला) प्रो0 पुरुषोत्तम सिह प्रो0 विदुला जायसवाल प्रो0 विभा त्रिपाठी (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी) प्रो0 दयानाथ त्रिपाठी (पूर्व विभागाध्यक्ष दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर) प्रो0 रमा नाथ मिश्र (फेलो भारतीय उच्च अध्ययन सस्थान शिमला) डॉ0 राकेश तिवारी (निदेशक राज्य पुरातत्व विभाग लखनऊ उत्तर प्रदेश) डॉ0 डी0 पी0 तिवारी (लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ) प्रो0 यू0 पी0 अरोरा प्रो अतुल कुमार सिन्हा (महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली) प्रो0 आर0 पी0 पाण्डेय (जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर) प्रो0 वी0 एन0 मिश्रा डॉ0 पी0 पी0 जोगलेकर (डेक्कन कालेज पुणे) प्रो0 के0 एम0 श्रीमाली डॉ0 इन्द्राणी चट्टोपध्याय (दिल्ली विश्वविद्यालय) डॉ0 एस0 पी0 गुप्ता डॉ0 के0 एन0 दीक्षित (पुरातत्व सस्थान नई दिल्ली) श्री जे0 पी0 जोशी श्री एम0 सी0 जोशी, डॉ0 आर0 एस0 विष्ट डॉ0 अरुन्धती बनर्जी, श्री चन्द्र भाल मिश्र (भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, विभाग नई दिल्ली) डॉ0 अजय सिन्हा डॉ0 अजित कुमार प्रसाद (राज्य पुरातत्व विभाग बिहार एव झारखण्ड) प्रभृति विद्वानो ने प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रुप मुझे शोध कार्य के लिए उत्साहवर्धक सुझाव दिये है उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा परम कर्तव्य है।

गुरूजनो के अतिरिक्त विभाग के तकनीकी सदस्यो सर्वश्री एच0 एन0 कर एल0 के0 तिवारी वी0 एन0 राय राजेन्द्र प्रसाद वी0 के0 खत्री, कमलेश कुमार अरविन्द मालवीय शरद सुमन राजेश कुमार प्रभृति के प्रति भी मै आदरभाव व्यक्त करती हूँ, जिनका इस शोध के पूर्ण होने मे अमूल्य योगदान रहा है । श्री सतीश चन्द्र केशरवानी ने जिस निष्ठा व लगन के साथ इस शोध प्रबन्ध को टकित किया है, उसके लिए वे साधुवाद के पात्र है ।

वस्तुत, पुरातत्व मे मेरी रुचि बचपन से ही रही क्योकि मेरे पिता प्रो0 जे0 एन0 पाल इस विषय के प्रति समर्पित प्रसिद्ध पुरातत्वविद् है। उनकी प्रेरणा से ही प्रस्तुत कार्य सम्भव हो सका । अन्त मे मै माता श्रीमती सुमन पाल भाई सुनीत

पाल एव प्रिय बहन स्वाभा पाल जिनके वात्सल्यभाव एव स्नेह के बिना यह कार्य पूर्ण होना असभव था उनके प्रति मै ह्रदय से अभार व्यक्त करती हूँ एव अपनी अगाध श्रृद्धा व्यक्त कर रही हूँ । अभिन्न मित्रो मे प्रज्ञा मिश्रा अजलि श्रीवास्तव निधि श्रीवास्तव नमिता श्रीवास्तव श्री जितेन्द्र कुमार नौलखा प्रिय जैस्मिन पाल महेन्द्र पाल विवेक अग्रहरि आनन्द गुप्ता पीयूष गुप्ता प्रीति गुप्ता, रूद्र प्रताप पाल श्रीमती सावित्री गुप्ता आदि सभी के प्रति ह्रदय से आभार व्यक्त करती हूँ। इनकी सदीच्छा एव शुभकामनाओ के अभाव मे प्रस्तुत शोध पूर्ण करना दुष्कर कार्य था ।

आभा पाल

दिसम्बर 15 2002

आभा पाल

विषयसूची

रेखाचित्रो की सूची

छायाचित्रो की सूची

तालिकाओ की सूची

प्रथम अध्याय

मध्य गागेय मैदान की स्थिति, भौगोलिक परिदृश्य, जलवायु, वनस्पति और जीव जगत्, जल–स्रोत, सास्कृतिक अनुक्रम

गगा नदी भारत की अद्भुत सास्कृतिक धरोहर ही नही अपितु सदियो से भारतीय जनमानस की प्रेरणा का स्रोत रही है। अपने अपवाह क्षेत्र मे महान सस्कृतियो का उतार चढाव और मानव की उन्नति–अवनति की गाथा समेटे हुए इस पवित्र सरिता की महत्ता का वर्णन आदि काल से न केवल पौराणिक, अध्यात्मिक साहित्य मे मिलता है अपितु लौकिक साहित्य मे भी इसकी विशिष्टता एव महत्ता की अनेकानेक कथाए और अन्तर्कथाए प्राप्त होती है । समय–समय पर भारत मे आने वाले विदेशी यात्रियो ने भी अपने यात्रा सस्मरणो और पुस्तको आदि मे तत्कालीन भारतीय जनमानस मे व्याप्त इनकी महत्ता का विस्तृत वर्णन किया है।

यह प्राचीनतम काल से भारतीय सस्कृति की एकता एव पवित्रता की प्रतीक मानी गई है । लोक कथाओ तथा परम्पराओ मे इसे शक्ति देने वाली 'गगा माता' कहा गया है । गगा प्रारम्भ से ही भारतीयो का आकर्षण रही है । चिरकाल से भारत की सास्कृतिक एकता का यह बधन इतना अटूट तथा शक्तिशाली है कि कोई भी शक्ति इसे नष्ट नही कर सकी । जन मानस मे ऐसा विश्वास है कि गगा के दर्शन मात्र से ही मुक्ति मिल जाती है । गगा की दैवीय उत्पत्ति से सम्बन्धित अनेक कथाए एव किवदन्तियॉ प्रचलित हैं ।

प्राचीन भारतीय साहित्य मे गगा की परिकल्पना देवी के रूप मे, श्वेत वस्त्र पहने हाथ मे कमल लिये हुए तथा मकर पर बैठे हुए की गई है । ब्रह्मवैवर्त्त पुराण मे शिव को गगा की प्रशसा मे गीत गाते हुए वर्णित किया गया है । गगा पापो से प्रायश्चित्त कराने का माध्यम है । जन्मजन्मान्तर से पापियो द्वारा किये गये पाप के ढेर को भी गगा को स्पर्श करती हुई वायु नष्ट कर देती है । जिस प्रकार

अग्नि ईधन समाप्त करती है उसी प्रकार गगा दुष्टो के पापो को आत्मसात कर लेती है । गगा के तट पर मृत्यु प्राप्त करने वाले मनुष्यो के सभी पाप दूर हो जाते है । महाभारत (स्वर्गारोहण पर्व 18/23) के अनुसार युधिष्ठिर गगा के पवित्र जल मे स्नान करके अपने मानव शरीर को त्याग कर अमरत्व को प्राप्त हुए थे ।

गगा के स्वर्गावतरण के विषय मे अनेक कथाए प्रचलित है । जनश्रुति है कि गगा को रघुवशी भगीरथ अपने पूर्वजो– राजा सगर के साठ हजार पुत्रो की मुक्ति हेतु पृथ्वी पर लाये थे (दुबे 1942 40–45)। अयोध्या के राजा सगर की दो रानियाँ थी । एक रानी से अशुमन तथा दूसरी से साठ हजार अन्य पुत्र हुए । राजा सगर ने अश्वमेघ यज्ञ करने का निश्चिय किया तथा अपने 60 000 पुत्रो के नेतृत्व मे काले घोडे को छोड दिया । इस यज्ञ के द्वारा राजा सगर इन्द्र का स्थान प्राप्त करना चाहते थे । इन्द्र ने अपने पद की रक्षा हेतु एक युक्ति की। जैसे ही यज्ञ का घोडा सगर पुत्रो की ऑखो से ओझल हुआ, इन्द्र ने उसे पाताल लोक मे महामुनि कपिल के आश्रम मे बॉध दिया । सभी स्थलो पर खोजने के उपरान्त वह कपिल मुनि के आश्रम मे प्राप्त हुआ । ध्यानमग्न कपिल मुनि को सगर पुत्रो ने चोर समझकर अपमानित किया जिससे क्रोधित होकर कपिल मुनि ने शाप द्वारा सभी सगर पुत्रो को भस्म कर दिया । नारद मुनि द्वारा यह समाचार राजा सगर को दिया गया तथा यह भी बताया गया कि केवल परम पावनी गगा ही मृत्युलोक मे आकर शापित सगर पुत्रो को मुक्ति दिला सकती है । पृथ्वी पर गगावतरण भी सहज नही था । कालान्तर मे रघुवशी राजा भगीरथ की कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने गगा को मृत्युलोक मे भेजना स्वीकार कर लिया (शर्त थी), यदि शकर गगा को अपनी जटाओ पर रोकना स्वीकार कर ले । शकर के गगा को धारण करने के लिए तैयार होने पर गगावतरण हुआ किन्तु शिव की विशाल जटाओ मे गगा बधी रही तथा भगीरथ को एक बार पुन गगा को मुक्त कराने हेतु तपस्या करनी पडी। भगीरथ के तप से प्रसन्न होकर शिव ने अपनी जटाओ से गगा को मुक्त करा दिया । इसी से गगा भगीरथ के नाम से जानी जाने लगी । इसी प्रकार की और भी किम्वदन्तियॉ गगा के नाम से प्रचलित है । गगा के स्पर्शमात्र से सगर पुत्रो को मोक्ष की प्राप्ति हुई ।

विद्वानो का विचार है कि गगा की उत्पत्ति तिब्बत मे मानसरोवर के निकट कैलाश पर्वत से हुई है किन्तु उस समय तक समुचित सर्वेक्षण नही हुए थे । अब इस बात मे सन्देह नही है कि गगा की उत्पत्ति गढवाल क्षेत्र से हुई है । भागीरथी गगा की प्रमुख जलधारा है । गगा का मूल स्रोत हिमाच्छादित गगोत्री के निकट गोमुख नामक स्थान है (30^0 56 –27^0 64 18′) जो समुद्र से 3831 मीटर ऊँचा है। यह इस क्षेत्र के बडे हिमनदियो मे से एक है । भागीरथी 6600 मीटर तथा 6900 मीटर उँचे शिखर वाले हिम से आच्छादित चौखम्भा से बहती है । यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि यद्यपि भागीरथी गगोत्री हिमनद से होकर बहती है परन्तु यह गोमुख मे आकर सूर्य के दर्शन करती है । इस भूमिगत नदी का आविर्भाव हिमनद के हिमविवर के पानी के पिघलने और पृथ्वी के नीचे–नीचे बहने से हुआ । हिमनद से निकलने वाली विभिन्न छोटी नदियॉ भागीरथी मे आकर मिलती है । गगोत्री के ठीक नीचे भागीरथी मे दक्षिण से केदार गगा आकर मिलती है ।

गगोत्री के निकट समुद्र की सतह से लगभग 2985 मीटर ऊपर भागीरथी बहती है । गगोत्री से लगभग 1 6 किमी नीचे भागीरथी मे रूद्रगगा नदी मिलती है जिसका स्रोत भी हिमनद है । आगे चलकर भागीरथी मे अनेक नदियॉ आकर मिलती है यथा– गगा या जाह्नवी गमगम नाला तिलगा नाला कलदीगढ, सलालगढ वनारीगढ भीलनगगा आदि । देवप्रयाग तक इस नदी का नाम भागीरथी है । देवप्रयाग मे आकर यह त्रिशूल के पश्चिमी ढाल पर स्थित हिमनद से उत्पन्न अलकनन्दा नदी से मिलती है । भागीरथी नदी मे मिलने के पूर्व रूद्रप्रयाग नामक स्थान पर अलकनन्दा नदी मन्दाकिनी नदी से मिलती है ।

मन्दाकिनी नदी प्रसिद्ध केदारनाथ धाम के निकट ग्लेशियर से उत्पन्न होती है । भागीरथी तथा अलकनन्दा नदियॉ देवप्रयाग मे आपस मे मिलकर गगा नाम धारण करती है । जल निस्तारण की दृष्टि से गगा नदी विन्ध्य के उत्तरवर्ती तथा शिवालिक की पहाडियो के दक्षिणवर्ती नदियो मे से सबसे महत्वपूर्ण एव विस्तृत नदी है । गगा नदी की लम्बाई 2 506 किमी है । इसे ससार की 39 वी लम्बी नदी माना गया है ।

गगा का मैदान उत्तर मे हिमालय और दक्षिण मे विन्ध्य पर्वत श्रृखला के मध्य मे स्थित है । गगा के मैदान को तीन प्रमुख भागो मे बॉटा जा सकता है–

(1) ऊपरी गागेय मैदान या गगा–यमुना–दोआब जो मोटे तौर पर पूर्व मे इलाहाबाद तक फैला हुआ है ।

(2) मध्य गागेय मैदान जो मोटे तौर पर पूर्वी उत्तर–प्रदेश तथा बिहार का भू भाग है और राजमहल पहाडियो तक विस्तृत है ।

(3) निम्न गागेय मैदान का सीमाकन पश्चिम बगाल और डेल्टा तक किया गया है।

साधारण रूप से गगा के समानान्तर बहने वाली यमुना नदी ऊपरी गगाघाटी की दक्षिणवर्ती सीमा का निर्धारण करती है । यद्यपि यमुना तथा उसकी सहायक वनास सिन्धु बेतवा केन, आदि नदियो के द्वारा राजस्थान और मध्य प्रदेश के एक विस्तृत भूभाग का जल निस्तारण गगा के द्वारा ही होता है किन्तु ऊपरी गगा घाटी मे प्राय यमुना का उत्तरवर्ती क्षेत्र ही लिया जाता है ।

पश्चिम मे यमुना नदी तथा पूर्व मे 100 मीटर समोच्च रेखा के मध्य स्थित ऊपरी गगा घाटी उत्तर प्रदेश के लगभग 1 49 129 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के अन्तर्गत स्थित है । उत्तर मे यह क्षेत्र 300 मीटर की समोच्च रेखा के घेरे मे है, जिसमे शारदा के पश्चिम मे स्थित हिमालय के कुमायूॅ गढवाल तक का क्षेत्र आता है। ऊपरी गगाघाटी की पूर्व दिशा का विस्तार नेपाल की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक है तथा दक्षिण मे यमुना नदी– बुन्देलखण्ड और उच्च गगा घाटी के मध्य सीमा का कार्य करती है । प्रशासकीय दृष्टि से ऊपरी गगा घाटी मे देहरादून जिले को छोडकर सम्पूर्ण कुमायूॅ मेरठ आगरा रूहेलखण्ड और लखनऊ सम्भाग तथा आशिक रूप से इलाहाबाद और फैजाबाद सम्भाग सम्मिलित किये जाते हैं ।

ऊपरी गगा घाटी की मुख्य नदी गगा है जिसकी दो प्रधान नदियॉ घाघरा तथा गोमती आगे चलकर मध्य गगा घाटी मे गगा मे विलीन हो जाती है । प्राय सभी नदियॉ उत्तर–पश्चिम दक्षिण–पूर्व धारा मे ही बहती है । हिमालय से उत्पन्न नदियो मे गगा तथा उसकी सहायक नदियॉ यमुना रामगगा तथा घाघरा आदि

प्रमुख है । ऋतु सम्बन्धी अत्यधिक उतार–चढाव होने पर भी इन नदियो मे वर्ष भर आवश्यकतानुसार पानी रहता है । सरयूपार तथा अवध के मैदानी भाग घाघरा तथा गोमती द्वारा सीचे जाते है जबकि रामगगा रूहेलखण्ड को सीचती है । दक्षिण से आने वाली चम्बल नदी यमुना से मिलने के पूर्व कई किमी तक यमुना के समानान्तर बहती है ।

उत्तर से दक्षिण लगभग 330 किलोमीटर और पूर्व से पश्विम लगभग 600 किलोमीटर के 160 000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र मे फैले मध्य गगा मैदान के अन्तर्गत पूर्वी उत्तर प्रदेश और लगभग सम्पूर्ण बिहार प्रान्त सम्मिलित है (रेखाचित्र 1)। इसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश का पूर्वी एक तिहाई और उत्तरी आधा बिहार सम्मिलित है (स्पेट और लीरमान्थ 1960 564)। उत्तर मे हिमालय तथा दक्षिण मे विन्ध्य पठार से घिरी मध्य गागेय मैदान के पूर्व और पश्चिम कोई प्राकृतिक सीमा रेखा नही है, फिर भी बिहार और बगाल प्रान्तो की सीमा रेखा इसके पश्चिमी छोर का निर्धारण करती है और इलाहाबाद से फैजाबाद जाने वाली रेलवे लाइन को इसकी पश्चिमी सीमा रेखा माना गया है। उत्तरी बगाल मे नदी समूह सचार और जीवन का स्वरूप दक्षिण बगाल से इतना भिन्न है कि स्पेट के अनुसार बिहार के पूर्वी जिले पूर्णिया और समीपस्थ बगाल के क्षेत्र को अलग भौगोलिक इकाई माना जाता है। इस प्रकार मध्य गागेय मैदान के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश मे इलाहाबाद की हडिया और फूलपुर तहसीले मिर्जापुर जिले का कुछ उत्तरी भाग सन्त रविदास नगर वाराणसी और चन्दौली जनपद प्रतापगढ की पट्टी तहसील, जौनपुर सुल्तानपुर की सुल्तानपुर और कादीपुर तहसीले, फैजाबाद की तहसील टाण्डा और अकबरपुर जनपद, गोण्डा की बलरामपुर और उतरौला तहसीले, बस्ती गोरखपुर देवरिया बलिया गाजीपुर तथा आजमगढ जिले एव बिहार मे तिरहुत, भागलपुर (किशनगज तहसील को छोडकर) पटना सम्भाग सम्मिलित है । समुद्र तल से इस क्षेत्र की औसत ऊँचाई 170 मीटर है । यह देश का सबसे उपजाऊ तथा घना बसा क्षेत्र है।

इस क्षेत्र की वनस्पतियॉ उष्णकटिबन्धीय शुष्क पर्णपाती है । लगातार बढती हुई आबादी का दबाव और उसके परिणाम स्वरूप मानव का विगत 4000 वर्षों से
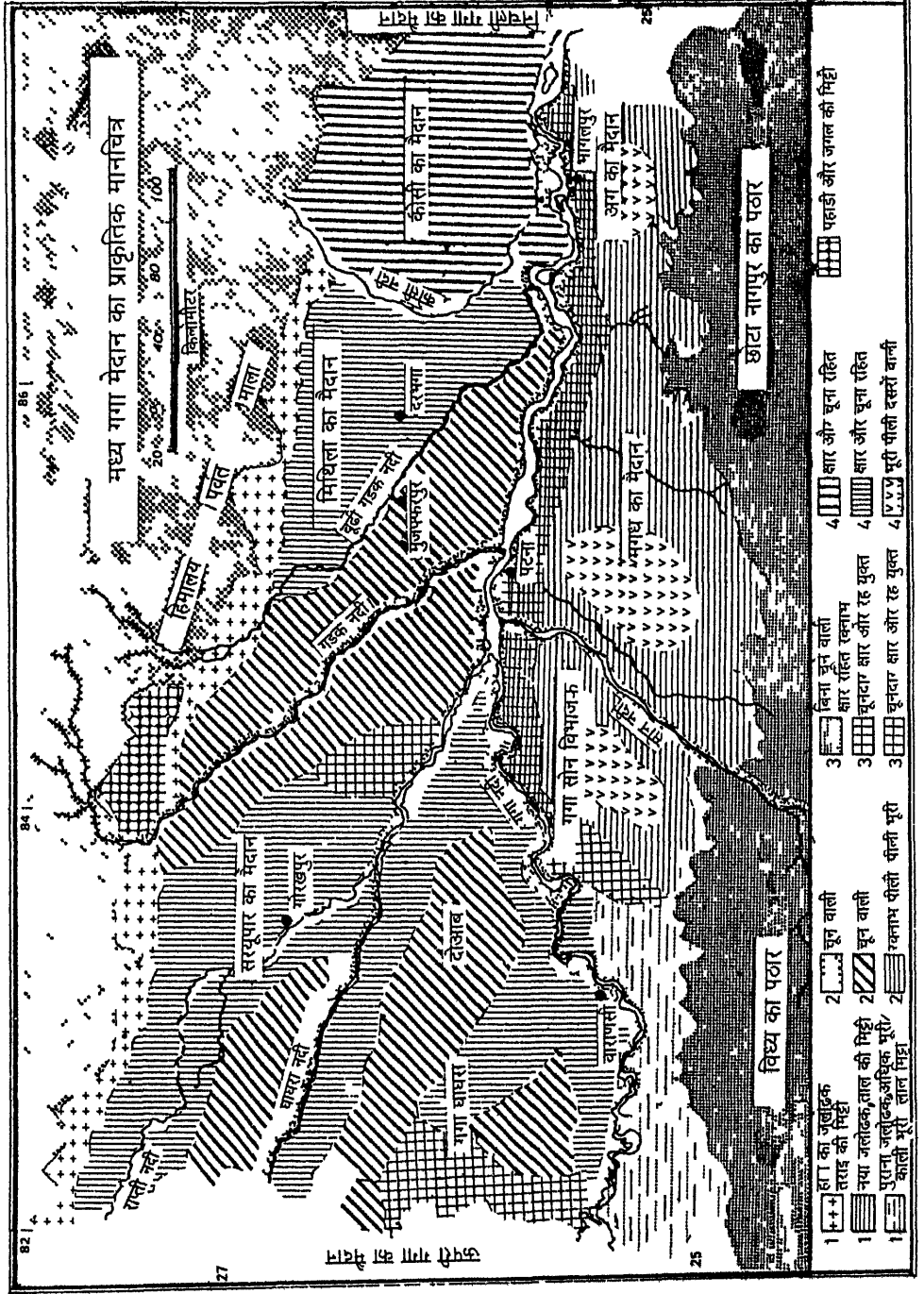
रेखाचित्र 1 मध्य गगा मदान का प्राकृतिक मानचित्र

विशेषतया इस शताब्दी मे कटाई–जुताई–बुवाई के परिणाम स्वरूप प्राकृतिक वन–सम्पदा लगभग समाप्त सी हो गयी है ।

आजकल कुछ विशेष प्रकार के पौधो को छोडकर हर तरह की वनस्पतियॉ उगायी जाती है जो कि यत्र–तत्र बिखरी हुई है । लगभग 50 वर्ष पहले भी इस क्षेत्र मे वनस्पतियो के बडे–बडे क्षेत्र थे । जगली जन्तु भी बहुतायत मे थे मुख्य रूप से काला हिरन चीतल नील गाय लकडबग्घा भालू, सियार लोमडी शाही इत्यादि उल्लेखनीय है। काला हिरन के झुन्ड जो कि कई सैकडे मे होते थे गॉव के समीप देखे जा सकते थे । वनस्पति क्षेत्रो का कृषि क्षेत्रो परिवर्तन हुआ फिर भी प्रमुख वनस्पतियो मे ढाक कैथा, बेल पीपल, बरगद गूलर जामुन आम महुआ शीशम नीम धतूर मदार सिहौर रूस आदि का उल्लेख किया जा सकता है (पाल 1987 120)। वृक्षो मे सबसे अधिक आम के बगीचे मिलते है जो फल और लकडी दोनो दृष्टियो से लोगो को बहुत प्रिय है। फलो मे आम एक स्वादिष्ट और स्वास्थ्य वर्धक फल माना जाता है । ऑवला बेल कटहल के वृक्ष भी बगीचो मे पाये जाते है । वर्तमान मे बागो के किनारे तथा खेतो के मेड पर बहुत से युकिलिप्टस के वृक्ष भी लगा दिये गये है । बेर अमरूद के बगीचे भी कही–कही पाये जाते है । नीम बबूल चिलबिल लसोढा पूरे क्षेत्र मे पाये जाते है। बॉस भी प्राय गॉवो के पास देखने को मिलता है । खाद्य सामग्री के अन्तर्गत फसलो मे गेहूँ, जौ चना मटर गन्ना तीसी पोस्ता सरसो मसूर अरहर, तम्बाकू, धान बाजरा सन मूँग, उर्द कोदो, सावा मूँगफली, शकरकन्द आदि उल्लेखनीय है ।

मध्यगगा के मैदान की जलवायु ऊपरी गगा के अपेक्षाकृत शुष्क और निम्न गगा के मैदान के नम जलवायु के बीच की है । ग्रीष्म ॠतु मे इस क्षेत्र मे प्रचण्ड गर्मी तथा शीत ॠतु मे अत्यधिक ठडक पडती है । लगभग 90 प्रतिशत वर्षा मानसून से होती है । औसत वार्षिक वर्षा 100 सेमी से भी अधिक होती है । मध्य गगा के मैदान मे पूर्व की अपेक्षा पश्चिम मे औसत वर्षा कम होती है इसी तरह से उत्तर की तुलना मे दक्षिण मे वर्षा का औसत कम होता है । दिसम्बर–जनवरी के महीनो मे निम्नतम और अधिकतम तापमान का औसत लगभग 50^0 और 85^0 तथा

मई मे औसत तापमान बढकर 100^0 तक हो जाता है । यद्यपि गगा उत्तराचल के उत्तर–काशी जिले के 5611 मीटर उँचे गगोत्री ग्लेशियर से भागीरथी के नाम से निकलती है । बिहार तक आते आते इसमे यमुना गोमती घाघरा धौली पिण्डार अलकनन्दा मन्दाकिनी रामगगा आदि नदियॉ मिल जाती है । अन्तत यह बगाल की खाडी मे गिर जाती है ।

निम्न गगा घाटी मे लगभग 80 968 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र आता है । इस घाटी के अन्तर्गत उत्तर मे हिमालय के दार्जिलिग स्थान से दक्षिण मे बगाल की खाडी तक तथा पश्चिम मे छोटा नागपुर के उच्च भूमिस्थल से लेकर पूर्व मे बगलादेश तथा असम की सीमा का क्षेत्र आता है ।

निचली गगा घाटी मे बिहार प्रान्त के पूर्णिया जिले की किशनगज तहसील पूर्ण बगाल प्रान्त (पुरूलिया जिला तथा दार्जिलिग के पहाडी भाग को छोडकर) तथा बग्लादेश का अधिकतम भाग आता है (सिह 1971 252) ।

गगा का निचला मैदान वास्तव मे गगा नदी का डेल्टाई क्षेत्र है । इस मैदान की पूर्वी सीमा भारत व बाग्लादेश के बीच अन्तर्राष्ट्रीय सीमा है । दक्षिण पश्चिम मे 150 मीटर समोच्य रेखा इसकी सीमा बनाती है । इस सम्पूर्ण मैदानी भाग मे गगा नदी प्रमुख है जो कि इस भाग मे पश्चिम से प्रवेश करके दक्षिण पूर्व दिशा मे प्रवाहित होती है । गगा से निकलकर समुद्र मे गिरने वाली कई शाखाऐ इस निचले मैदानी भाग के अपवाह तन्त्र मे अपना स्थान रखती है । निचली गगा घाटी मे गगा की पश्चिमी शाखा भागीरथी जिसे आगे चलकर हुगली कहते है अत्यधिक महत्वपूर्ण है । यह समतल तथा अत्यन्त उपजाऊ मैदान है । अत इस प्रदेश मे धान जूट चाय गन्ना तथा तम्बाकू आदि फसले पैदा की जाती है (मेमोरिया 1995 1050–1055)।

मध्य गगाघाटी का परिवेश

गगा के मध्यवर्ती मैदान के उत्तर मे स्थित सलग्न हिमालय के दक्षिणी ढालो पर वर्षा अधिक होती है । गगा के दक्षिण मे स्थित सकरा मैदानी भाग उत्तरी मैदानी भाग की अपेक्षा सागर तल से कुछ अधिक ऊँचा है तथा यहॉ

प्रायद्वीपीय पठार से नदियो द्वारा बिछाये गये कॉप मिट्टी के अवसादो का जमाव काफी गहराई तक हुआ है ।

गगा की सहायक नदियो मे घाघरा तथा उसकी सहायक कुआनो राप्ती छोटी गण्डक, बूढी गण्डक कोशी वरूणा गोमती तथा उसकी सहायक सई एव सोन नदियॉ उल्लेखनीय है (रेखाचित्र 2)। इस क्षेत्र मे बहुत सी धनुषाकार झीले भी है जिनसे छोटी–छोटी नदियॉ निकलती है ।

गगा की सहायक नदियो मे सबसे प्रमुख नदी घाघरा है जो हिमालय पर्वत से निकलती है । यह फैजाबाद जिले के उत्तरी सीमा पर प्रवाहित होती है । पौराणिक परम्परा के अनुसार इस पवित्र नदी को मानसरोवर झील से जहॉ ब्रह्मा ने विष्णु द्वारा बहाये गये आनन्द के ऑसुओ को एकत्रित किया था मुनि वशिष्ठ द्वारा जनता की प्रार्थना पर अयोध्या लाया गया । इसलिए सरयू को कभी–कभी वशिष्ठ की कन्या और वशिष्ठ गगा भी कहा जाता है । किवदन्ती है कि अयोध्या मे गुप्तार घाट पर भगवान श्री रामचन्द्र हमेशा के लिए गुप्त हुए थे । यह नदी नेपाल की तराई से निकलकर बहराइच जनपद मे प्रवाहित होती है । अल्मोडा मे इसे सरयू भी कहते है । बहराइच मे 90 किलोमीटर तक प्रवाहित होने के बाद कौडियाल से मिल जाती है । इसके प्राचीन प्रवाह मार्ग को देखने से लगता है कि प्राचीन काल मे कौडियाल से भिन्न धारा मे प्रवाहित होती हुई यह घाघरा नदी मे मिलती थी । इसके प्राचीन प्रवाह मार्ग को छोटी सरयू के नाम से जाना जाता है जो बहराइच से निकलकर गोण्डा जनपद मे घाघरा मे मिलती है । सरयू–घाघरा सगम के बाद यह नदी घाघरा के ही नाम से जानी जाती है । अयोध्या मे भी इसे सरयू नदी कहते है । घाघरा की अन्य सहायक नदियो मे भिथुआ पिकिया टोडी मडहा बिसुई टोस मझुई गोमती इत्यादि का उल्लेख किया जा सकता है (वर्मा, 2000 4–5)

गोमती नदी जिला पीलीभीत के गोमती ताल से निकली है और अवध के खीरी सीतापुर लखनऊ बाराबकी और सुल्तानपुर जिले से होती हुई
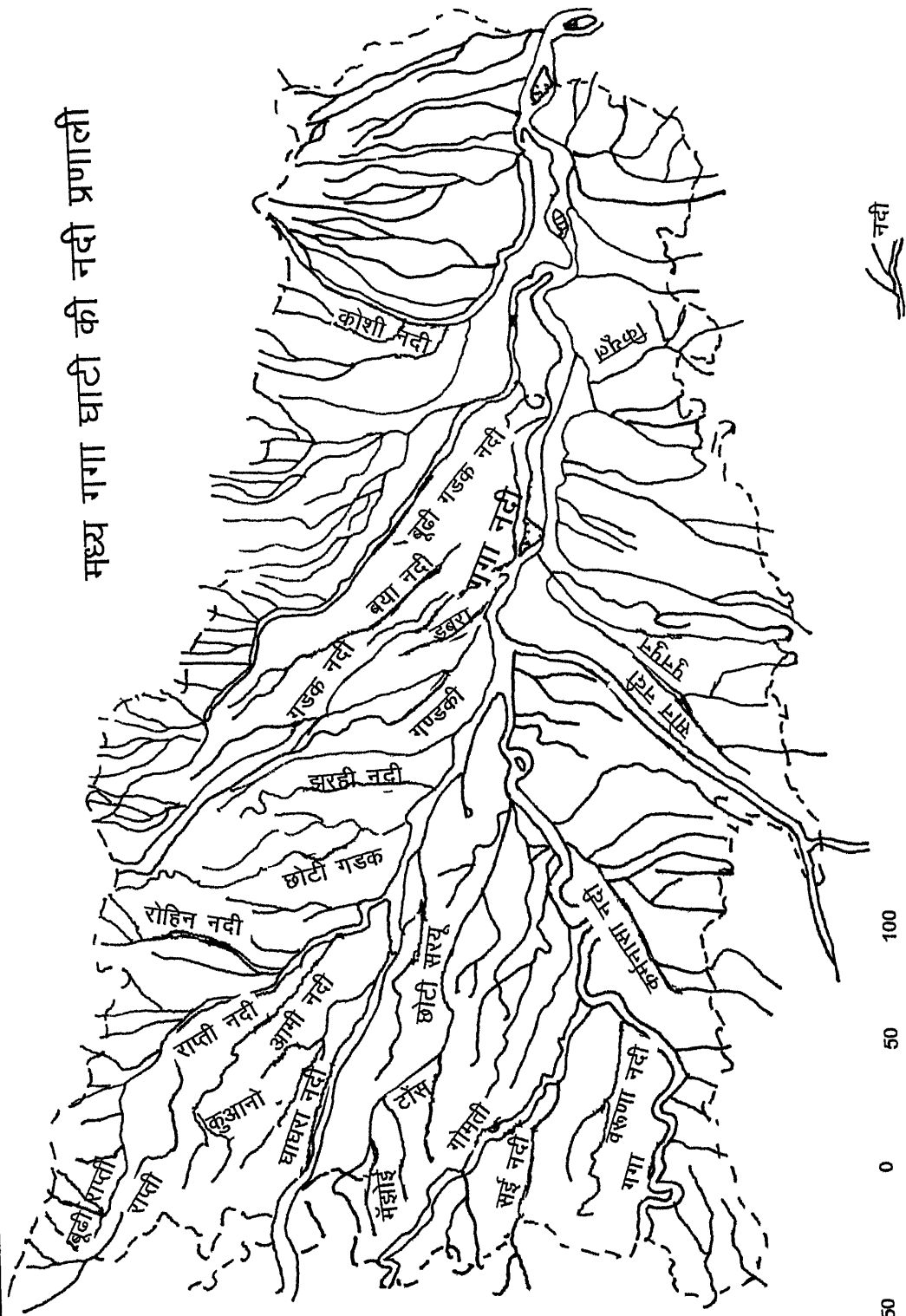
रेखाचित्र 2 मध्य गगा मैदान की नदी प्रणाली

तहसील शाहगज के परगना चॉदा मे प्रवेश करती है । यह गाजीपुर मे सैदपुर के निकट गगा मे गिर जाती है । वर्षा के दिनो मे इसमे बाढ आ जाती है। इसकी सहायक नदियॉ पीली और सई है । इसके तटवर्ती अनेक स्थानो से महत्वपूर्ण पुरातात्विक अवशेष मिले है । इनसे इस भूभाग मे विभिन्न युगो मे बसने वाले लोगो की सभ्यता एव सस्कृति पर प्रचुर प्रकाश पडता है (दूबे एव कुमार 1988 7)।

गण्डक नदी भी गगा की प्रमुख नदियो मे एक है । यह नदी अपनी सात सहायक नदियो के साथ मध्य हिमालय मे नेपाल की उत्तरी सीमा और तिब्बत मे विस्तृत हिमालय की अन्नपूर्णा पहाडियो के समीप मानग मोह एव कुताग के समीप से निकलती है । नेपाल मे इसे सप्तगण्डकी के नाम से पुकारते है । यह लगभग 120 किमी दूर तक उत्तर प्रदेश व बिहार की सीमा बनाती है । इसकी प्रवाह दिशा घाघरा की भॉति ही दक्षिण पूर्व दिशा मे है । यह नदी पटना से पूर्व मे हाजीपुर एव सोनपुर के मध्य बहती हुई मुजफ्फरपुर एव सारन जिलो की सीमा बनाते हुए गगा मे प्रवेश कर जाती है ।

बूढी गण्डक सोमेश्वर श्रेणियो के पश्चिमी भाग से निकलकर बिहार के उत्तरी–पश्चिमी जिले पश्चिमी चम्पारण मे प्रवेश करती है । यह नदी चम्पारण, मुजफ्फरपुर, दरभगा और उत्तरी मुगेर जिलो मे प्रवाहित होती हुई गगा मे समा जाती है । इसकी मुख्य सहायक नदियॉ है– पडई, मनियारी, कापन, मसान करहहा, डरई, तैलाबे, तियर प्रसाद आदि । बूढी गण्डक चम्परण जिले मे गण्डक नदी के बिल्कुल समानान्तर प्रवाहित होती है । इन दोनो नदियो का भू–वैज्ञानिक स्वरूप एक सा रहा है ।

कोशी नदी का निर्माण वस्तुत पूर्वी नेपाल मे स्थित सप्तकौशिकी क्षेत्र मे प्रवाहित होने वाली सात जलधाराओ से बनने वाली तीन (ताबर अरूण और सुतकौशी) के सगम से हुई है । त्रिवेणी के बाद से ही इस सयुक्त धारा को कोशी कहा जाता है । कोशी अपना प्रवाह मार्ग परिवर्तित करते रहने के कारण बिहार की शोक नदी के नाम से मशहूर रही है । इसका पौराणिक नाम कौशिकी है । यह बिहार मे गगा की सबसे लम्बी सहायक नदी है । इस नदी ने दो सौ वर्षो मे

अपना मार्ग लगभग एक सौ किमी पश्चिम की तरफ बदल लिया है । यह भयकर बाढो के लिए बदनाम रही है । इसकी प्रमुख सहायक नदी कमला नदी है । पूर्णिया जिले मे गोगरी कस्बे के समीप गगा मे मिलने के पूर्व यह अपनी डेल्टा बनाती है ।

सोन नदी का उद्‌गम गोण्डवाना क्षेत्र मे स्थित मैकाल पर्वत के अमरकटक नामक पठारी भाग से हुआ है । यह नदी छोटा नागपुर के पठार की ओर से गगा मे मिलने वाली सबसे बडी नदी है । बिहार मे इसका एक तिहाई भाग ही प्रवाहित होता है । यह नदी पलामू–रोहतास औरगाबाद भोजपुर पटना जिलो की सीमा बनाते हुए पटना से पहले दानापुर से 16 किमी दूर गगा मे मिल जाती है । इसकी मुख्य सहायक कोयल नदी है । सोन को प्राचीन काल मे हिरण्यवाह सौआ मागधी आदि नामो से पुकारा गया है ।

बरुणा नदी इलाहाबाद के मदाहन झील से निकलकर 96 किमी0 तक मिर्जापुर और जौनपुर की सीमा स्थापित करती हुई बनारस नगर के पास गगा से मिल जाती है।

सई नदी गोमती की प्रमुख सहायक नदी है । यह नदी हरदोई जिले की झील से निकलकर लखनऊ को उन्नाव से विभाजित करती हुई रायबरेली प्रतापगढ से होती हुई जौनपुर परगना गडवारा मे प्रवेश करती है । यह राजेपुर के पास गोमती मे गिरती है ।

वस्तुत गगा तथा उसकी सहायक नदियो द्वारा गगा के मैदान का निर्माण हुआ है । जैसे–जैसे पूर्व की ओर बढते है नदियो मे वर्षा ऋृतु मे बाढ अधिक दिखायी पडती है । पूर्व मे कोसी नदी विशेष रूप से भयावह हो जाती है जो 24 घटे के अन्दर 10 मीटर तक बढ जाती है । अन्य नदियो – घाघरा बडी गण्डक बूढी गण्डक, कामला मे बाढ का प्रकोप अपेक्षाकृत कम है । इन नदियो का पाट चौडा है । इस क्षेत्र मे धनुषाकार झीलो की एक लम्बी श्रृखला है । बूढी गण्डक के प्राचीन प्रवाह मार्ग मे इस तरह की एक श्रृखला 363 वर्ग किमी के क्षेत्र मे विस्तृत है । इस प्रकार पश्चिमी उत्तर प्रदेश की तुलना मे बिहार का क्षेत्र अधिक

नम है । यही कारण है कि उत्तरी बिहार पूरे भारत मे ताजे पानी की मछलियो का सबसे बडा भण्डार है । गगा के दक्षिण मे इस मैदान मे जलोढ मिट्टी की मोटाई कम है । सम्पूर्ण क्षेत्र को भागर और खादर दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है । भागर प्राचीन मैदान है खादर नदियो के नयी जलोढ मिट्टी से निर्मित होता है जो बरसात के बाद रबी की खेती के लिए उपयुक्त माना जाता है । खादर मिट्टी मे हल्की बलुई दोमट मिट्टी होती है जिसका अधिकाश क्षेत्र बडी गण्डक और गगा के उत्तर और पूर्व मे 32 किमी तक के क्षेत्र मे पट्टी के रूप मे मिलता है जो मुख्यत मटियार मिट्टी है जिसमे कही कही चूने से युक्त मिट्टी और दोमट मिट्टी मिलती है ।

इस क्षेत्र की प्रमुख झीलो मे देवहट झील मउझील गडहा झील हसवर झील डोमन झील (सभी फैजाबाद जनपद) जमुताई अरे–बरे चिताब करनौली सरायभोगी दोहावर जमुआ खौसीपुर पैसारा लवामन गुजरा (जौनपुर जनपद) गोखुर आदि का उल्लेख किया जा सकता है ।

भारत के औद्योगिक नक्शे पर चीनी को छोडकर गगा का मध्यवर्ती मैदान कुछ भाग उद्योगो के होने पर भी शून्य है । इस विशाल मैदानी भाग मे खनिजो के अभाव के कारण कृषि से उपलब्ध ससाधनो पर ही आधारित उद्योग प्रधान है । चीनी के प्रमुख उद्योग होने से अधिकाश कारखाने उत्तरी मैदानी भाग मे पूर्व से लेकर चम्पारन सारन देवरिया गोरखपुर होते हुए गगा एव घाघरा के उत्तर स्थित मैदानी भाग मे उपलब्ध है । कुछ ही कारखाने घाघरा व गगा के दक्षिण मे है । उत्तर प्रदेश मे यह कारखाने सरयू के दक्षिण पटना गया इलाहाबाद, बलिया आजमगढ जौनपुर फैजाबाद सुल्तानपुर वाराणसी जनपदो मे एक या दो की सख्या मे स्थित है (मिश्र 1985 413–414)। उत्तरी मैदानी भाग मे उद्योग सीमित है । बरौनी मे तेल तथा पैट्रोकेमिकल्स रेलवे उद्योग जमालपुर गोरखपुर जूट उद्योग कटिहार समस्तीपुर तथा सहजनवा (गोरखपुर) मे स्थित है । यद्यपि सूती वस्त्र उद्योग के बडे कारखाने नही है परन्तु पावरलूम तथा हैण्डलूम उद्योग के मध्यम एव लघु वर्ग के उद्योगो के रूप मे सूती वस्त्र उद्योग पटना (पुलवरिया शरीफ) मधुवनी बिहार शरीफ बक्सर गया, मुबारकपुर, मऊ, वाराणसी जलालपुर

टाण्डा तथा खलीलाबाद मे स्थापित है । भागलपुर अपने टसर के वस्त्रो के लिए तथा वाराणसी बनारसी रेशम की साडी के लिए देश मे विख्यात है। कालीन उद्योग के मुख्य केन्द्र मिर्जापुर एव भदोही है जो देश एव विदेशी बाजारो को कालीन का निर्यात करते है। इस मैदानी भाग के मध्यवर्ती दक्षिणी पश्चिमी भाग मे डालमियानगर एक प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है जहॉ कागज सीमेन्ट चीनी रसायन कार्ड–बोर्ड प्लाईवुड वनस्पति तेल तथा अन्य कई उद्योग है । इसके अतिरिक्त वाराणसी मे सिल्क रेल के डीजल इजन, साहूपुरी का वृहद रसायन उद्योग रामनगर का शीशा उद्योग साइकिल एव घटी उद्योग तथा दाल उद्योग प्रमुख है । पटना भागलपुर गया आदि मे इण्डस्ट्रीयल स्टेट की स्थापना कर अनेक मध्यम तथा लघु उद्योगो को स्थापित करके विकसित करने का प्रयास किया गया है । भारत मे सिगरेट का सबसे बडा कारखाना मुगेर मे है।

मध्य गगा घाटी की परिवर्तित स्थिति तथा सामाजिक आर्थिक व्यवस्था ने जो कि सहस्त्रो वर्ष की सभ्यता के पश्चात् व्यवस्थित हुई है इस क्षेत्र को सम्पूर्ण भौगोलिक सयुक्ति प्रदान की है । विकास के क्षेत्र मे भी अन्तर्क्षेत्रीय विभिन्नता देखने को मिलती है । इस क्षेत्र के उत्तरी व दक्षिणी किनारे क्षेत्रीय मुख्य धाराओ के साथ विकास विस्तार तथा सम्मिलन की ओर अग्रसर है । मध्यगगा घाटी भारतीय सभ्यता एव सस्कृति के विकास की दृष्टि से सम्पूर्ण गगा घाटी मे अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है । इस क्षेत्र मे अन्य क्षेत्रो की अपेक्षा पुरातात्विक सर्वेक्षण भी अधिक हुआ है । इस क्षेत्र मे बहुत से स्थलो से पुरातात्विक अवशेष स्तरित तथा अस्तरित स्थलो से प्रकाश मे आये है ।

सास्कृतिक अनुक्रम

पुरातात्विक अन्वेषणो के आलोक मे हम मध्य गगाघाटी के सास्कृतिक अनुक्रम को स्पष्ट रूप से रेखाकित कर सकते है । कुछ दशक पूर्व मध्य गगा घाटी मे मानव इतिहास के ज्ञान का सूत्र ऐतिहासिक काल से पहले नही पहुँच पाता था । मध्य गगा घाटी मे प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा की गयी खोजो ने इसे भारत के प्रागैतिहासिक मानचित्र पर रख दिया है (शर्मा एव अन्य 1980a)।

प्रारम्भिक नूतन काल मे इस क्षेत्र मे दक्षिण से मध्य पाषाणिक मानव के आगमन के प्रमाण मिलते है । इस क्षेत्र की प्रथम पाषाण सस्कृति मध्य पाषाण काल से सम्बन्धित है जिसे स्तरीकरण उपकरण प्रकार और तकनीक के आधार पर तीन वर्गों मे विभाजित किया गया है–

(1) अनुपुरा पाषाणकाल

(2) अज्यामितीय मध्य पाषाणकाल

(3) ज्यामीतीय मध्य पाषाणकाल

इन सस्कृतियो के 200 से भी अधिक स्थल प्रकाश मे आये है जिनमे से तीन स्थलो सरायनाहर राय महदहा और दमदमा का उत्खनन पुरातात्विक अन्वेषणो की दृष्टि से महत्वपूर्ण है । नव–पाषाण सस्कृत के भी कई स्थल प्रकाश मे आये है । कुछ स्थलो का उत्खनन भी हुआ है जो नव–पाषाण सस्कृति के पुननिर्माण मे सहायक है । नवपाषाण काल के उत्खनित स्थलो मे सोहगौरा इमलीडीह लहुरादेवा और झूँसी तथा बिहार के चिराद चेचर कुतुबपुर और सेनुआर स्थलो का उल्लेख किया जा सकता है । गौतम बुद्ध का कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से मध्य गगा घाटी ही था उनके पहले का इस क्षेत्र का इतिहास अन्धकार के आवरण से आवृत्त था । पुरातत्वविदो द्वारा रामायण मे वर्णित स्थलो के पुरातात्विक अन्वेषण से भी इस क्षेत्र मे पुरातत्व इतिहास और सस्कृति पर उल्लेखनीय प्रकाश पडा है । इन स्थलो का उत्खनन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण और इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवान्स स्टडी शिमला द्वारा प्रो0 बी0 बी0 लाल के निर्देशन मे रामायण सस्कृति की खोज के सन्दर्भ मे किया गया। अयोध्या मे पहले काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा भी उत्खनन किया गया था। इन स्थलो पर मिलने वाली सबसे पहली सस्कृति उत्तरी कृष्ण ओपदार पात्र परम्परा (एन0 बी0 पी0) के ठीक पहले की सस्कृति है जिसे 800 ई0 पू0 से 600 ई0 पू0 का समय प्रदान किया जा सकता है। श्रृगवेरपुर की प्रथम सस्कृति–गैरिक मृदभाण्ड सस्कृति (1050 से 1000 ई0 पू0) द्वितीय सस्कृति– ताम्रपाषाणिक सस्कृति (950 से 700 ई0 पू0) और तृतीय

सस्कृति– उत्तरी कृष्ण ओपदार पात्र परम्परा की सस्कृति 750 से 250 ई0 पू0 है । इसी प्रकार का अनुक्रम झूँसी के उत्खनन से भी प्राप्त हुआ है ।

इस प्रकार अब तक इस क्षेत्र मे किये गये पुरातात्विक अध्ययनो से जो सास्कृतिक क्रम प्रकाश मे आया है उसे निम्न सस्कृतियो के अन्तर्गत रखा जा सकता है –

(1) अनुपुरापाषाण काल

(2) मध्य पाषाण काल

(3) नव पाषाण काल

(4) ताम्र पाषाण काल

(5) प्रारम्भिक लौह और प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल

अधिकाश स्थलो पर नवपाषाण काल के बाद ताम्र पाषाण और प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल के जमाव भी मिले है । ताम्र पाषाण काल के उत्खनित स्थलो मे उत्तर प्रदेश के श्रृगवेरपुर झूँसी राजघाट प्रहलादपुर मसोनडीह सोहगौरा धुरियापार, सिसवाना भूनाडीह वैना नरहन इमलीडीह और खैराडीह बिहार के सोनपुर चिराद ओरियप चेचर चम्पा, मानेर माझी और सेनुवार उल्लेखनीय है ।

द्वितीय अध्याय

मानव अस्तित्व के प्राचीनतम प्रमाण अनुपुरापाषाण काल और मध्यपाषाण काल की सस्कृतियो का उद्भव एव विकास

गगा के मैदान ने भारत के प्रारम्भिक इतिहास और सस्कृति के विकास मे महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यहॉ पहाड न होने के कारण पाषाण युगीन सस्कृतियो के अस्तित्व की सभावना को पुरातत्वविदो ने लगभग नकार दिया था । इस क्षेत्र मे हुए पुरातात्विक अनुसधानो ने इस असम्भवना के विपरीत यह प्रमाणित कर दिया कि यहॉ का इतिहास परवर्ती प्रातिनूतन कालीन पाषाणयुगीन सस्कृतियो से प्रारम्भ होता है ।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा इस क्षेत्र मे किये गये पुरातात्विक अन्वेषणो ने मध्य गगा घाटी के प्रागैतिहासिक और प्रराम्भिक ऐतिड्डासिक परिप्रेक्ष्य को नया क्षितिज प्रदान किया और गगा के मैदान का इतिहास प्रागैतिहासिक काल से ही विश्व इतिहास के मानचित्र पर रेखाकित हो सका ।
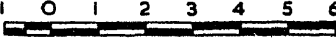
मध्य गगा घाटी के दक्षिणी भूभाग मे विन्ध्य क्षेत्र से मानव के अस्तित्व के प्राचीनतम् प्रमाण 4–5 लाख वर्ष पूर्व के है । इस क्षेत्र की नदी उपत्यकाओ के अनुभागो से पाषाणयुगीन सस्कृतियो के क्रमिक विकास के उल्लेखनीय प्रमाण मिले है (शर्मा 1973a 106–108)। तत्कालीन पशुओ के अश्मीभूत अवशेष और मानव निर्मित पाषाण उपकरण नदी अनुभागो और वेदिकाओ से प्राप्त होते है । विन्ध्य क्षेत्र मे स्थित उद्योग स्थलो से मिलने वाले उपकरणो तथा उपकरण निर्माण प्रक्रिया मे निकले फलको आदि से भी तत्कालीन मानव की कहानी के पुनर्निर्माण मे सहायता मिलती है। उच्चपूर्व पाषाण काल मे विन्ध्य क्षेत्र की जलवायु मे परिवर्तन होने लगा था, इसके प्रमाण यहॉ के नदी अनुभागो के जमावो से प्राप्त हुए है । बदले हुए परिवेश के कारण हो सभवत उपकरण निर्माण प्रविधि मे परिवर्तन करके नवीन प्रकार के उपकरणो का निर्माण किया गया ।

जलवायु मे हुए इस क्रान्तिकारी परिवर्तन का प्रभाव गगा घाटी पर भी पडा। फलस्वरूप गगा को अपने प्राचीन प्रवाह मार्ग को छोडकर दक्षिण की तरफ खिसकना पडा और विन्ध्य क्षेत्र के पाषाण युगीन मानव को शुष्क जलवायु की विभीषिका से बचने के लिए जीविका की तलाश मे गगा के मैदान मे उतरना पडा (शर्मा 1975 5–6)। सभवत जिस समय इस क्षेत्र मे भागर के ऊपरी स्तर का निर्माण हो रहा था उसी समय गगा घाटी मे मानव का पदार्पण हुआ (पाण्डेय 1983 296)। जनसख्या वृद्धि तथा बदली हुई जलवायु से निजात पाने के लिए मध्य पाषाणिक मानव ने गगा के प्राचीन प्रवाह मार्ग मे निर्मित धनुषाकार झीलो के किनारे आवासो का निर्माण किया जहॉ उसे पानी और भोजन दोनो आसानी से उपलब्ध हो सके।

गगा के प्राचीन प्रवाह मार्ग मे निर्मित अधिकाश झीले अभी भी अपना अस्तित्व बनाये हुए है (रेखाचित्र 3)। कुछ झीले प्राकृतिक कारणो से भर गयी है और कुछ को यहॉ के निवासियो ने खेतो मे परिवर्तित कर लिया है। मध्य गगा घाटी के वर्तमान धरातल के निर्माण मे इन झीलो का अत्यधिक योगदान है क्योकि इस क्षेत्र की अधिकाश नदियॉ इन्ही झीलो से निकलती है (शर्मा 1973 129–30)। इन झीलो के किनारे का पुराना धरातल ऊसरीला होने के कारण खेती के लिए अधिक उपयुक्त नही है यही कारण है कि इन झीलो के तट पर स्थित पुरातात्विक स्थल अभी तक सुरक्षित रह सके ।

गगा घाटी मे कई स्थलो पर गगा के पुराने कछार के अनुभागो मे चार जमाव मिलते है (शर्मा 1975 5–6)। सबसे नीचे का जमाव ककरीली पीली मिट्टी का है। इसके ऊपर काली मिट्टी का जमाव है । तीसरा जमाव पोतनी मिट्टी का जमाव है और सबसे ऊपर बलुई मिट्टी का लगभग 2 मीटर मोटा जमाव है (रेखाचित्र 4)। गगाघाटी के इस ऊपरी जमाव मे ऊपर से नीचे तक लघुपाषाण उपकरण प्राप्त होते है । इस आधार पर हम कह सकते है कि इन उपकरणो का निर्माता मध्य पाषाण कालीन मानव इस क्षेत्र मे उस समय आया जब इस ऊपरी बलुई मिट्टी का जमाव प्रारम्भ हुआ था और उसका कार्य काल इस जमाव के अन्त तक चलता रहा।

HORSE-SHOE LAKES IN THE GANGA VALLEY

SCALE OF 1 0 1 2 3 4 5 6 KILOMETRES

GAURAI TAL
KATAN TAL
ROAD TO LUCKNOW
KUNDA
RIVER BAKULAHI
KONDRAJ T TAL
KONDRA T L
ROAD TO UNNAO
E I RAILWAY
RIVER DUAR
LALGOPALGAN
OLD RIVER BED
RIVER GANGA
KURHA
BICHIA
AREA OF MAP
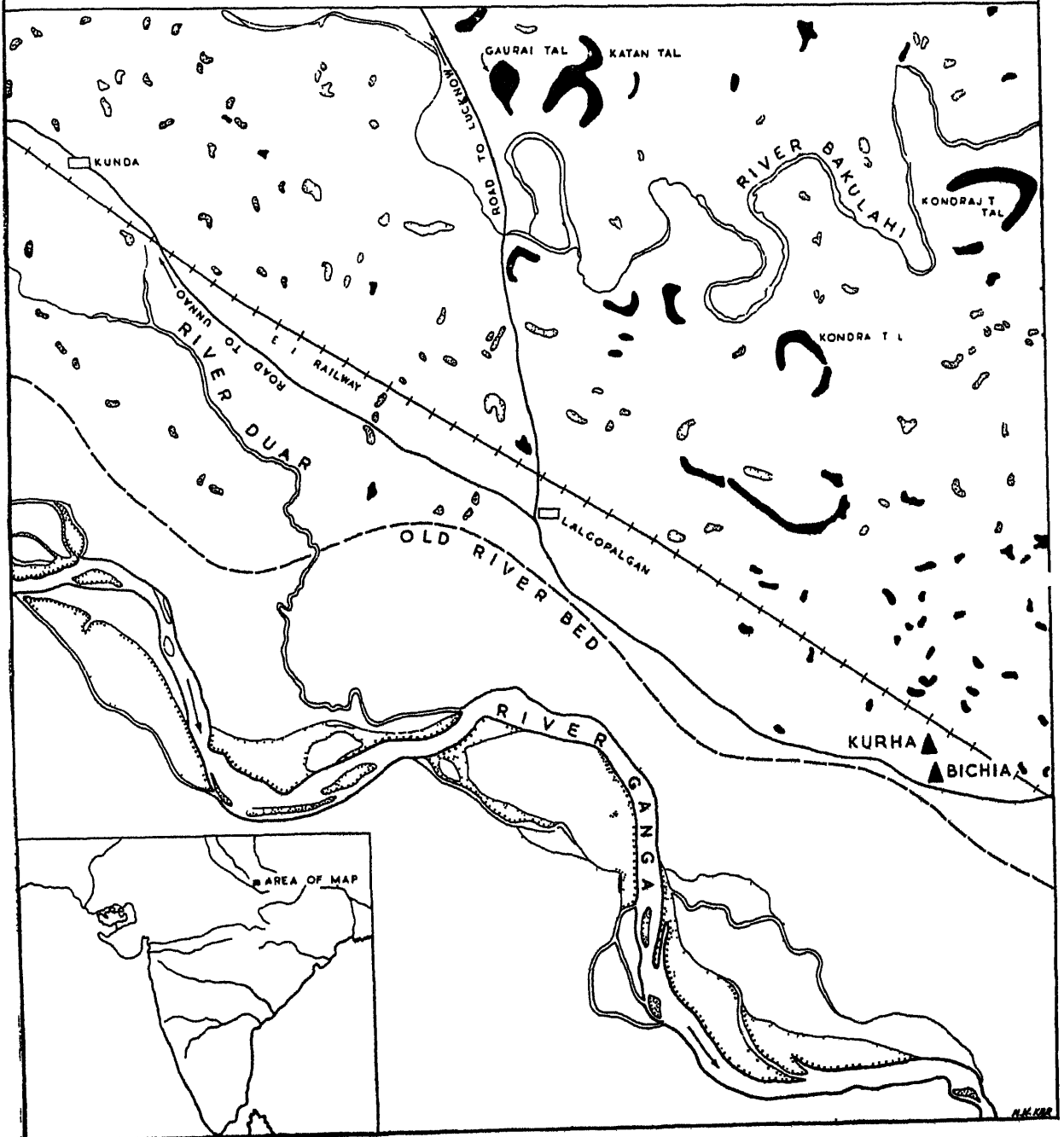
रेखाचित्र 3 मध्य गगा मैदान में धनुषाकार झीलें

SCHEMATIC SECTION OF THE OLDER TERRACE–GANGA

HUMUS

SANDY SOIL

MICROLITHIC TOOLS

PLASTIC CLAY

END OF PLEISTOCENE ?

BLACKISH CLAY=HUMUS LAYER OF THE BELAN(HUMID PHASE)

CONCRETION = GRAVEL III OF THE BELAN
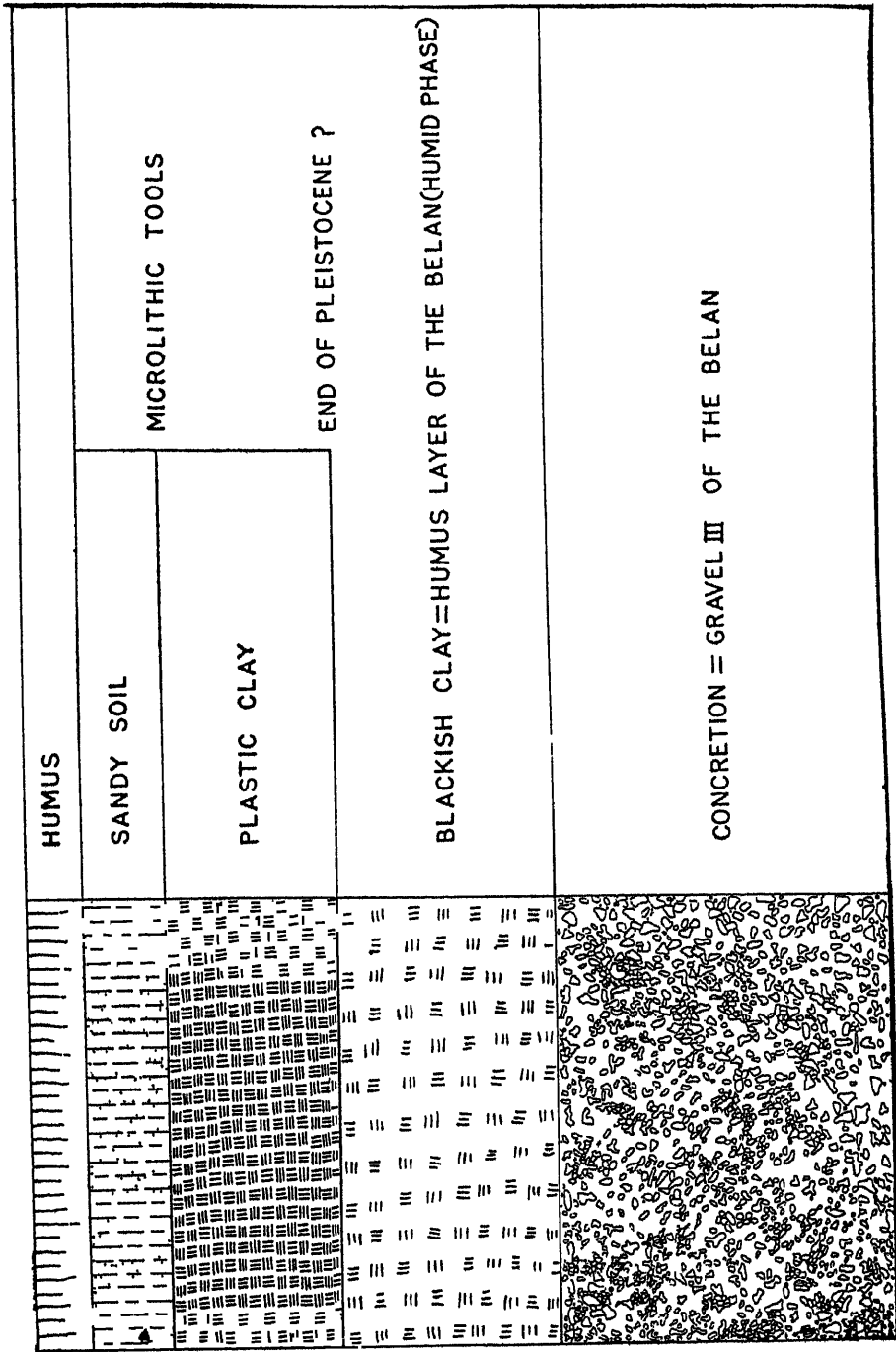
रेखाचित्र 4 गगा के भू–तात्विक जमाव का अनुभाग

नवीन शोधो के आलोक मे मध्य पाषाण काल के भी पहले के सास्कृतिक अवशेष गगा के मैदान से प्राप्त हुए है इन उपकरणो को उच्च पूर्व पाषाण काल तथा मध्य पाषाण काल के सक्रमण काल का माना जाता है । ये उपकरण जिस धरातल से प्राप्त होते है उसके अवलोकन से यह कहा जा सकता है कि इनका भूतात्विक धरातल गगा के कछार का तीसरा जमाव– पोतनी मिट्टी का ऊपरी धरातल है (पाल 1980 2–3)। इसी धरातल पर सर्वप्रथम पाषाण कालीन मानव मध्य गगा घाटी मे आया ।

मध्य गगा घाटी मे अद्यतन हुए पुरातात्विक अन्वेषणो के माध्यम से निम्नलिखित सस्कृतियॉ प्रकाश मे आयी जिनका विवरण इस प्रकार है

परवर्ती उच्चपुरापाषाण (अनुपुरापाषाण) कालीन सस्कृति

गगा घाटी की इस प्राचीनतम सस्कृति (शर्मा 1975 9) के प्रमाण अभी तक पॉच स्थलो से प्राप्त हुए है (अक्षाश 25^0 23 45 उ0, देशान्तर 82^0 53 45 पूर्व) इलाहाबाद मे अहिरी (अक्षाश 25^0 59 23 उ0 देशान्तर 82^0 2′ 35 पूर्व) मन्दाह (अक्षाश 25^0 59 0 उ0 देशान्तर 82^0 2 35 पूर्व) तथा साल्हीपुर (अक्षाश 26^0 0 10 उ0 देशान्तर 82^0 4 30 पूर्व) ये स्थल (शर्मा 1978 24) धनुषाकार झीलो अथवा इन झीलो से निकलने वाली सरिताओ के तट पर स्थित है ।

उच्चपूर्वपाषाण काल तथा मध्यपाषाण काल के सक्रमण कालीन सस्कृतिक स्थलो से अत्यधिक मात्रा मे पाषाण उपकरण प्राप्त हुए है । इन स्थलो पर पूर्ण निर्मित उपकरणो के साथ ही निर्माण की विभिन्न अवस्थाओ मे उपकरणो प्राप्त होते हैं जिनसे प्रतीत होता है कि इन उपकरणो क्रोड, फलक आदि का निर्माण इनके प्राप्ति स्थलो पर किया गया है । गगा घाटी मे पाषाणो का स्रोत नही है । विन्ध्य क्षेत्र से पाषाण कालीन मानव पत्थर के पिण्ड लेकर गगा घाटी मे आता था। यही पर उपकरणो का निर्माण करता था और शिकार करता था । जलवायु और परिवेश मे परिर्वतन तथा तत्कालीन आबादी मे वृद्धि इस आगमन का कारण रहा होगा। अभी तक इस सस्कृति के किसी स्थल का उत्खनन नही हुआ है लेकिन इन स्थलो की सतह से जो उपकरण एकत्र किये गये है वे सभी चर्ट पत्थर पर

निर्मित है और उन पर अत्यधिक रासायनिक काई लगी हुई है । उपकरण प्रकारो मे समानान्तरबाहु वाले ब्लेड भुथडे ब्लेड तक्षणी नोक खुरचनी अर्द्धचन्द्र आदि उल्लेखनीय है (रेखाचित्र 5)।

विन्ध्य क्षेत्र मे बेलन नदी के तट पर स्थित एक स्थल चोपनी माण्डो (शर्मा एव मिश्र 1980) का उत्खनन किया गया है । इस स्थल की प्रथम सस्कृति उच्चपूर्वपाषाण और मध्यपाषाणकाल के सक्रमण काल की सस्कृति है। पाषाण कालीन मानव ने सर्वप्रथम इसी काल मे गोलाकार झोपडियॉ बनाकर आवास प्रारम्भ किया । गगा घाटी की इस प्राचीनतम सस्कृति ने पाषाण कालीन मानव के ऋृतनिष्ठ प्रवजन का भारत मे प्राचीनतम प्रमाण प्रस्तुत किया है जबकि विन्ध्य क्षेत्र की सूखे की विभीषिका से बचने के लिए मनुष्य जीविका की तलाश मे नदी घाटियो को पार करता हुआ उत्तर की तरफ आया । सभवत उसका इस क्षेत्र मे आगमन नितान्त अल्पकालिक होता था । अनुकूल मौसम मे वह पुन अपने मूल क्षेत्र मे लौट जाता था । इस काल के उपकरणो का जो अध्ययन किया गया है उससे इस बात के प्रमाण मिले है कि इस सस्कृति के गगा घाटी के उपकरण विन्ध्य क्षेत्र के उपकरणो की अपेक्षा छोटे है । उपकरणो की यह आकारगत न्यूनता गगा घाटी मे पत्थर पिण्डो की अनुपलब्धता के कारण थी, मानव ने इनकी महत्ता को ध्यान मे रखकर तब तक उपकरण निर्माण किया जब तक ये अत्यन्त छोटे नही हो गये ।

विन्ध्य क्षेत्र मे उच्च पूर्व पाषाण काल के उपकरण सीमेन्टेड ग्रेवेल तृतीय से मिलते है । इस जमाव से दो कार्बन तिथियॉ 23840±830 760 ई0 पू0 और 17765±340 ई0पू0 (जुलाई 1973 फिजिकल रिसर्च लैब्रोरेटरी, अहमदाबाद) प्राप्त हुई है । इस आधार पर विन्ध्य क्षेत्र की उच्च पूर्व पाषाण तथा मध्य पाषाण काल के सक्रमण कालीन सस्कृति को 17000 ई0पू0 के बाद का माना गया है । गगा घाटी की इस सस्कृति को भी यही समय प्रदान किया जा सकता है ।
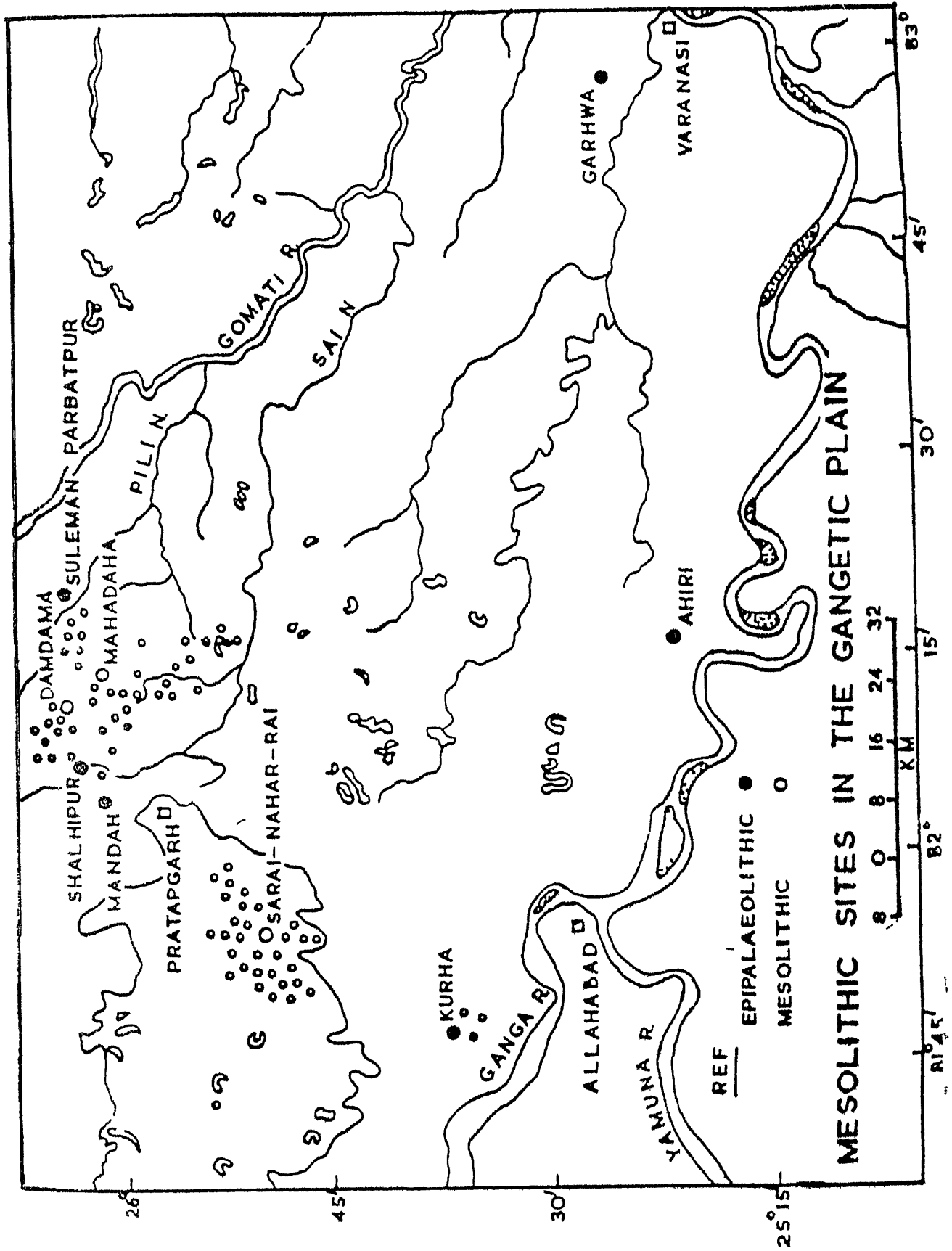
रेखाचित्र 5 गंगा के मैदान में अनपुरापाषाण और मध्यपाषाणकालीन पुरास्थल

मध्यपाषाण कालीन सस्कृति

सास्कृतिक अनुक्रम मे उपर्युक्त सस्कृति के बाद जिस पाषाण कालीन सस्कृति के प्रमाण मिले है उसे मध्य पाषाण कालीन सस्कृति के नाम से जाना जाता है । इस काल के जीव और वनस्पति जगत के अध्ययन से यह तथ्य उद्घटित हुआ है कि अब घास के मैदानो की अधिकता हो गयी थी । मनुष्य को शिकार करने के लिए और खाने योग्य जगली घासो को काटने के लिए नये प्रकार के उपकरण की आवश्यकता हुई । ये उपकरण आकार मे अत्यन्त छोटे है अत इन्हे लघु पाषाण उपकरण कहा जाता है । इसके पूर्व की सस्कृति के उपकरण प्राय चर्ट पत्थर पर बने थे । अब अगेट कार्नेलियन, क्वार्टज आदि पत्थरो का प्रयोग उपकरण निर्माण मे होने लगा था । यद्यपि इन उपकरणो के निर्माण की तकनीक वही है जो उच्च पूर्व पाषाण तथा मध्य पाषाण काल के सक्रमण काल की है लेकिन उपकरण प्रकारो मे अब अधिक विविधता दृष्टिगोचर होती है ।

इस सस्कृति के उपकरण सबसे अधिक क्षेत्र मे सबसे अधिक स्थलो से प्राप्त हुए है (रेखाचित्र 6)। गगा के उत्तर वाराणसी, इलाहाबाद सुल्तानपुर जौनपुर और प्रतापगढ से इस सस्कृति के लगभग 193 स्थल प्रकाश मे आये हैं (ये सब पुरातात्विक स्थल प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रो0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन मे किये गये सर्वेक्षण के परिणाम स्वरूप प्रकाश मे आये है) । इस सस्कृति के विकास की अवस्था मे कुछ नये उपकरणो का अविष्कार हो जाता है । ये उपकरण त्रिभुज एव समलम्ब चतुर्भुज के आकार के है । अपने ज्यामितीय आकार के कारण मध्य पाषाणिक सस्कृति के इस चरण के उपकरणो को ज्यामितीय लघु पाषाण उपकरण कहते है । इस प्रकार मध्य पाषाणिक सस्कृति दो चरणो मे विभक्त हो गयी है

(1) अज्यामितिक लघु पाषाण उपकरण से युक्त मध्य पाषाणिक सस्कृति

(2) ज्यामितिक लघु पाषाण उपकरण से युक्त मध्य पाषाणिक सस्कृति

गगा घाटी मे सबसे अधिक 172 स्थल अज्यामितिक लघु पाषाण उपकरणो वाले है । इसके प्रमुख स्थलो मे इलाहाबाद क कुढा (अक्षाश 25^0 35 4′ उ0, देशान्तर 81^0 43′ 17 ′ पूर्व) भीखमपुर (अक्षाश 25^0 31 58′ उ0 देशान्तर 81^0 44
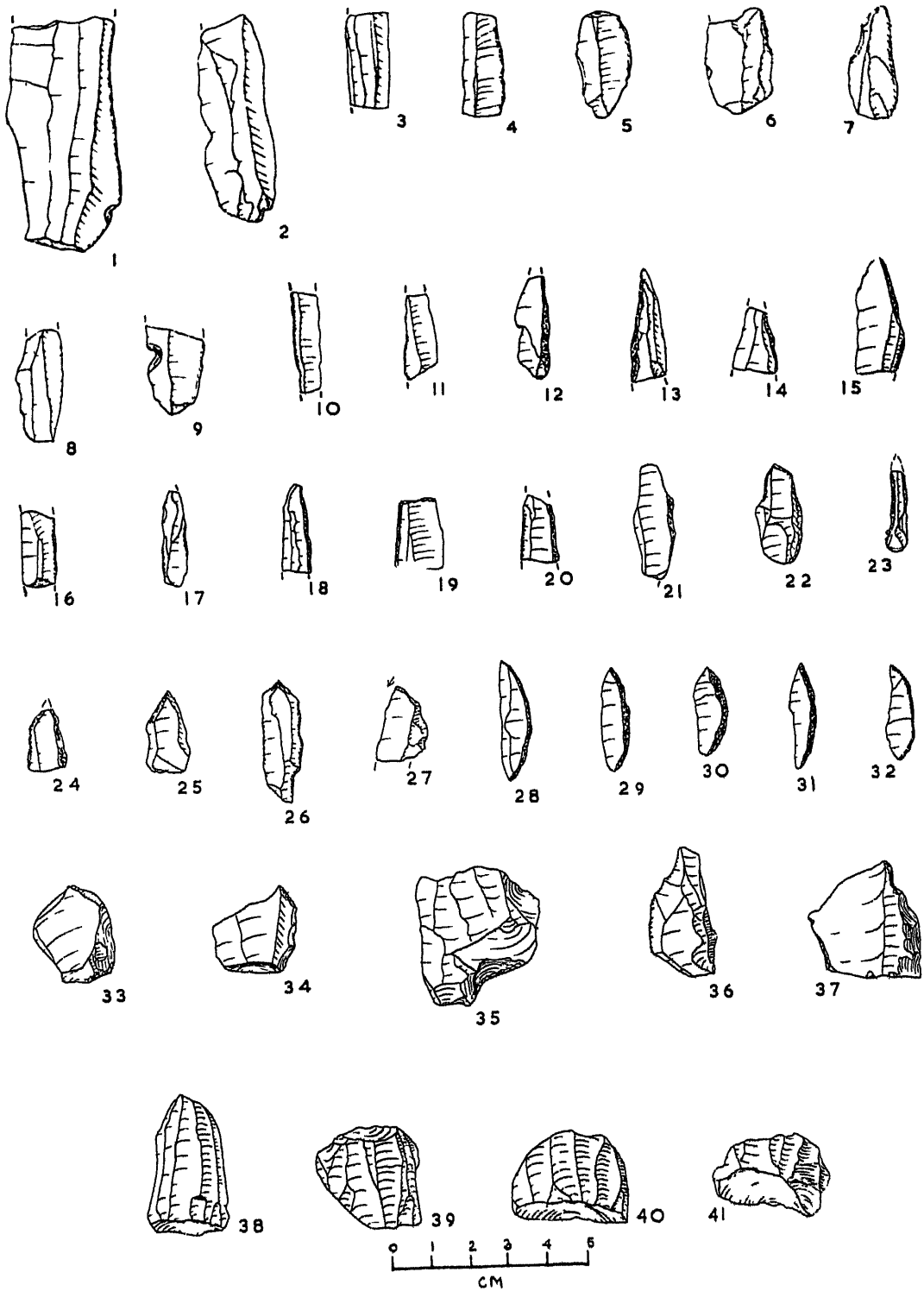
रेखाचित्र 6 मध्य गगा घाटी के अनुपुरापाषाणिक उपकरण

41 पूर्व) और मरूडीह (अक्षाश 25^0 31 58 उ0 देशान्तर 81^0 49 3 पूर्व) प्रतापगढ के हडही भिटुली (अक्षाश 25^0 50 38 उ0, देशान्तर 81^0 48 25 पूर्व) कन्धई मधुपुर (अक्षाश 25^0 59 50 उ0 देशान्तर 82^0 4 0 पूर्व) आदि स्थलो का उल्लेख किया जा सकता है ।

ज्यामितिक उपकरण वाले लगभग 21 स्थल प्रकाश मे आये है । उनमे उल्लेखनीय स्थल है इलाहाबाद का बिछिया (अक्षाश 25^0 34 13 उ0 देशान्तर 81^0 43 25 ' पूर्व) प्रतापगढ का भेवनी (अक्षाश 25^0 59 50 उ0 देशान्तर 82^0 9 25 पूर्व) धर्मनपुर (अक्षाश 26^0 1 0 उ0 देशान्तर 82^0 8 25 पूर्व) उतरास (अक्षाश 25^0 58 30 उ0 देशान्तर 82^0 8 30' पूर्व) आदि। ज्यामितीय लघु पाषाण उपकरणो वाले तीन स्थलो का उत्खनन भी किया गया है । ये उत्खनित स्थल है– प्रतापगढ जनपद के सदर तहसील मे स्थित सराय नाहर राय तथा पट्टी तहसील मे स्थित महदहा और दमदमा (रेखाचित्र 7)।

सरायनाहर राय

प्रतापगढ जनपद मुख्यालय से 15 किलोमीटर दक्षिण–पश्चिम एक धनुषाकार झील के किनारे सराय नाहर राय (अक्षाश 25^0 48' 30 ' उ0, देशान्तर 81^0 50'' पूर्व) स्थित है । यह झील अब सूख चुकी है । इस पुरास्थल की खोज 1969 ई0 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग ने किया था । सन् 1970 मे उत्तर प्रदेश के पुरातत्व विभाग ने भारतीय नृतत्व सर्वेक्षण विभाग के पी0 सी0 दत्ता के सहयोग से एक मानव ककाल का उत्खनन कराया । उसके बाद इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग ने उत्तर प्रदेश शासन के पुरातत्व विभाग के सहयोग से सन् 1971–72 और 1972–73 मे अपेक्षाकृत विस्तृत पैमाने पर स्वर्गीय प्रो0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन मे उत्खनन (शर्मा 1973 134–146) कार्य कराया जिसका सचालन प्रो0 आर0 के0 वर्मा प्रो0 वी0 डी0 मिश्र और प्रो0 डी0 मण्डल ने किया ।
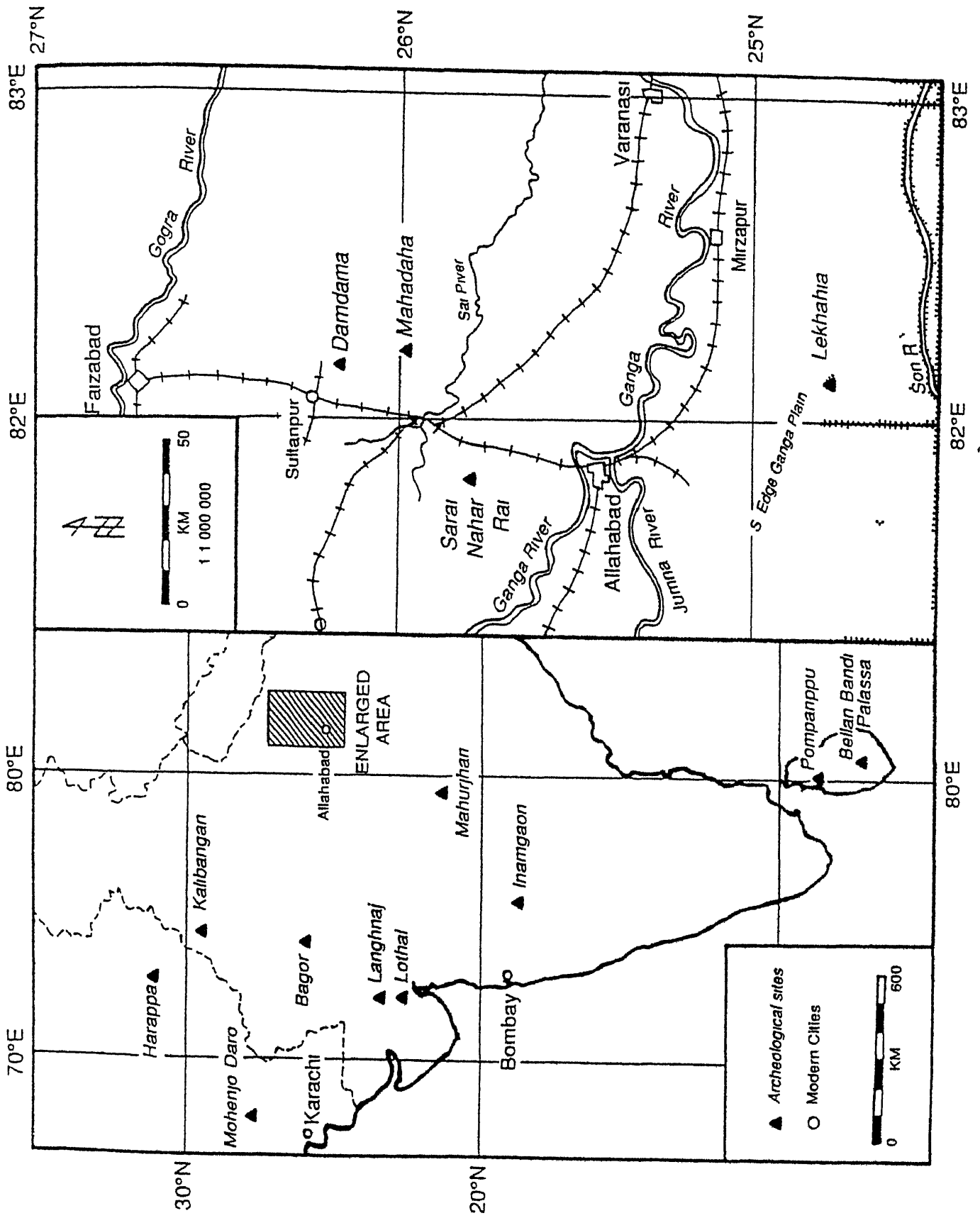
रेखाचित्र 7 मध्यपाषाण काल के उत्खनित पुरास्थल

इस पुरास्थल पर लगभग 1800 वर्ग मीटर के क्षेत्र मे लघु पाषाण उपकरण ओर जानवरो की हड्डियॉ बिखरी हुई मिली (रेखाचित्र 8)। पानी के बहाव के कारण ऊपरी सतह कट जाने से मानव ककाल भी झाकते हुए मिले । यहॉ से कुल 11 मानव समाधियो (तालिका 1) तथा 8 गर्त चूल्हो का उत्खनन इलाहाबाद विश्वविद्यालय की ओर से किया गया । इस तरह कुल उत्खनित 12 समाधियो से 15 मानव ककाल प्रकाश मे आये (केनेडी और अन्य 1986 1–55)। एक समाधि मे चार ककाल एक साथ दफनाये गये थे । इन ककालो का प्रथम अध्ययन पी0 सी0 दत्ता ने किया है (दत्ता 1973 1984 दत्ता और पाल 1972, दत्ता और अन्य 1971, 1972 । इसके बाद इनका विस्तृत भौतिक नृतत्वशास्त्रीय विश्लेषण केनेडी ने किया है (केनेडी 1996 2000, केनेडी और अन्य 1986 1986a केनेडी और एलगार्ट 1998)।

इस पुरास्थल की समाधियॉ (कब्रे) आवास क्षेत्र के अन्दर स्थित थी । कब्रे छिछली तथा अण्डाकार है । शव को समाधि मे रखने के पहले कब्र मे 3–4 सेमी मोटी भुरभुरी मिट्टी बिछायी जाती थी । तत्पश्चात् मुर्दों की पश्चिम–पूर्व दिशा मे (सिर पश्चिम तथा पैर पूर्व दिशा मे करके) चित लिटाकर विर्स्तीण रूप से दफनाया जाता था । उत्खनित 12 समाधियो मे से 11 मे एक–एक मानव ककाल दफनाये हुए मिले तथा एक समाधि मे चार मानव ककाल एक साथ दफनाये हुए मिले है (छायाचित्र 1) एक हाथ शरीर के समानान्तर और दूसरा हाथ पेट पर रखकर दफनाने की परम्परा थी । मृत्योपरान्त किसी दूसरे जीवन मे भी लोग आस्था रखते थे । इसीलिए कब्रो मे लघु पाषाण उपकरण जानवरो की हड्डियॉ तथा घोघे आदि मृतको को भेट के रूप मे रखे हुए प्राप्त हुए है । कब्रो को ढकते समय चूल्हो की राख भी प्रयुक्त होती थी । जिस कब्र मे चार शव एक ही साथ दफनाये हुए मिले है उसमे पहले एक पुरूष और नारी के ककाल रखे हुए है तथा उसके ऊपर पुन एक पुरूष और नारी के ककाल रखे हुए मिले है । उल्लेखनीय है कि मध्य पाषाण काल की इस कब्र मे नारियॉ पुरूषो के बाये रखी गयी है ।
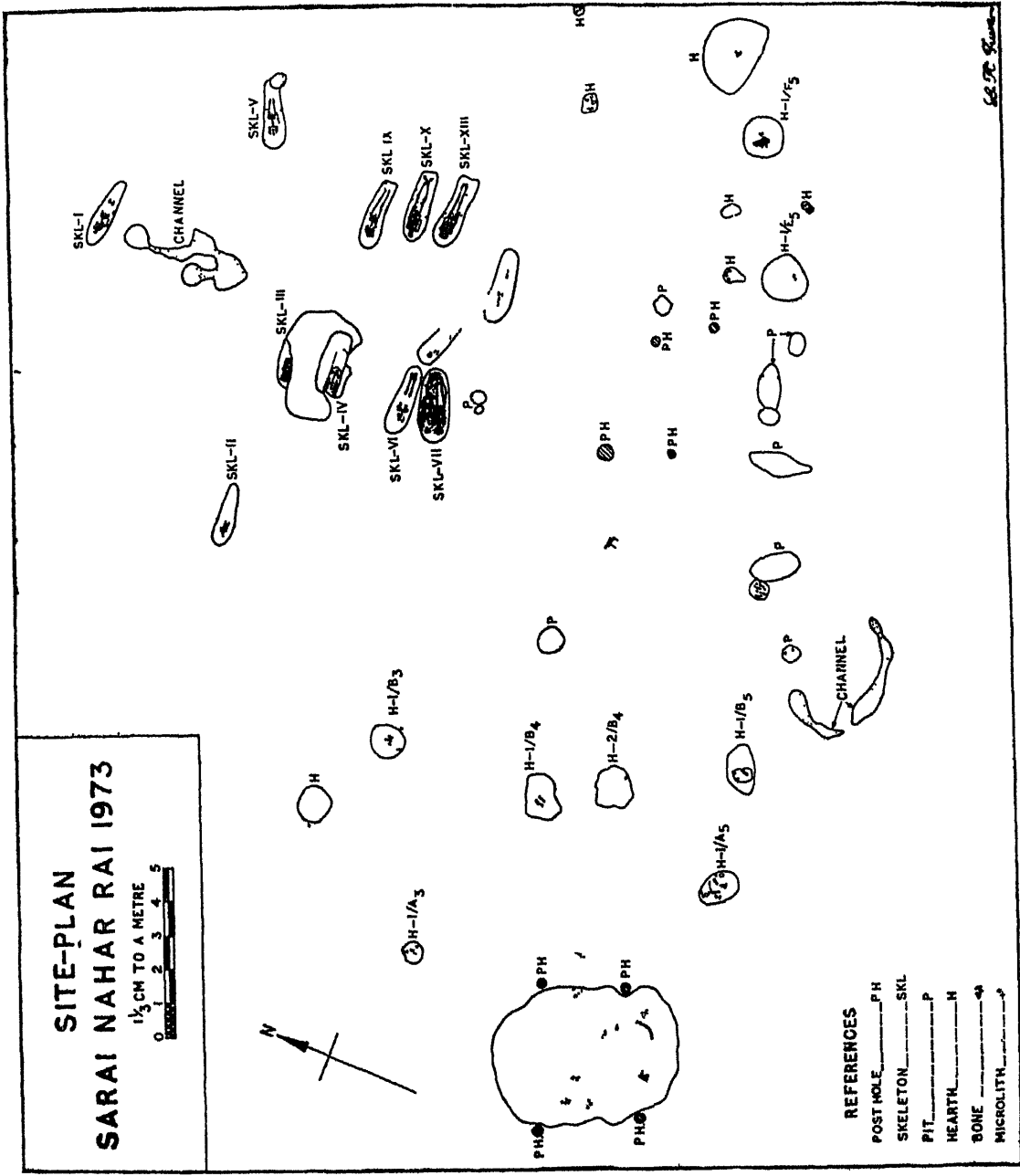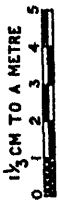
रेखाचित्र 8 सरायनाहर राय का स्थल मानचित्र
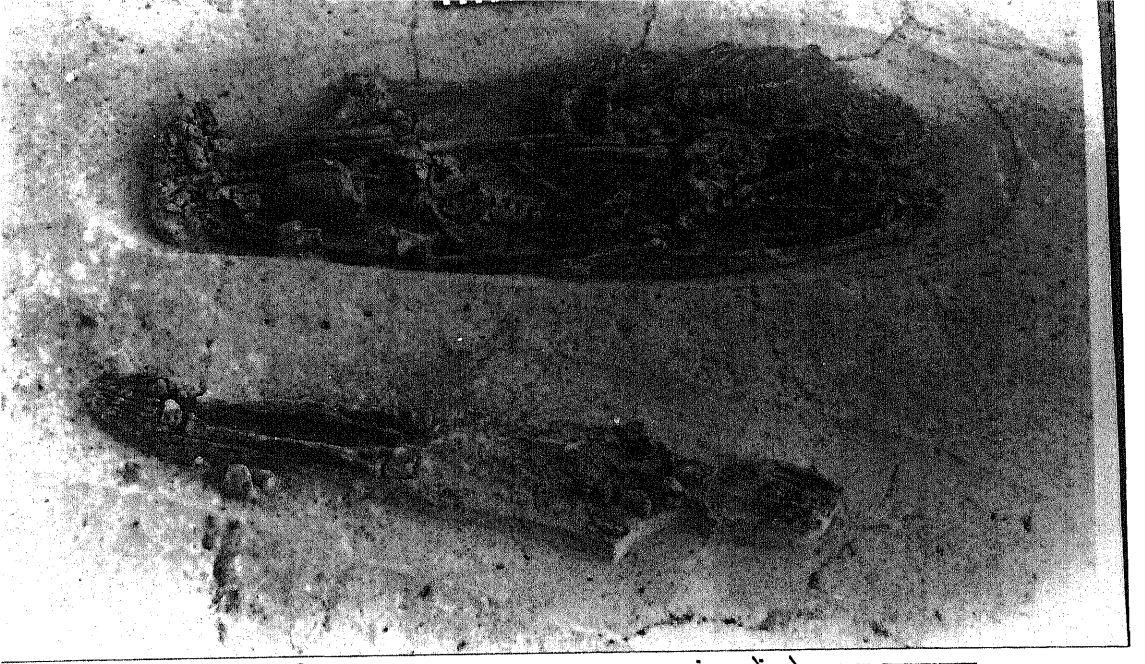
छायाचित्र : 1 सराय नाहर रायः चार कंकालों से युक्त शवाधान
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
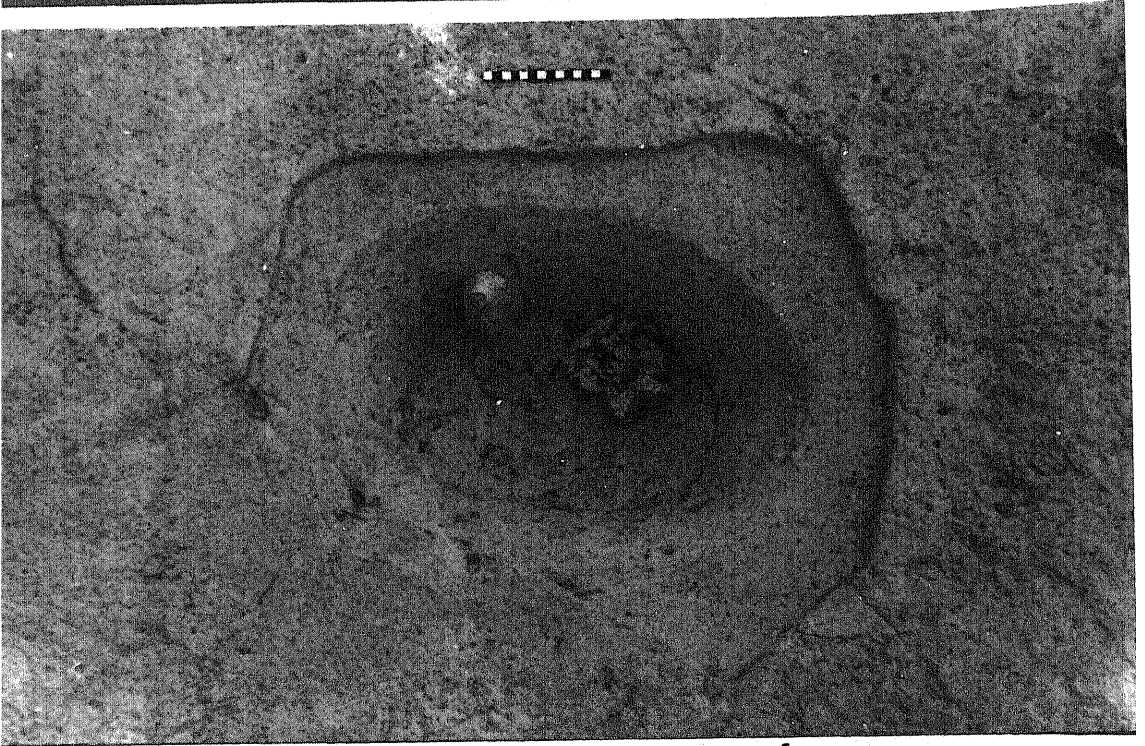
छायाचित्र : 2 सराय नाहर रायः गर्त चूल्हा
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

तालिका 1 सराय नाहर राय के मध्य पाषाणिक मानव अवशेष

वर्ष और शवाधान स0	लिग	आयु	दिक्–स्थापन	सन्दर्भ
1972-I	पुरूष	युवा 16 18 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 12
1973-II	पुरूष	युवा 20-24 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 12-14 लोवेल 1992 142
1972-III	पुरूष	युवा 17-18 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 14-16
1973-III	पुरूष	युवा 17-20 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 23-25
1973-IV	पुरूष	युवा 22-24 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 16-18
1970-IV	पुरूष	युवा 24-28 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 28-3
1972-V	स्त्री	युवा	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 25-26
1972-IX	पुरूष (सदिग्ध)	युवा 28-30 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 18-20
1972-X	पुरूष	युवा 22-28 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 20-22
1972-IIII	पुरूष	युवा 14-18 वर्ष	पश्चिम–पूर्व	केनेडी और अन्य 1986 26-28

इस पुरास्थल से प्राप्त 15 मानव ककालो मे से 11 मानव ककालो के लिग की पहचान की जा चुकी है जिसमे 7 पुरूष और 4 स्त्रियो के ककाल है । 4 ककालो के विषय मे कोई जानकारी नही प्राप्त हो सकी है । हड्डियो के अस्थिकरण, कपाल की सधि रेखाओ के विलयन तथा स्थायी दॉतो के आधार पर इनकी औसत आयु 17 से 31 वर्ष के मध्य ऑकी गयी है । स्त्रियो की मृत्यु 15 से 35 वर्ष की आयु मे हुई । सराय नाहर राय के स्त्री–पुरूष दोनो ही अपेक्षाकृत लम्बे कद के थे (शर्मा 1978) । पुरूषो की औसत लम्बाई 173 93 सेमी से 192 08 सेमी तथा स्त्रियो की लम्बाई का औसत 174 89 सेमी से 189 68 सेमी था।

सराय नाहर राय मे कुल 8 गर्त चूल्हो का उत्खनन किया गया है (पाण्डेय 1983 298–300)। ये गोलाकार (छायाचित्र 2) अथवा अण्डाकार तथा कुछ

अनियमित आकार के है । गर्त चूल्हो का मुँह चौडा तथा पेदी सकरी है जिसकी ऊपरी माप 1 49 मीटर से 72 सेमी है तथा पेदी 1 02 मीटर से 45 सेमी चौडी है । इनकी गहराई 25 सेमी से लेकर 10 सेमी के बीच है । गर्त चूल्हो से गाय भैस विभिन्न प्रकार के हिरण आदि की जली अधजली हड्डियॉ मिली है। इनके अतिरिक्त कछुआ की खोपडी के टुकडे तथा हाथी की एक पसली भी प्राप्त हुई है । सरायनाहर से भेड–बकरी की हड्डियो की पहचान प्रो0 आलूर ने की थी । लेकिन डा0 थामस और डा0 पी0पी0 जोगलेकर के अनुसार ये हड्डियॉ हिरणो की हैं । इन्हे किसी पालतू पशु के अवशेष नही मिले है । गर्त चूल्हो का उपयोग सभवत पशुओ का मॉस भूनने के लिए होता था । इन चूल्हो मे केवल राख मिली है कोयले के टुकडे नही मिले है । इसके आधार पर यह अनुमान किया गया है कि सभवत घास–फूस आदि का उपयोग ही ईंधन के रूप मे किया गया था । आवास क्षेत्र से 5 X 4 मीटर आकार का एक फर्श मिला है जिसके चारो कोनो पर एक–एक स्तम्भ गर्त मिले है (छायाचित्र 3) । प्रो0 जी0 आर0 शर्मा ने इसको सामुदायिक झोपडी की सज्ञा दी है क्योकि इसके फर्श से लघु पाषाण उपकरण पशुओ की हड्डियॉ तथा कई छोटे–छोटे चूल्हे भी मिले है । यहॉ से एक ही चूल्हे को दो बार खोदकर उपयोग मे लाने का प्रमाण भी मिलता है (छायाचित्र 4)।

इस पुरास्थल से लघु पाषाण उपकरण निर्माण की विभिन्न अवस्थाओ मे प्राप्त हुए है । उपकरण निर्माण के लिए चैल्सिडनी अगेट, जैस्पर और कार्नेलियन पत्थरो का प्रयोग किया गया है । यहॉ से जो उपकरण प्राप्त हुए थे उनमे कई तरह के ब्लेड समानान्तर बाहु और भूथडे ब्लेड फलक, अर्द्धचन्द्र विषम बाहु और समद्विबाहु त्रिभुज खुरचनी नोक तथा तक्षणी आदि का उल्लेख किया जा सकता है (रेखाचित्र स0 9)। जानवरो की हड्डियो पर बने हुए उपकरण यहॉ से अधिक नही मिले है । लेकिन कुछ पशुओ के सीगो से जमीन को खोदने का काम लिया जाता था । इसलिए उनकी नोक अत्यन्त चिकनी हो गयी है। एक 13 2 सेमी लम्बे तथा 3 सेमी चौडे हड्डी के बने हुए ब्लेड का भी उल्लेख किया जा सकता है जिस पर फलकीकरण से तेज धार बनायी गयी है ।

रेखाचित्र 9 सराय नाहर राय लघुपाषाण उपकरण
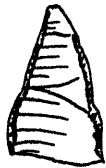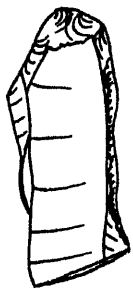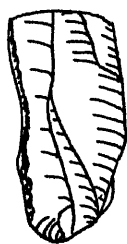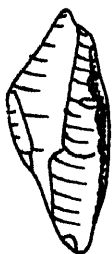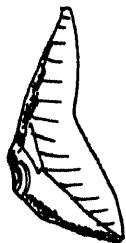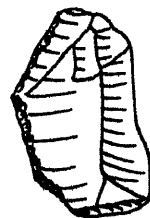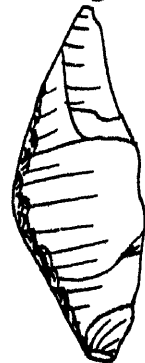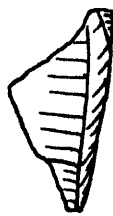
छायाचित्र : 3 सराय नाहर रायः चार स्तम्भगर्तो से युक्त झोपड़ी का फर्श
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
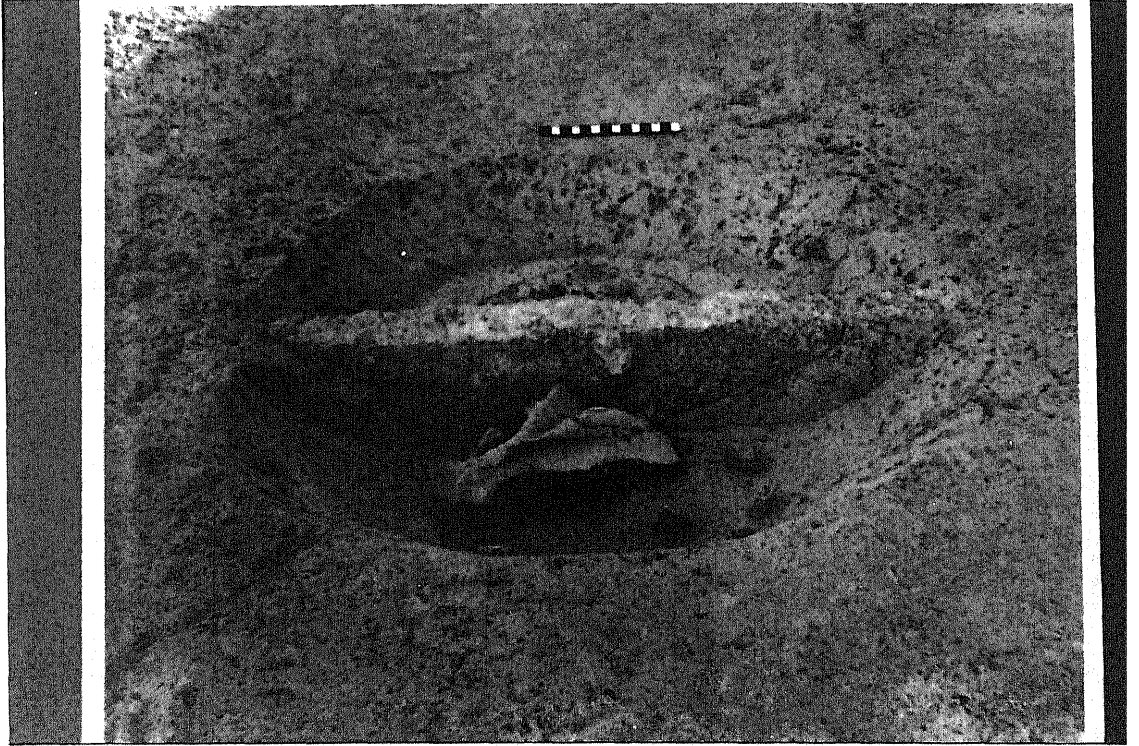
छायाचित्र : 4 सराय नाहर रायः दो बार प्रयोग के प्रमाण से युक्त गर्त
चूल्हा (पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

यह पुरास्थल ज्यामितीय उपकरणो के आधार पर पुरातात्विक दृष्टि से मध्यपाषाण काल के परवर्ती चरण से सम्बन्धित है । यहॉ से दो रेडियो कार्बन तिथियॉ प्राप्त हुई है । प्रथम तिथि टी0 एफ0 1104 10345±110 (8395±110 ई0 पू0) हे यह बिना जली हुई मानव अस्थि पर आधारित है । दूसरी तिथि टी0 एफ0 1356 एव 1359 2940±125 (990±125 ई0 पू0) है जो जली हुई हड्डियो के नमूनो से निकाली गयी है ।

महदहा

महदहा (अक्षाश 25°58 2 उ0 देशान्तर 82°11 30′ पू0) मध्य गगा घाटी का दूसरा मध्य पाषाणिक स्थल है जिसका उत्खनन किया गया है (*इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1977–78* एव *इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1978–79*)। यह स्थल प्रतापगढ जिले की पटटी तहसील मे तहसील मुख्यालय से लगभग 5 किमी उत्तर दिशा मे वर्तमान महदहा गॉव के पूर्व स्थित है ।

1953 मे शारदा सहायक नहर परियोजना के निर्माण के दौरान इस पुरास्थल का काफी भाग नष्ट हो गया था । सन् 1978 मे नहर को चौडा करने के दौरान इस पुरास्थल की जानकारी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग को अपने भूतपूर्व छात्र तथा पट्टी के तत्कालीन परगना अधिकारी श्री लाल बिहारी पाण्डेय के सौजन्य से प्राप्त हुई थी (पाण्डेय 1985)। उसी वर्ष प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रो0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन मे इस स्थल पर उत्खनन कार्य प्रारम्भ किया गया जिसका सचालन प्रो0 आर0 के0 वर्मा प्रो0 वी0 डी0 मिश्र प्रो0 डी0 मण्डल एव डॉ0 जे0 एन0 पाल ने किया ।

यह मध्य पाषाणिक स्थल 8,000 वर्गमीटर के क्षेत्र मे एक धनुषाकार झील के पश्चिमी तट पर स्थित है (शर्मा 1980)। इस स्थल से होकर गुजरने वाली नहर के पश्चिम आवास तथा कब्रगाह के प्रमाण मिले है और पूर्व मे मध्य पाषाण कालीन जानवरो की बहुत सी कटी हुई हड्डियॉ प्राप्त हुई है । सभवत यही वह क्षेत्र था

जहॉ पर मध्य पाषाणिक मानव जानवरो को काटता था और हड्डियो के आभूषण तथा उपकरण बनाता था (रेखाचित्र 10) ।

महदहा के आवास तथा शवाधान क्षेत्र मे मध्य पाषाणिक मानव के सास्कृतिक अवशेष 60 सेमी मोटे जमाव मे दबे पडे है (पाल 1994 91–101)। इस जमाव को स्तरीकरण के सिद्धान्त पर चार स्तरो मे विभाजित किया गया है (छायाचित्र 5) । खुले हुए क्षेत्र मे पाषाणिक सस्कृति का इतना मोटा जमाव अत्यन्त उल्लेखनीय है । इससे इस स्थल पर मध्य पाषणिक मानव के एक लम्बे समय तक रहने का बोध होता है ।

यहॉ के कब्रगाह से कुल 30 शवाधानो का उत्खनन किया गया है, जो स्तरीकरण तथा एक कब्र के दूसरी कब्र के ऊपर होने के आधार पर चार विभिन्न चरणो से सम्बन्धित किये गये है (छायाचित्र 6)। सरायनाहर राय की तरह महदहा की समाधियॉ भी छिछली और अण्डाकार है जिनमे मृतको को सागोपाग लिटाकर रखा गया है । यद्यपि महदहा मे भी अधिकतर मृतको को पश्चिम–पूर्व दिशा मे लिटाकर दफनाया गया है (पाल 1985 28–37) लेकिन इस स्थल पर मध्य पाषाणिक मानव अपने मृतको को कभी–कभी सिर पूर्व तथा पैर पश्चिम दिशा मे करके भी दफनाता था । सभव है यहॉ दो प्रजातियो के लोग साथ–साथ रहते रहे हो । समाधियो मे मृतको के दोनो हाथ शरीर के समानान्तर रखे हुए मिले है जबकि सरायनाहरराय मे मृतको का एक हाथ शरीर के समानान्तर और दूसरा पेट पर रखा हुआ है । महदहा मे कुछ मृतको का एक हाथ कटि के नीचे तथा दूसरा जाघो के बीच मे रखा हुआ है (रेखाचित्र 11)। महदहा से दो बच्चो के शवाधान भी प्राप्त हुए है जिसमे एक 6 वर्ष का बालक (छायाचित्र 7) और दूसरा 4 वर्ष की बालिका का है । यहॉ से दो समाधियो मे युग्म शवाधान के प्रमाण भी प्राप्त हुए है। एक समाधि मे नारी बाये और पुरूष दाये रखकर दफनाये गये है तथा दूसरी मे पुरूष नीचे और नारी ठीक ऊपर है । पुरूष अपने कान मे कुण्डल धारण किये हुए है और गले मे हार (छायाचित्र 8)। एक दूसरी समाधि मे पुरूष कपाल के साथ हार उपलब्ध हुआ है। सभवत नारी को अपने को आभूषण से सजाने की आवश्यकता नही थी पुरूष ही आभूषण प्रेमी थे । प्रागैतिहासिक भारत मे आभूषणो
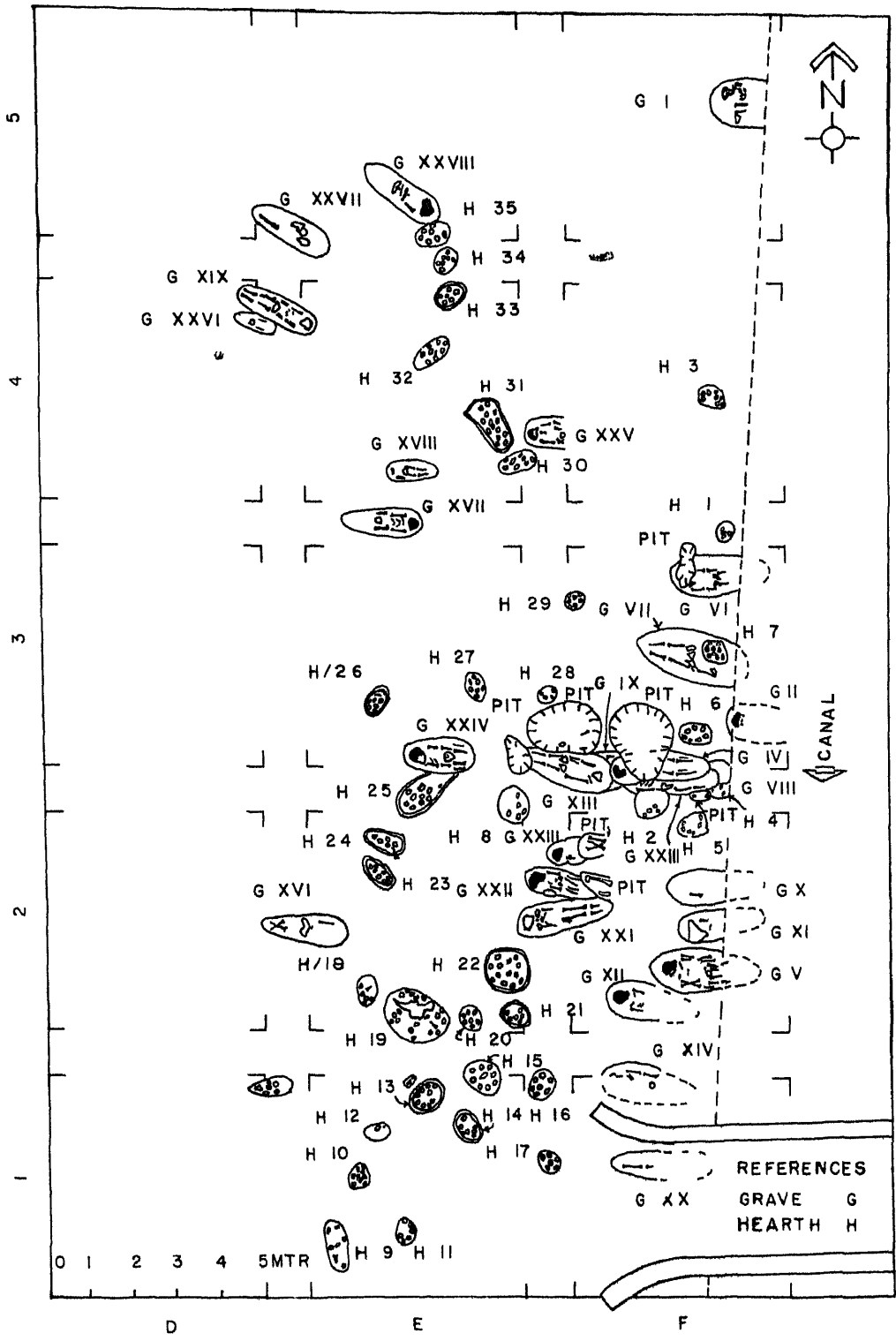
रेखाचित्र 10 महदहा उत्खनित स्थल का मानचित्र
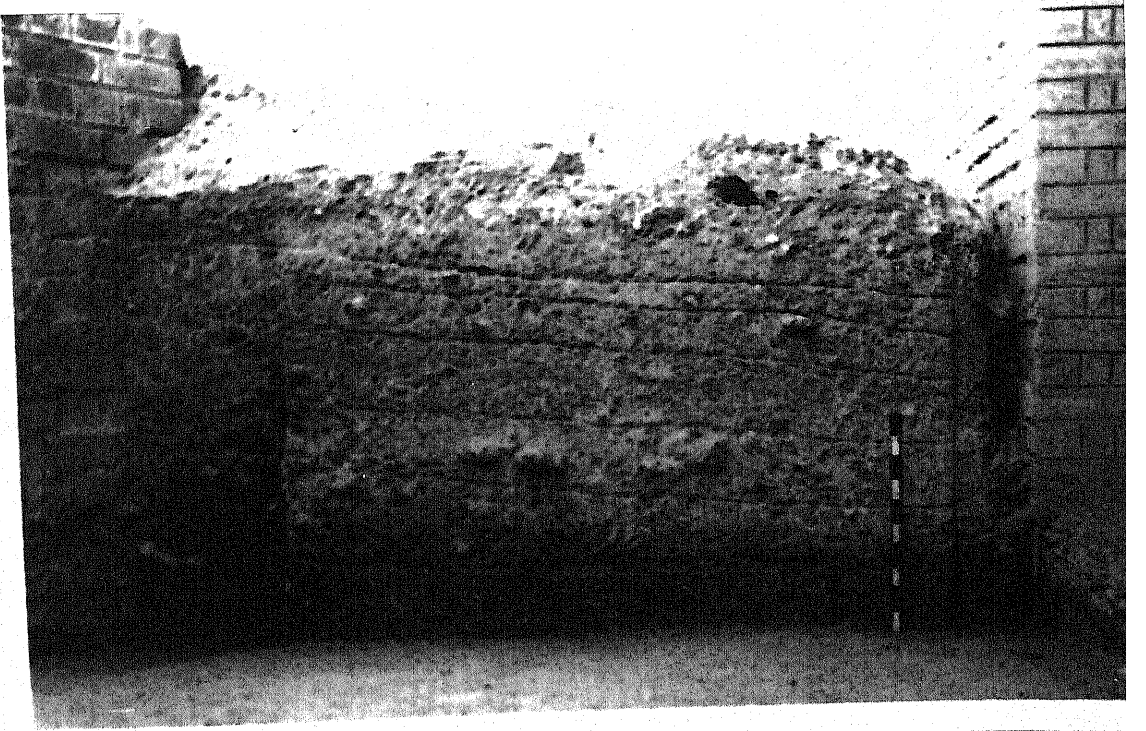
छायाचित्र 5: महदहाः अनुभाग में आवासीय जमाव के स्तर
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
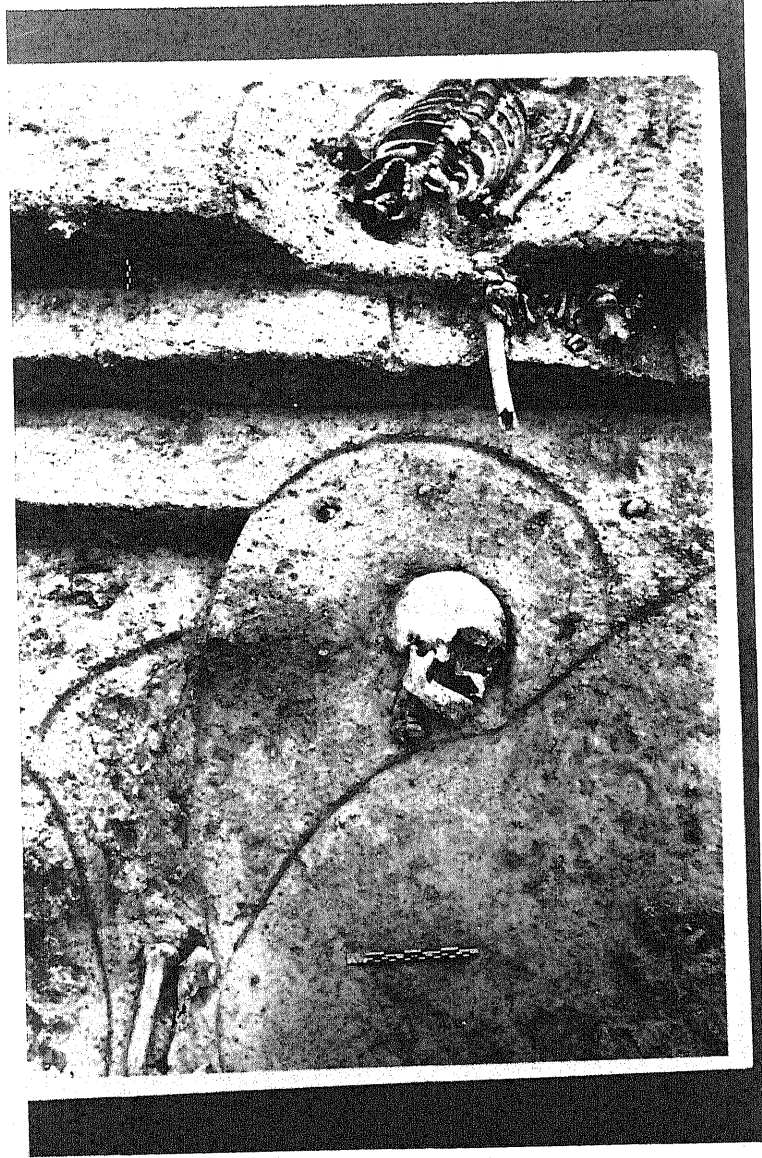
छायाचित्र 6: महदहा: स्तरीकरण और अंश छादन के अनुसार चार चरणों के शवाधान और गर्त्त चूल्हे (पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
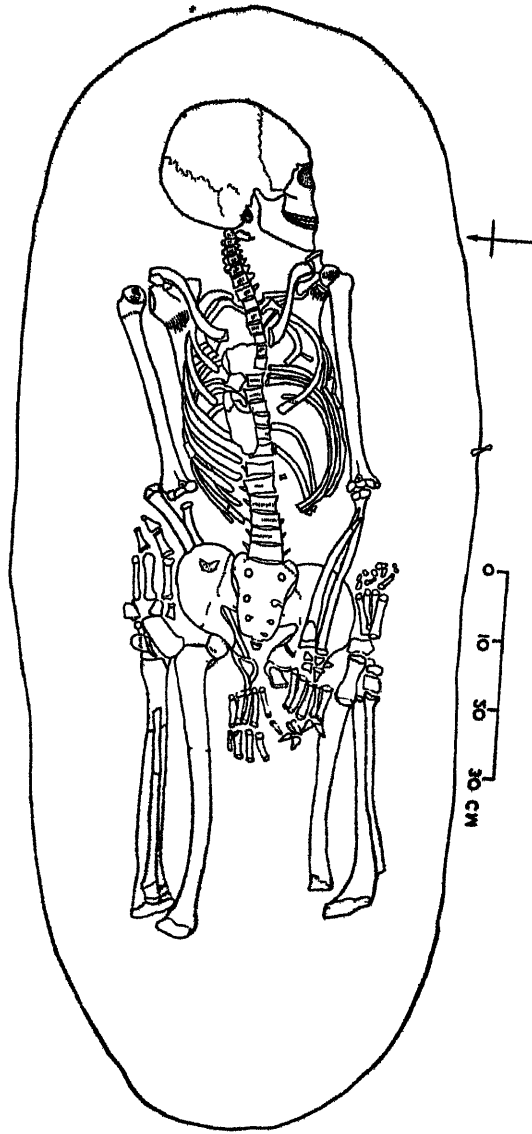
रेखाचित्र 11 महदहा मध्यपाषाणकालीन नरककाल
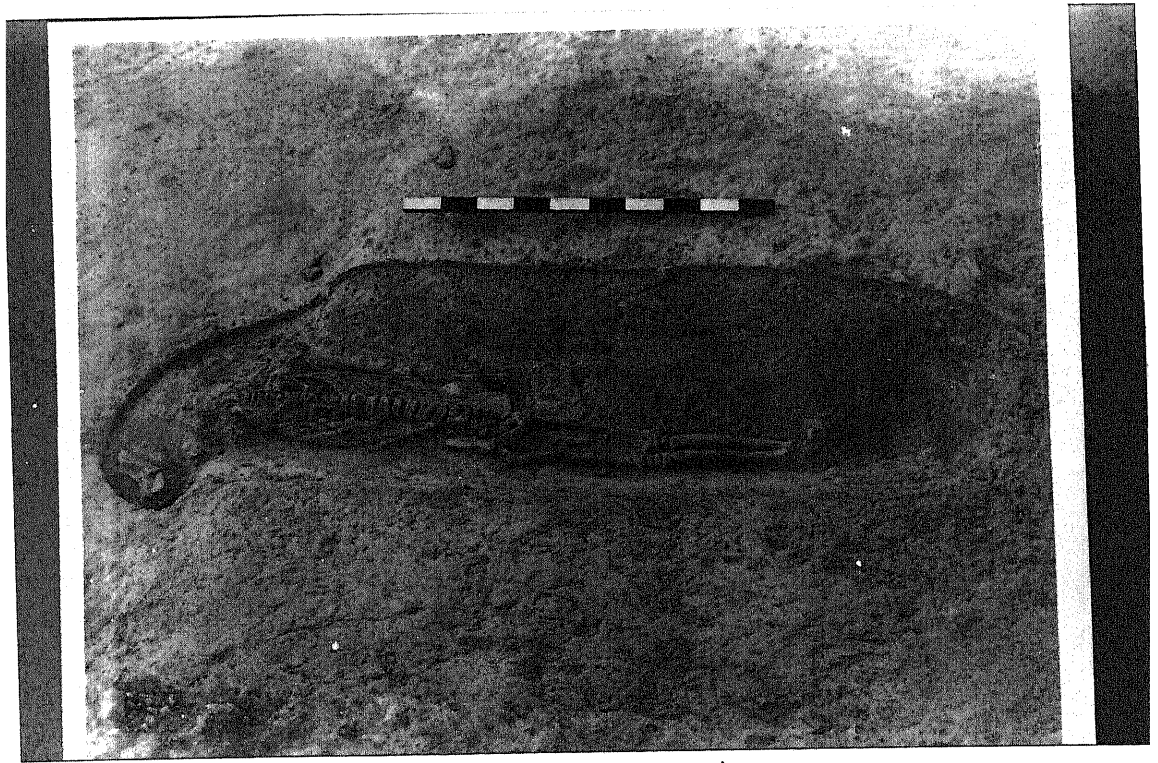
छायाचित्र : 7 महदहाः बच्चे का शवाधान
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

छायाचित्र : 8 महदहाः युग्म शवाधान, कुण्डल युक्त पुरुष कंकाल
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

के प्रयोग का यह प्राचीनतम प्रमाण है । ये आभूषण छिद्रयुक्त गोल हड्डियो ओर मृगश्रृग को काटकर बनाये गये है (छायाचित्र 9) । उत्खनन मे इनके निर्माण प्रक्रिया पर प्रकाश डालने वाले बहुत से अर्ध निर्मित आभूषण भी प्राप्त हुए है (छायाचित्र 10)। जानवरो की जली हड्डियो व हड्डियो के उपकरण तथा पाषाण उपकरण शव सामग्री के रूप मे प्राप्त हुए है (शर्मा एव अन्य 1980b)। सभवत चूल्हो की राख को समाधियो मे रखा जाता था। यहॉ से प्राप्त नर ककालो का अध्ययन प्रो0 केनेडी तथा प्रो0 लुकास और उनके अन्य सहयोगियो ने किया है (केनेडी और अन्य 1992 केनेडी और बरो 1992 61—138)।

महदहा के उत्खनन के फलस्वरूप जिन समाधियो की जानकारी प्राप्त हुई है उनको निम्नलिखित चार उपकालो मे विभाजित किया गया है

प्रथम उपकाल महदहा के प्रथम उपकाल से तीन मानव समाधियॉ मिली है जिनमे कुल चार ककाल दफनाये हुए मिले है क्योकि प्रथम समाधि युग्म—समाधि थी । इस युग्म समाधि से दो ककाल मिले जिसमे पुरूष को दाये तथा स्त्री को बायी ओर लिटाकर दफनाया गया था । सभी ककाल पश्चिम की ओर सिर करके दफनाये गये है । अन्य दो समाधियो से एक—एक ककाल मिले है। इस उपकाल के चार ककालो मे से दो पुरूष तथा दो स्त्री के ककाल थे ।

द्वितीय उपकाल इस उपकाल से दो समाधियॉ मिली है जिनमे से एक समाधि मे पुरूष का ककाल तथा दूसरी युग्म—समाधि मे एक स्त्री तथा एक पुरूष के ककाल मिले हैं। युग्म समाधि मे पुरूष के ककाल के ठीक ऊपर स्त्री का ककाल रखा हुआ मिला है। सभी ककाल पश्चिम—पूर्व दिशा मे लिटाकर दफनाये गये है । द्वितीय उपकाल की इन दोनो समाधियो मे अन्त्येष्टि सामग्री रखी हुई मिली है । एकाकी पुरूष ककाल हिरण के श्रृगो की बनी पॉच मुद्रिकाओ की एक माला गले मे पहने हुए था (छायाचित्र 11) । युग्म समाधि का पुरूष श्रृगो की बनी हुई 12 मुद्रिकाओ की एक माला गले मे पहने हुए था तथा बाये कान मे श्रृग का बना हुआ एक गोल कुण्डल धारण किये हुए था ।

छायाचित्र : 9 महदहाः मृगश्रृंग और हड्डी के बने आभूषण
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
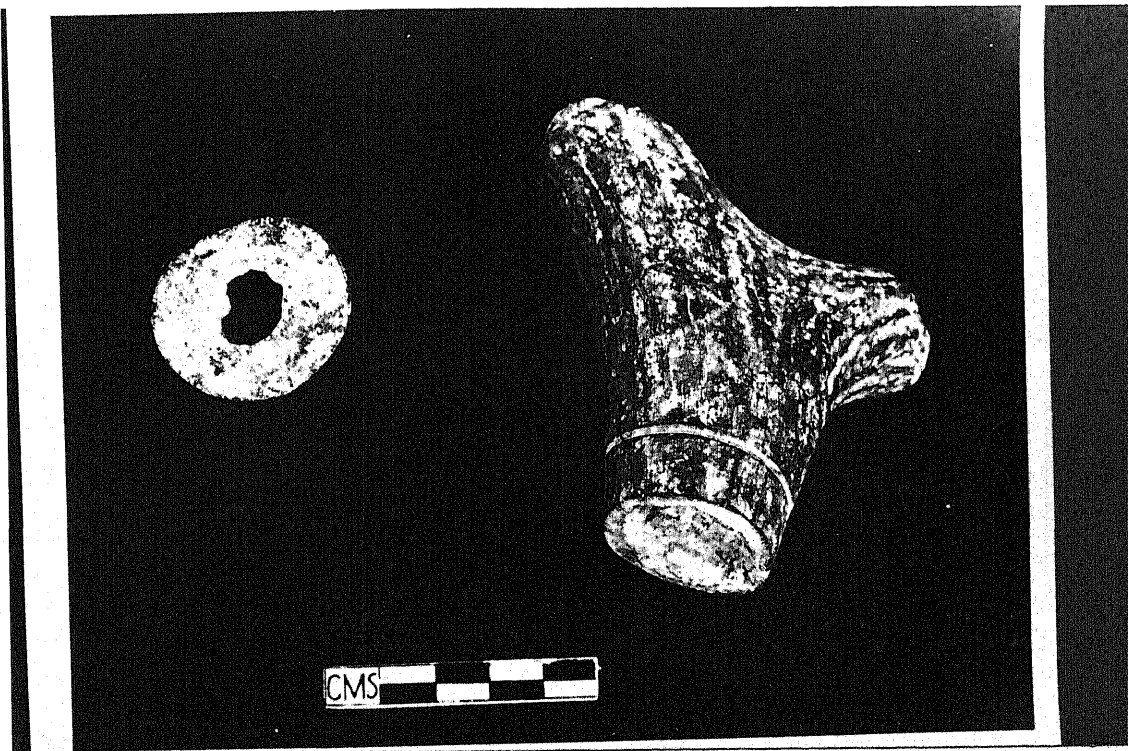
छायाचित्र : 10 महदहाः मृगश्रृंग द्वारा आभूषण निर्माण प्रक्रिया का प्रमाण
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

छायाचित्र 11: महदहाः मृगश्रृंग से निर्मित मुद्रिकाओं की माला से युक्त पुरुष कंकाल (पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

तृतीय उपकाल इस उपकाल से 10 समाधियॉ मिली है जिनमे से प्रत्येक मे एक–एक मानव ककाल दफनाये हुए मिले है । इनमे से 6 ककालो के लिग की पहचान हो सकी है जिनमे 4 स्त्री और 2 पुरूष के है । 4 ककालो के लिग की पहचान सम्भव नही हो सकी । सात ककालो का दिक स्थापन पश्चिम–पूर्व दिशा मे था दो मे भिन्नता थी एक ककाल पूर्व–पश्चिम तथा दूसरा तिरछा पूर्व–दक्षिण से पश्चिम–उत्तर की तरफ सिर करके दफनाया गया था । दो समाधियो से अत्येष्टि सामग्री मिली है । एक महिला ककाल के साथ हिरण की सीग की बनी हुई दो गुरियॉ तथा मृगश्रृग का एक बाण मिला है तथा दूसरी महिला के साथ कछुआ की खोपडी का एक टुकडा रखा हुआ मिला है ।

चतुर्थ उपकाल इस उपकाल से सबसे अधिक 13 समाधियॉ मिली है जिनमे से प्रत्येक मे एक–एक मानव ककाल दफनाया हुआ मिला है (तालिका 2) । एक मुडे हुए ककाल को छोडकर शेष सभी 12 ककाल विर्स्तीण शवाधान है। 13 ककालो मे से 11 के लिग की पहचान की जा सकी है जिनमे से 7 महिला तथा 4 पुरूष के ककाल है। दो ककालो के लिग की पहचान नही की जा सकी। 13 मे से 10 ककाल वयस्क लोगो के थे । एक वृद्ध व्यक्ति का तथा 2 ककाल बच्चो के थे (लुकास और पाल 1992 45–55)। 13 ककालो मे से 6 ककालो के सिर पश्चिम की ओर तथा 5 का सिर पूर्व दिशा मे करके दफनाया गया था । दो ककालो का दिक स्थापन किसी सीधी दिशा मे नही या बल्कि तिरछे था। दो महिलाओ तथा एक पुरूष के साथ अन्त्येष्टि सामग्री रखी हुई मिली है । इन ककालो का विस्तृत नृतत्वशास्त्रीय अध्ययन कोरनेल विश्वविद्यालय के के0ए0आर0 केनेडी ने किया है (केनेडी और अन्य 1992)।

महदहा के उत्खनन से 35 गर्त चूल्हे प्रकाश मे आये है । कतिपय गर्त चूल्हो के भीतरी भाग को गीली मिट्टी से लीपा जाता था । सरायनाहर राय की भॉति यहॉ भी गोल अथवा अण्डाकार चूल्हे मिले है (छायाचित्र 12)। सभवत

तालिका 2 महदहा से प्राप्त मध्य पाषाणिक मानव के अवशेष

उप काल	समाधि स0	समाधि	दिक्स्थापन	लिग	आयु	सन्दर्भ
I	I / XIV/ 1978	युग्म शवाधान	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	युवा पुरुष	केनेडी और अन्य 1992 115, पाल 1992b 34, 36 37, शर्मा और अन्य 1980 87,90
	II / XIII/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा 28-32	केनेडी और अन्य 1992 114, पाल 1992b 34, 37, 39, शर्मा और अन्य 1980 87,90
	III / XIII/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा	केनेडी और अन्य 1992 113, पाल 1992b 34 37, 39, शर्मा और अन्य 1980 87,91
II	IV / XI/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा 22 26	केनेडी और अन्य 1992 112, केनेडी और लोवेल 1992 144, पाल 1992b 34, 37, 39 शर्मा और अन्य 1980 87,91
	V / X/ 1978	युग्म शवाधान	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा 18-20 वर्ष	केनेडी और अन्य 1992 39, 108, 110 111, केनेडी और लोवेल 1992b 34, 37, 39 शर्मा और अन्य 1980 87,92
III	V / IX/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा 19-22	केनेडी और अन्य 1992 107, पाल 1992b 34 37, 43, शर्मा और अन्य 1980 87 93
	VII / VIII/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा	केनेडी और अन्य 1992 106, केनेडी और लोवेल 1992 144, पाल 1992b 34, 43, 46, शर्मा और अन्य 1980 87 94
	VIII / VII/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व		बच्चा	पाल 1992b 34, 37, 46, शर्मा और अन्य 1980 87, 94
	IX / VI/1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा	केनेडी और अन्य 1992 105, केनेडी और लोवेल 1992 144, पाल 1992b 34, 37, 46, शर्मा और अन्य 1980 87, 94 95
	XV / V/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा	पाल 1992b 34, 37, 46, शर्मा और अन्य 1980 87, 94 95
	XI / IV/1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा	केनेडी और अन्य 1992 105, पाल 1992b 34, 37, 46, शर्मा और अन्य 1980 87, 95-96
	XII / III/ 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	युवा 24-28	केनेडी और अन्य 1992 104, केनेडी और लोवेल 1992 144, पाल 1992b 34, 37, 46, शर्मा और अन्य 1980 87, 96
	XV / VIA/ XV 1978	एकल	पश्चिम–पूर्व	–	–	पाल 1992b 34, 37, 46, शर्मा और अन्य 1980 87, 98

इन गर्त चूल्हो मे मॉस पिण्ड को मिट्टी के टुकडो से ढककर आग जलायी जाती थी । इसलिए आग मे जली हुई हड्डियो के साथ राख और जली मिट्टी के टुकडे भी प्राप्त होते है । महदहा के एक गर्त चूल्हे मे भैस का सीग युक्त पूरा सिर मिला है । मॉस को भूनकर खाने के विषय मे यह अत्यन्त महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करता है । यहॉ से प्राप्त कतिपय गर्तों मे लेप की कई पर्तें हैं पर उनमे हड्डी राख या जली मिट्टी के टुकडे नही मिलते है । इनका उपयोग सभवत सग्रहीत जगली अनाजो को रखने के लिए किया जाता रहा होगा ।

महदहा से लघु पाषाण उपकरण अपेक्षाकृत कम सख्या मे मिले है । प्रमुख उपकरणो मे ब्लेड, खुरचनी बेधक चान्द्रिक त्रिभुज समलम्ब चतुर्भुज उल्लेखनीय है । महदहा से सीग तथा श्रृग के बने उपकरण और आभूषण सराय नाहर राय की तुलना मे अधिक सख्या मे मिले है । सीग तथा श्रृग के उपकरणो मे बाणाग्र बेधक खुरचनी, आरी रूखानी चाकू आदि है (छायाचित्र 13) । श्रृग के आभूषणो मे कुण्डल तथा मुद्रिकाए उल्लेखनीय है । महदहा से बलुआ पत्थर पर बने हुए टूटे हुए सिल एव लोढे गोफन पाषाण तथा हथौडे आदि भी मिले है । सिल–लोढो की प्राप्ति से यह इगित होता है कि सभवत जगली घास के दानो को पीसकर भोज्य सामग्री के रूप मे उपयोग किया जाने लगा था । पुरापुष्प परागण के विश्लेषण से हरे घास के मेदान के विषय मे सकेत मिला है (पन्त और पन्त 1980)।

महदहा के गर्त चूल्हो तथा गोखुर झील से वन्य पशुओ की हड्डियॉ मिली है। यहॉ से उपलब्ध जानवरो की हड्डियो मे बैल, जगली भैसा हिरण बारहसिघा सुअर दरियायी घोडा गैडा, भेड–बकरी और घोडा विशेष उल्लेखनीय है (आलूर 1980 201–227)।

प्रो0 के0 आर0 आलूर के अनुसार महदहा मे चार प्रकार की भेड बकरियॉ थी । अब मनुष्य इन पशुओ से अत्यन्त सन्निकटता स्थापित कर रहा था । असभव नही यदि पशुपालन प्रारम्भ होने के प्रक्रिया के प्राथमिक प्रमाण यहॉ से मिले । लेकिन प्रो0 आलूर के उपरोक्त मत के विपरीत डॉ0 थामस और डॉ0 पी0 पी0
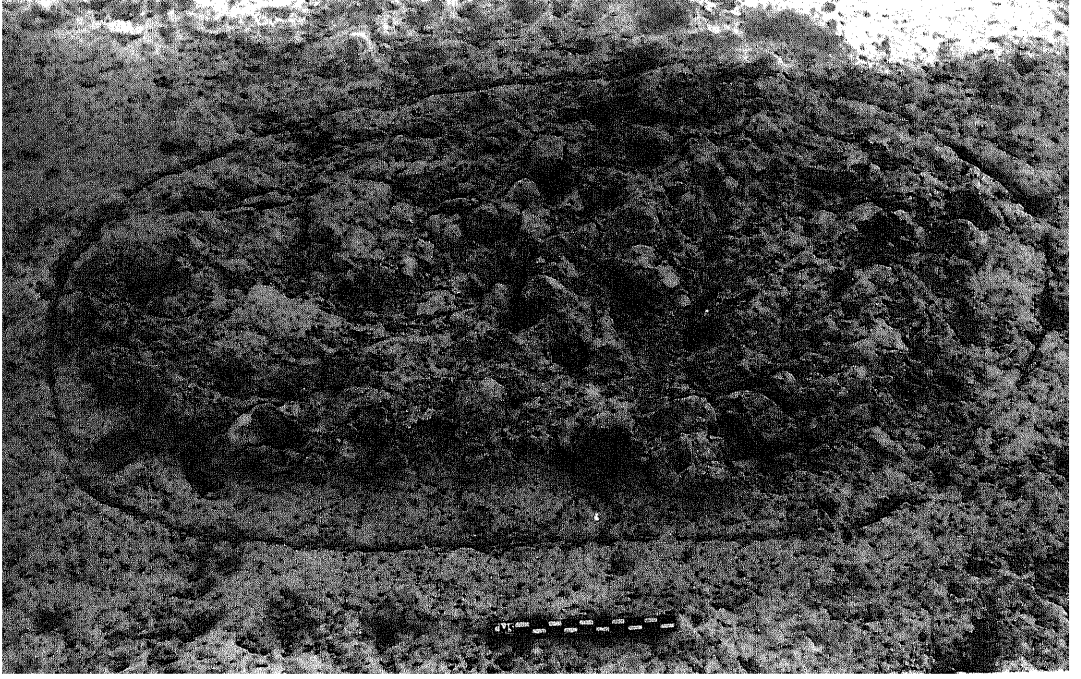
छायाचित्र : 12 महदहा: अण्डाकार गर्त्त चूल्हा
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
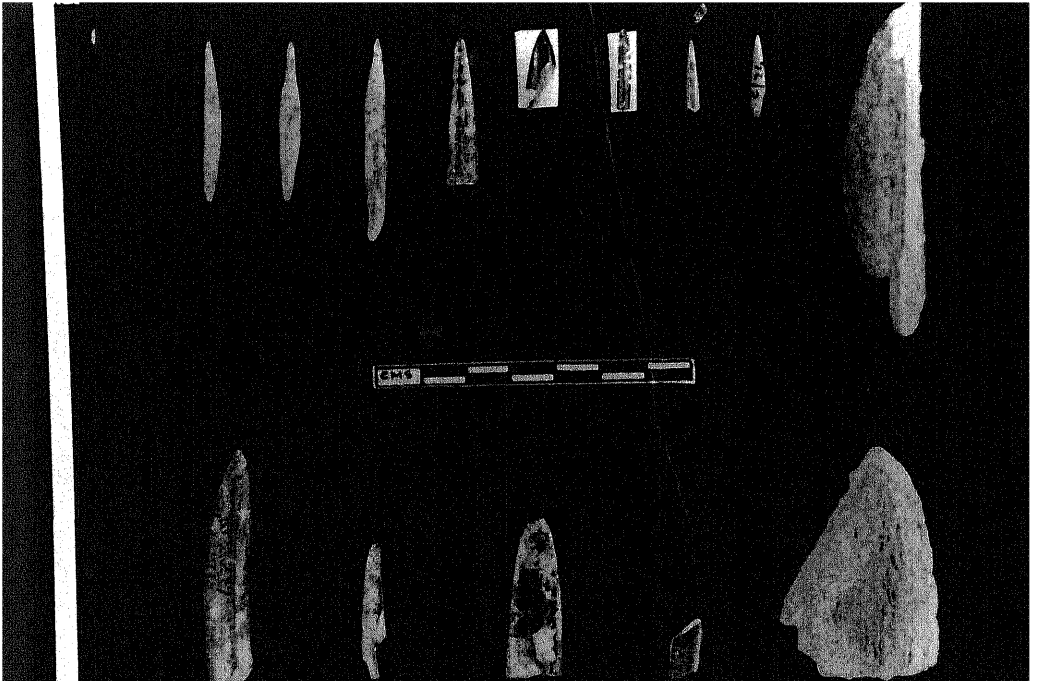
छायाचित्र : 13 महदहा: हड्डियों के बने उपकरण
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

जोगलेकर के अनुसार जिन हड्डियो को प्रो0 आलूर ने भेड बकरी की हड्डी कहा है वे वास्तव मे हिरणो की हड्डियॉ है (थामस और अन्य 1995, 1996 जोगलेकर और अन्य 2002)। इन विद्धानो के अनुसार यहॉ से किसी पालतू पशु के अवशेष नही मिले है। झील के नवे और आठवे स्तरो से एकत्र किये गये मिट्टी के नमूने पुरापुष्प पराग से युक्त है जिनका प्राथमिक विश्लेषण इलाहाबाद विश्वविद्यालय के वनस्पति विभाग के प्रो0 डी0 डी0 पत ने किया है । इस विश्लेषण से घास के पुरापुष्प परागो के अस्तित्व का पता चला है ।

महदहा का तिथिक्रम पुरातात्विक साक्ष्यो के आधार पर ज्यामितीय चरण मे रखा जा सकता है । जली हुई हड्डियो के नमूनो के विश्लेषण के आधार पर बीरबल साहनी इन्स्टीट्यूट आफ पैलियो बाटनी लखनऊ ने तीन रेडियो कार्बन तिथियॉ निकाली है । ये तिथियॉ असशोधित तथा वर्तमान पूर्व (Before Present) मे है। ये तिथियॉ इस प्रकार है 1 4010±120 2 2880±250 तथा 3 4840±130 ।

दमदमा

दमदमा (अक्षाश 25^0 58 2'' उ0ए देशान्तर 82^0 11 30 पू0) पुरास्थल का मध्य गगाघाटी के मध्यपाषाण युगीन उत्खनित पुरास्थलो मे महत्वपूर्ण स्थान है क्योकि यह अत्यन्त सरक्षित अवस्था का पुरास्थल है और इसका उत्खनन अपेक्षाकृत विस्तार से किया गया है । यह स्थल महदहा से लगभग 5 किमी उत्तर दिशा मे जनपद की पट्टी तहसील मे बारीकलॉ नामक गॉव के पास स्थित है । सई की सहायक सरिता पीली नदी मे मिलने वाले तम्बूरा नाले की दो धाराओ के सगम पर स्थित दमदमा का यह मध्य पाषाणिक स्थल लगभग 8 750 वर्ग मीटर के क्षेत्र मे फैला हुआ है (वर्मा और अन्य 1985 45–65)। इस पुरास्थल की खोज 1978 ई0 मे हुई थी । इस स्थल के समीप ही पश्चिम दिशा मे ढाक और अन्य वृक्षो के जगल का अवशेष अभी भी बचा है (छायाचित्र 14), जिससे प्राचीन काल की पारिस्थितिकी का कुछ अनुमान किया जा सकता है । पूर्ण रूप से सुरक्षित होने के कारण पॉच सत्रो सन् 1982–83 से 1986–87 तक दमदमा मे उत्खनन किया गया (रेखाचित्र 12)। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास सस्कृति एव
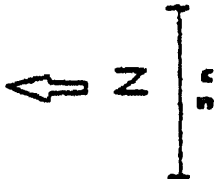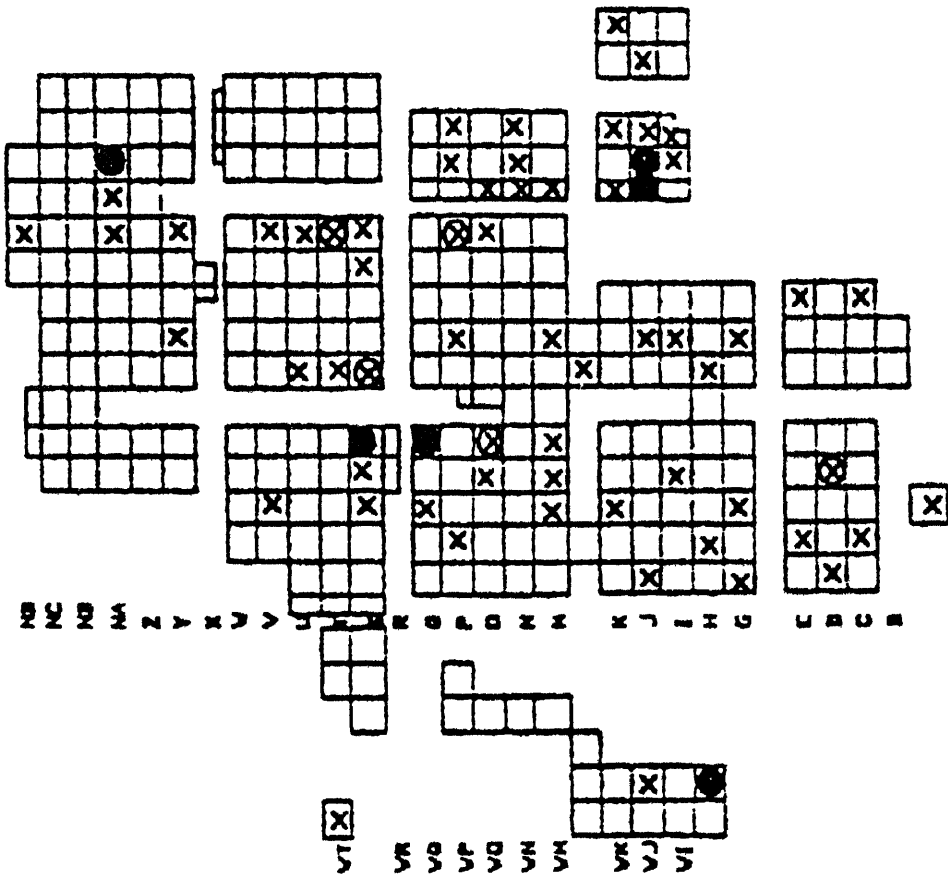
रेखाचित्र 12 दमदमा स्थल मानचित्र
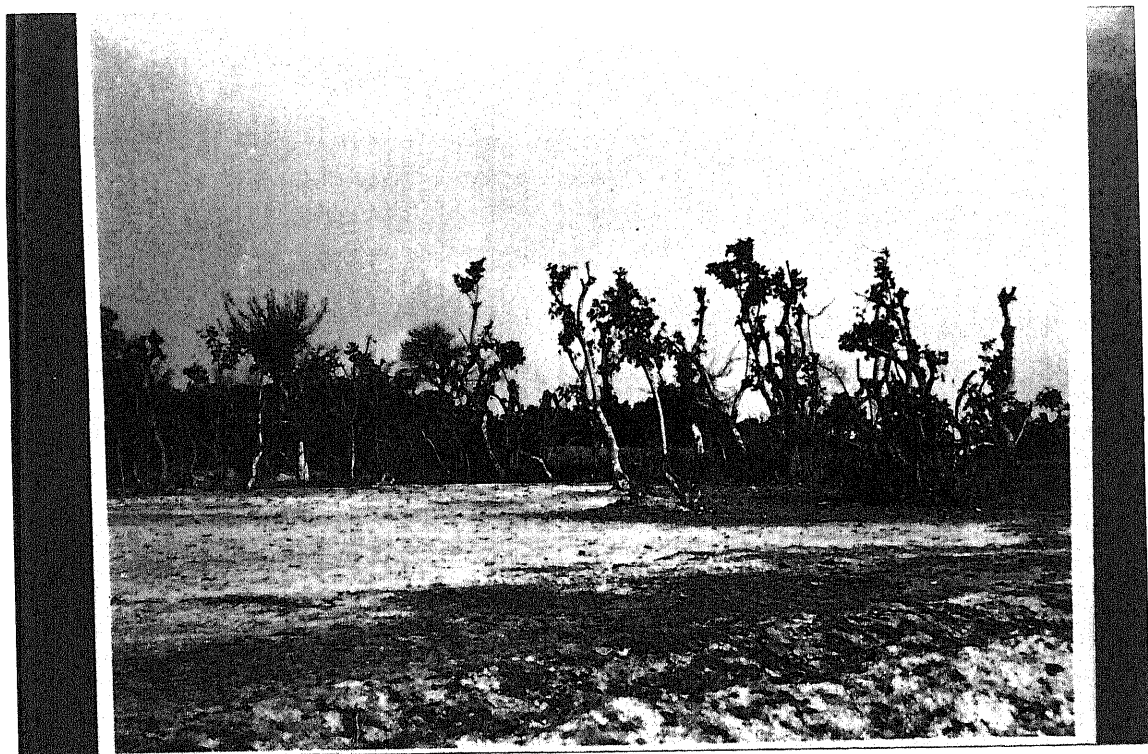
छायाचित्र : 14 दमदमाः समीवर्ती क्षेत्र में ढाक के जंगल
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
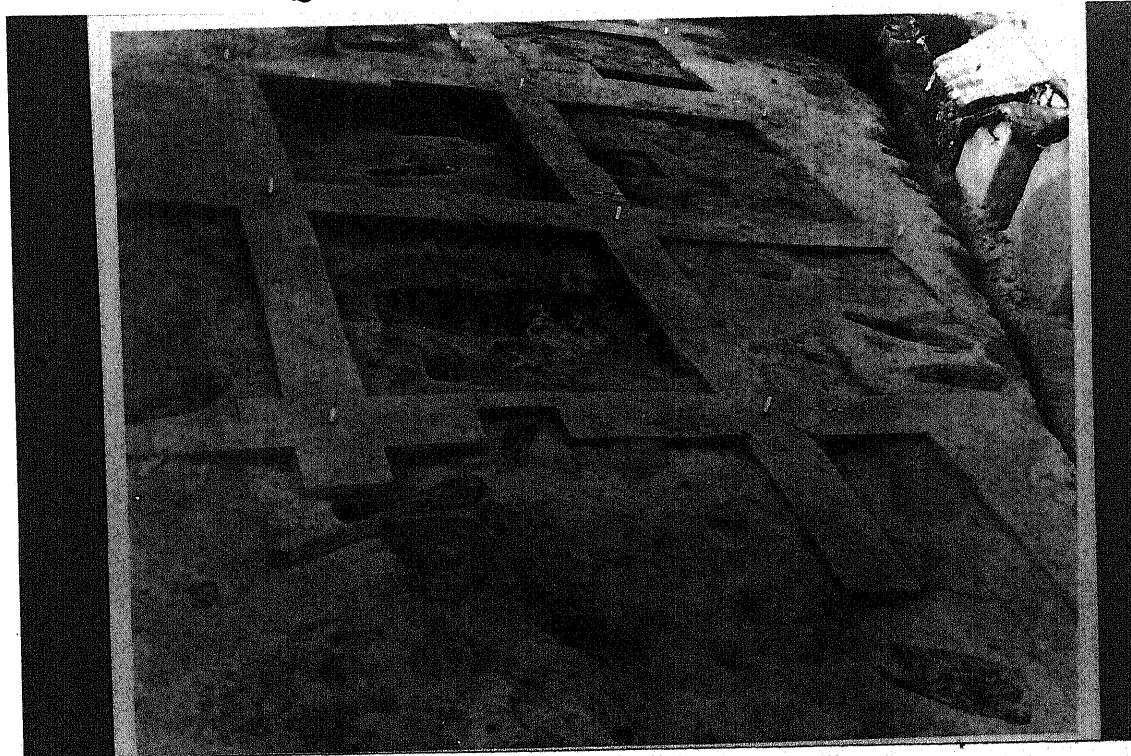
छायाचित्र : 15 दमदमाः उत्खनन में मध्यपाषाणिक धरातल पर फैली पुरासामिग्रयों का विहगंम दृश्य (पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

पुरातत्व विभाग के प्रो0 आर0 के0 वर्मा प्रो0 वी0 डी0 मिश्र प्रो0 जे0 एन0 पाण्डेय और प्रो0 जे0 एन0 पाल ने सयुक्त रूप से उत्खनन कार्य का सचालन किया । पॉच वर्ष तक लगातार हुए उत्खनन के फलस्वरूप मध्य गगा घाटी की मध्य पाषाण काल की सस्कृति पर नया प्रकाश पडा है ।

दमदमा मे उत्खनन कार्य को सुनियोजित ढग से सम्पनन्न करने के लिए सम्पूर्ण क्षेत्र को तीन क्षेत्रो– पूर्वी मध्यवर्ती तथा पश्चिमी भागो मे बॉटा गया है । तीनो क्षेत्रो से मध्य पाषाणिक पुरावशेष सामान्य रूप से मिले है किन्तु मानव शवाधान अभी तक पूर्वी क्षेत्र से नही मिला है । मानव शवाधान सिर्फ मध्यवर्ती एव पश्चिमी क्षेत्र से ही प्राप्त हुए है (पाल 1988 115–122) । उत्खनन से उपलब्ध 1 50 मीटर मोटे सास्कृतिक जमाव को 10 स्तरो मे विभाजित किया गया है । सबसे ऊपरी स्तर मध्य पाषाण काल के बाद का है । शेष सभी 9 स्तर मध्यपाषाण काल से सम्बन्धित है । यहॉ पर मध्यपाषाण कालीन सम्पूर्ण जमाव को 9 उपकालो मे विभाजित किया गया है । प्रत्येक उपकाल से मध्य पाषाण कालीन मानव के रहन–सहन के उल्लेखनीय साक्ष्य प्राप्त हुए है (छायाचित्र 15) । प्रमुख पुरातात्विक प्रमाणो मे मिट्टी के कई पर्त वाले लेप से युक्त तथा बिना लेप वाले गर्त चूल्हे (छायाचित्र 16), जली हुई मिट्टी के प्लास्टर युक्त फर्श (छायाचित्र 17 18) वन्य पशुओ की हड्डियॉ, लघुपाषाण उपकरण, श्रृग के बने उपकरण एव आभूषण और मानव शवाधानो आदि का उल्लेख किया जा सकता है। यहॉ से उपलब्ध सभी स्तरो मे स्तरीकरण की दृष्टि से अविच्छिन्नता थी। इस स्थल पर सर्वप्रथम बसने के लिए आने वाले मध्य पाषाणिक मानव ने प्राकृतिक पीली गाद मिट्टी (जलोढ मिट्टी) के ऊपर आवास बनाया था ।

दमदमा नामक मध्यपाषाणिक पुरास्थल पर अनवरत रूप से पॉच वर्षो तक किये गये उत्खनन के फलस्वरूप पश्चिमी तथा मध्यवर्ती क्षेत्रो से कुल मिलाकर 41 मानव शवाधान मिले है जो मध्यपाषाणिक मानव के शवाधान प्रणाली के विषय मे उल्लेखनीय जानकारी प्रदान करते है। इन ककालो का अध्ययन ओरेगन विश्वविद्यालय के भौतिक नृतत्व शास्त्रविद् प्रो0 जान0आर0 लुकास कर रहे है। पूर्वी क्षेत्र से अभी तक एक भी शवाधान नही प्राप्त हो सका है। स्तरीकरण के प्रमाण के

छायाचित्र : 16 दमदमाः लेप से युक्त तथा बिना लेप वाले चूल्हे
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
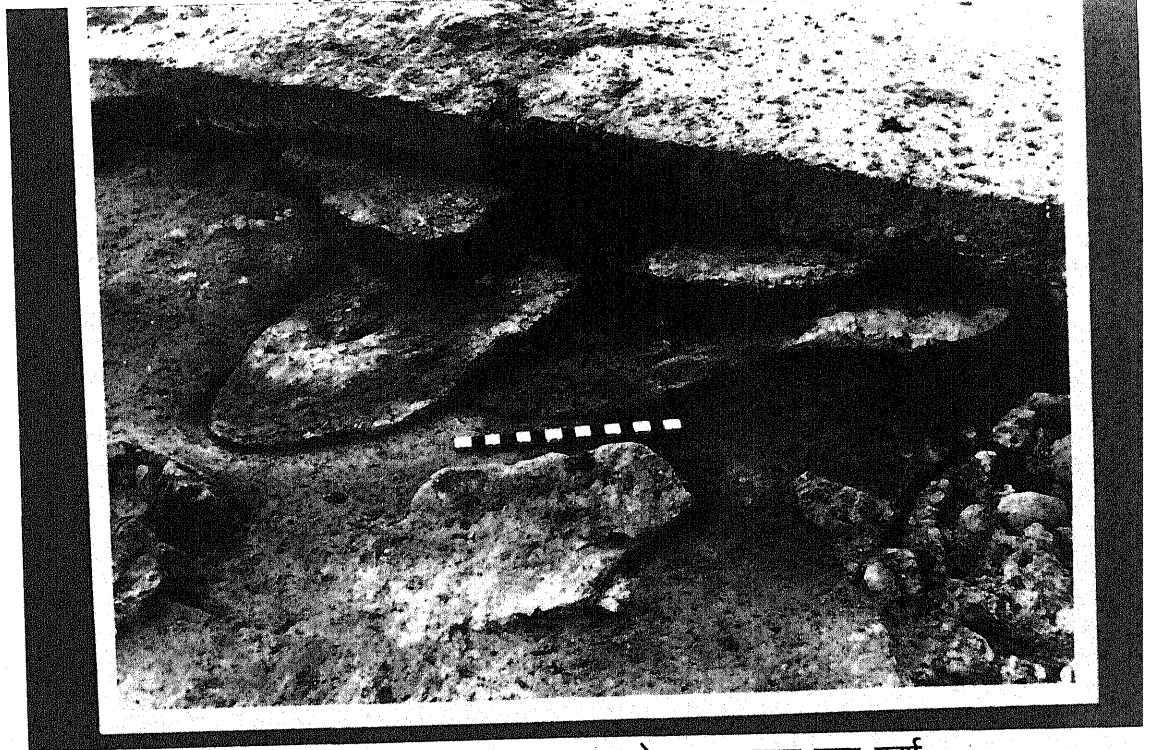
छायाचित्र : 17 दमदमाः जले हुए प्लास्टर युक्त फर्श
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

आधार पर इन शवाधानो को 9 उपकालो मे विभाजित किया गया है इन शवाधानो का विवरण तालिका 3 मे दिया गया है ।

तालिका 3 दमदमा से प्राप्त मध्य पाषाणिक मानव के अवशेष

उपकाल	ग्रेव न0	शवाधान	दिक्स्थापन	लिग	आयु	वर्ष	सन्दर्भ
I	XII	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1985	पाल 1992a 43, पाल 1992c 61
II	XXVIII	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरूष	वयस्क प्रौढ	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986 87 84, पाल 1992a 43 पाल 1992c 62
III	XVI	युग्म शवाधान	पश्चिम–पूर्व	पुरूष	वयस्क	1985	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XVII	एकल	पूर्व–पश्चिम	पुरूष	वयस्क	1985	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XL	–	–	–	–	उत्खानन नही किया गया	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
IV	XI	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरूष	वयस्क	1984	वर्मा और अन्य 1985 50, *आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
V	XX	युग्म शवाधान	पश्चिम–पूर्व	स्त्री पुरूष	युवा वयस्क वयस्क	1986	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 83, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
VI	XXII	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरूष	युवा वयस्क	1986	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	X	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1984	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XV	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1985	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	IX	–	–	–	–	1984 डिस्ट्र्ब	वर्मा और अन्य 198' 48, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
VII	XIV	एकल	पश्चिम–पूर्व	–	–	1985	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XXVII	एकल	उत्तर–पश्चिम दक्षिण–पूर्व	पुरूष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986 87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
VIII	II	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरूष	वयस्क	1983	वर्मा और अन्य 1985 48, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	IV	एकल	पश्चिम–पूर्व	–	–	1984	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62

फेज	ग्रेव न0	शवाधान	दिकस्थापन	लिग	आयु	वर्ष	सन्दर्भ
	V	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1984	वर्मा और अन्य 1985 48, पाल 1992a 43
	VI	युग्म शवाधान	दक्षिण–उत्तर	स्त्री पुरुष	वयस्क	1984	वर्मा और अन्य 1985 48, पाल 1992a 43
	VII	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	युवा वयस्क	1984	वर्मा और अन्य 1985 48, पाल 1992a 43
	VIII	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरुष	वयस्क	1984	वर्मा और अन्य 1985 48, पाल 1992a 43, पाल 1992c 61
	XVIII	तीन शवाधान	पश्चिम–पूर्व	पुरूष पुरूष स्त्री	वयस्क वयस्क	1985-86	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XXX	युग्म शवाधान	पश्चिम–पूर्व	स्त्री पुरूष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84 पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XXXII	एकल	दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व	पुरूष	युवा वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986 87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XXXIII	एकल	पश्चिम–पूर्व	पुरूष	वयस्क	1987	पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XXXVI	युग्म शवाधान	पश्चिम–पूर्व	स्त्री पुरूष	वयस्क युवा वयस्क	1984	*आई0 ए0 आर0* 1986 87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 62
	XXXVII	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	युवा वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986 87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 63
	XXXIX	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	पुरूष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986 87 84 पाल 1992a 43, पाल 1992c 63
IX	I	एकल	पूर्व–पश्चिम	स्त्री	वयस्क	1983	वर्मा और अन्य 1985 48, पाल 1992a 43, पाल 1992c 63

फेज	ग्रेव न0	शवाधान	दिकस्थापन	लिग	आयु	वर्ष	सन्दर्भ
	III	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1984	वर्मा और अन्य 1985 50, पाल 1992a 43,
	XIII	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1985	पाल 1992c 63
	XIX	एकल	पूर्व–पश्चिम	पुरुष	वयस्क	1986	*आई0 ए0 आर0* 1985-86 48, पाल 1992c 63
	XXI	एकल	पश्चिम–पूर्व	स्त्री	वयस्क	1986	*आई0 ए0 आर0* 1985-86 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 63
	XXIII	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	स्त्री	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43,
	XXIV	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	पुरुष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992c 63
	XXV	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	स्त्री	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992 a 43, पाल 1992c 63
	XXVI	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	स्त्री	युवा वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 63
	XXXVII	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	पुरुष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84,
	XXIV	एकल	दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व	पुरुष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43 पाल 1992c 63
	XXV	एकल	उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम	स्त्री	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992 a 43, पाल 1992c 63
	XXXI	एकल	पश्चिम–पूर्व	–	–	1987	पाल 1992 a 43
	XXXIV	एकल	दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व	पुरुष	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43
	XXXV	एकल	पश्चिम–पूर्व	–	वयस्क	1987	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 63
	XLI	–	–	–	–	उत्खनन नही किया गया	*आई0 ए0 आर0* 1986-87 84, पाल 1992a 43, पाल 1992c 63

इन शवाधानो मे 5 शवाधान (शवाधान स0 VI, VVI, XX, XXX, XXXXVI) युग्म शवाधान है (रेखाचित्र 13) और एक शवाधान सख्या (स0 XVII) मे 3 मानव ककाल एक साथ दफनाये गये थे । एक युग्म शवाधान (स0 VI) मे पुरूष और नारी को एक दूसरे के विपरीत दिशा मे रखकर दफनाया गया है (रेखाचित्र 14 छायाचित्र 19)। शेष शवाधानो मे एक–एक मानव ककाल दफनाये हुए मिले है (रेखाचित्र 15)। अधिकाश शवाधानो को पश्चिम–पूर्व दिशा मे (सिर पश्चिम तथा पैर पूर्व दिशा मे) पीठ के बल सागोपाग लिटाकर दफनाया गया था (छायाचित्र 20)। कतिपय शवाधानो का दिक स्थापन इससे भिन्न भी मिला है । ऐसे ककालो के सिर पूर्व अथवा उत्तर या दक्षिण दिशा मे रखे हुए मिले है । अधिकाश मानव ककालो को पीठ के बल सागोपाग लिटाकर दफनाया गया था लेकिन कतिपय ककाल पेट के बल रखकर भी दफनाये गये थे (छायाचित्र 21) । कुछ ऐसे शवाधान भी प्राप्त हुए है जिनमे हाथ और पैर मोड़कर शव को दफनाया गया है (रेखाचित्र 16 छायाचित्र 22)। श्रृग के बने हुए बाण तथा आभूषण और पशुओ की हड्डियॉ अन्तयेष्टि सामग्री के रूप मे रखी हुई मिली है । अधिकाश ककाल वयस्क स्त्री–पुरूषो के थे जिनकी औसत आयु 18–35 वर्ष के बीच आकी गयी है । बच्चो के ककाल यहॉ से नही मिले है ।

दमदमा मे उत्खनन से अधिक सख्या मे लघु पाषाण उपकरण प्राप्त हुए है। प्रमुख उपकरण प्रकारो मे ब्लेड फलक क्रोड माइक्रोब्यूरिन के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के ब्लेड पुनर्गठित ब्लेड समद्विबाहु तथा विषमबाहु त्रिभुज समलम्ब चतुर्भुज विभिन्न प्रकार की खुरचनियॉ छिद्रक चान्द्रिक आदि है (रेखाचित्र 17, 18)। उपकरण निर्माण के लिए प्रयुक्त पत्थरो मे चैल्सिडनी चर्ट, क्वॅाटज, अगेट, कार्नेलियन, आदि का उल्लेख किया जा सकता है (तालिका 4) ।

पाषाण उपकरणो के अतिरिक्त श्रृग के उपकरण तथा मुद्रिकाये प्रमुख है । बलुआ पत्थर के सिल लोढे के टूटे हुए टुकडे, हथौडे, निहाई आदि अन्य प्रमुख पुरावशेष है ।
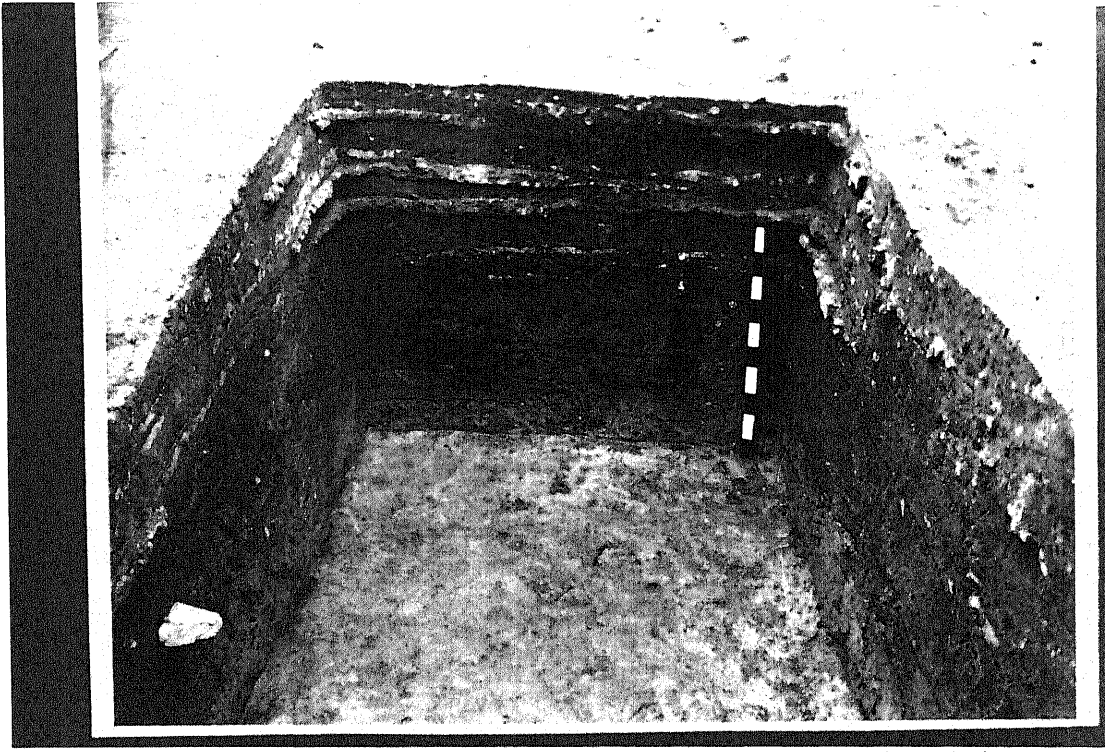
छायाचित्र : 18 दमदमाः अनुभाग में विभिन्न चरणों के जले फर्श के प्रमाण
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
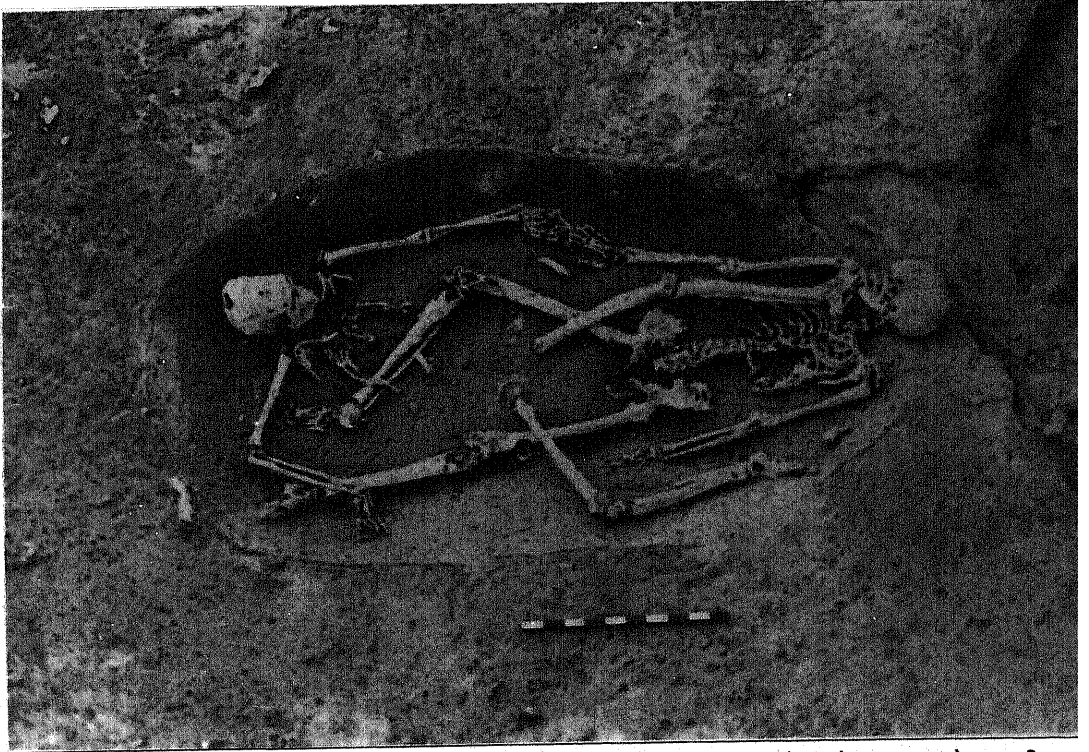
छायाचित्र : 19 दमदमाः विपरीत दिशा में रखकर दफनाये गये पुरुष और नारी का युग्म शवाधान (पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
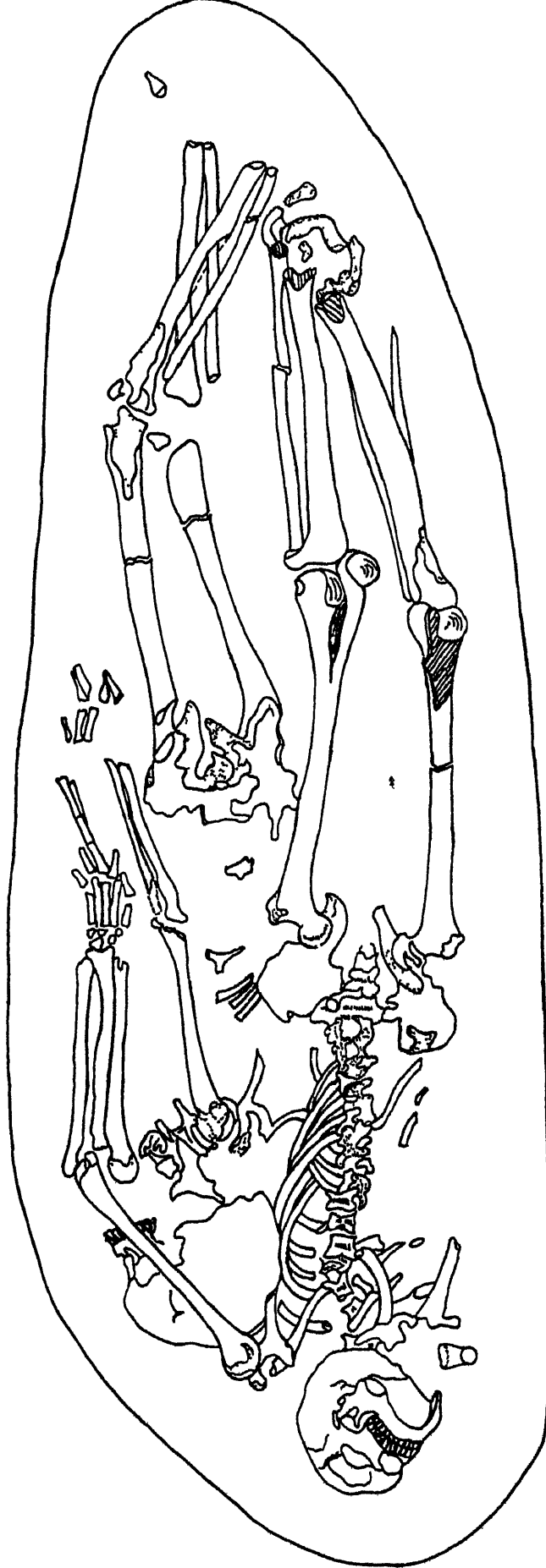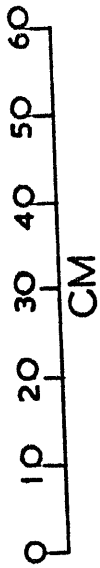
रेखाचित्र 13 दमदमा कब्र का मानचित्र युग्म शवाधान
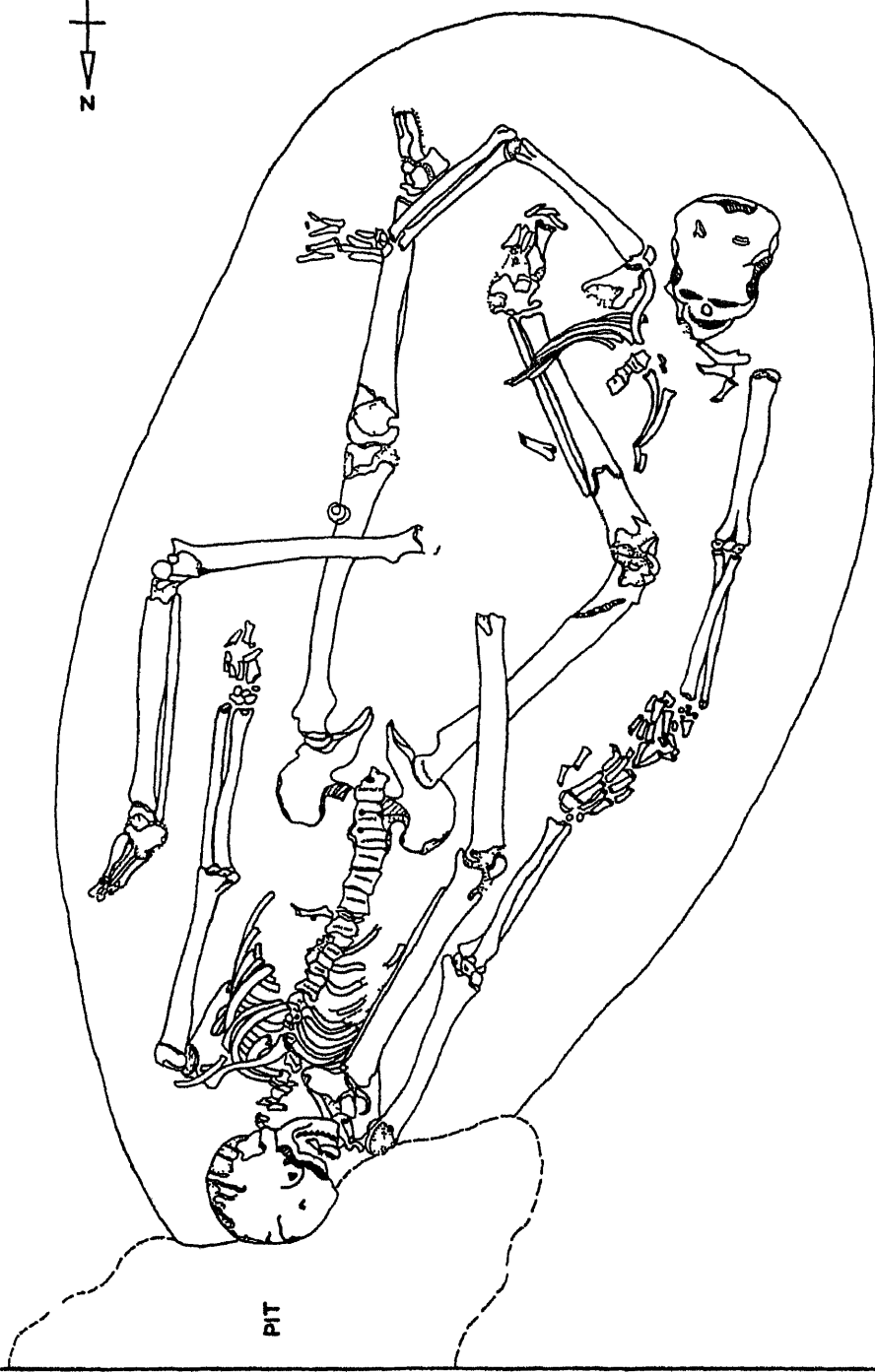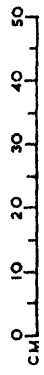
रेखाचित्र 14 दमदमा कब्र का मानचित्र विपरीत दिशा मे युग्म शवाधान
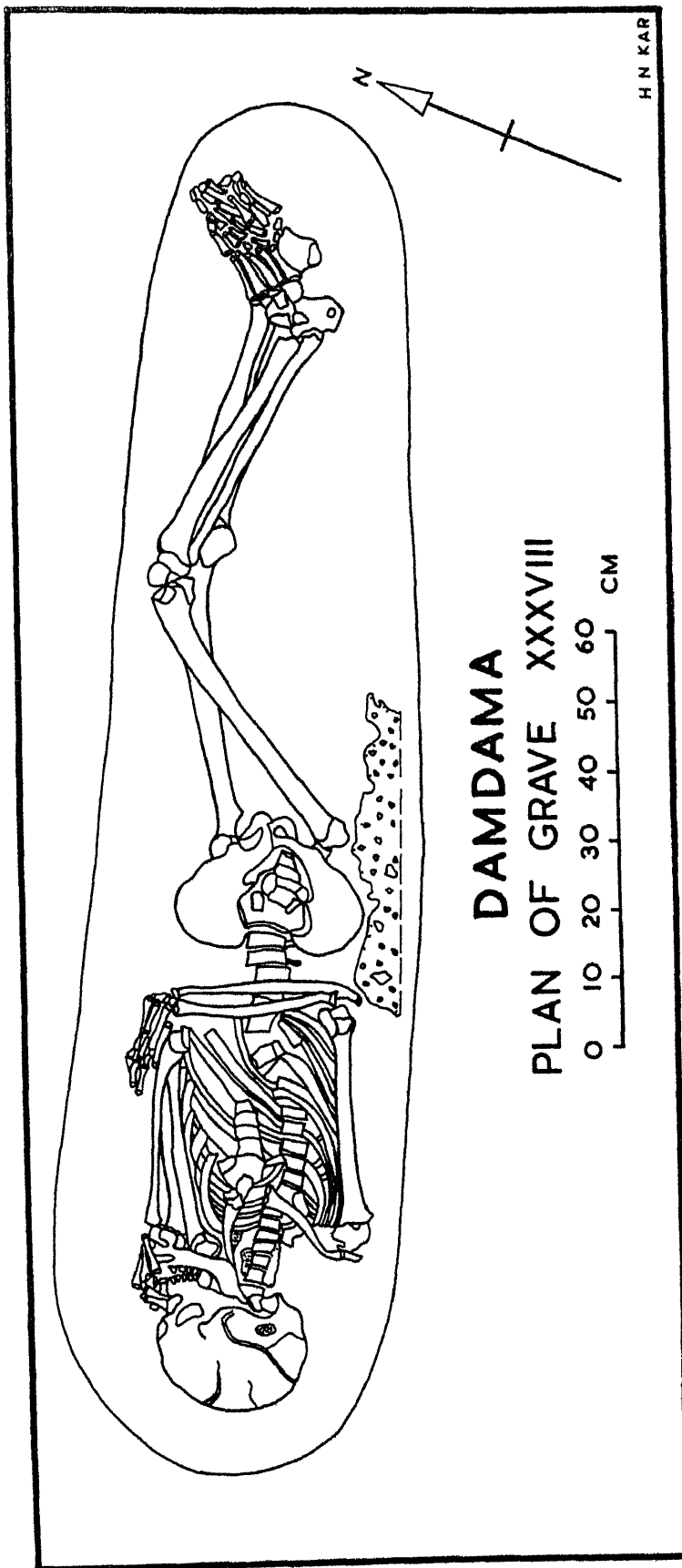
रेखाचित्र 15 दमदमा कब्र का मानचित्र विस्तीर्ण शवाधान
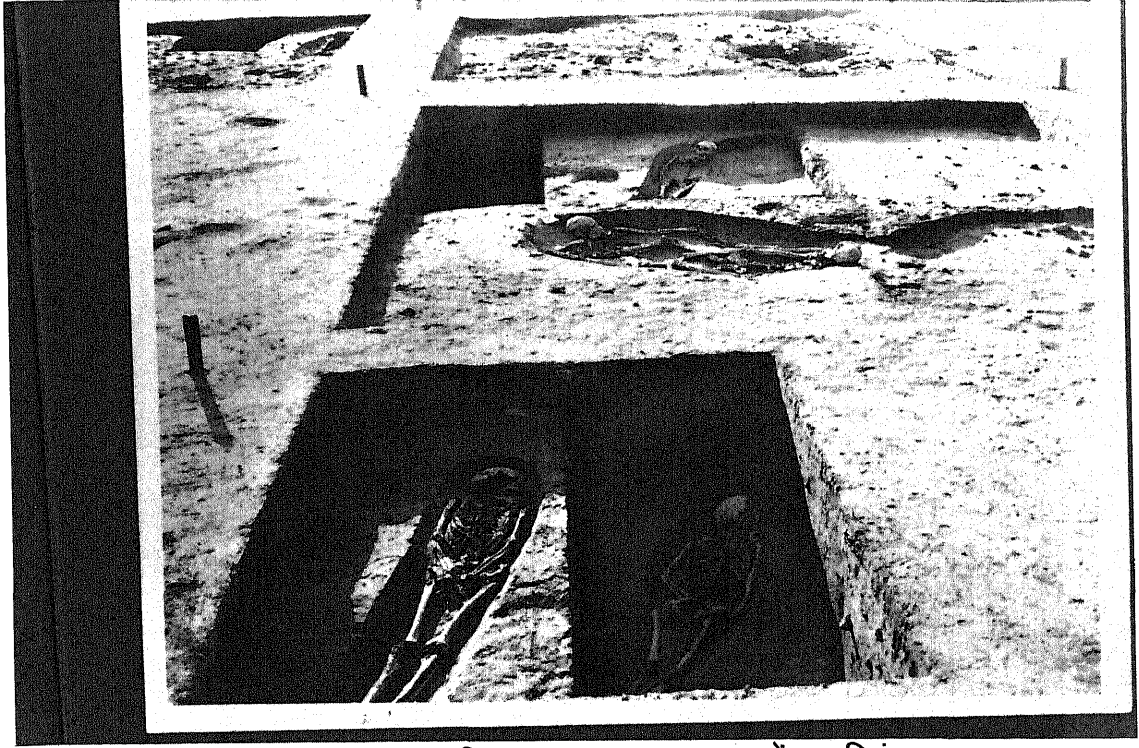
छायाचित्र : 20 दमदमाः शवाधानों का विहंगम दृश्य
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
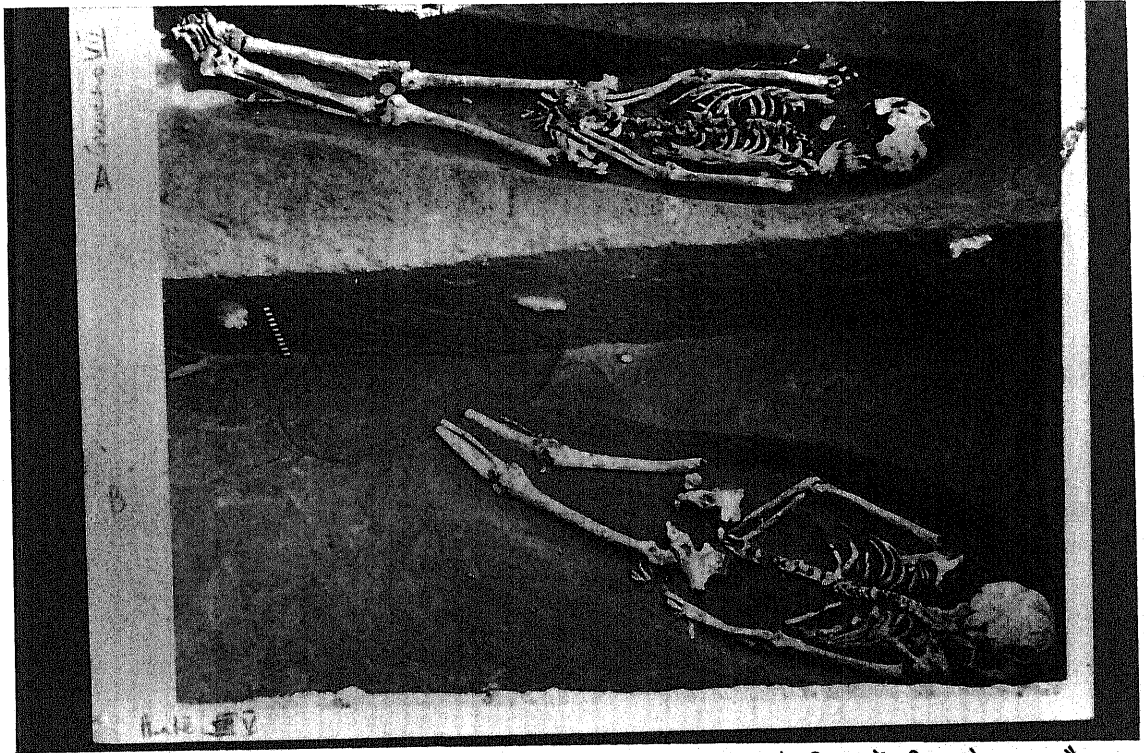
छायाचित्र : 21 दमदमाः विस्तीर्ण शवाधान, ऊपर के चित्र में पीठ के बल और नीचे चित्र में पेट के बल रखकर दफनाये गये कंकाल
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)

रेखाचित्र 16 दमदमा कब्र का मानचित्र मुडे हाथ पैर वाला नर ककाल
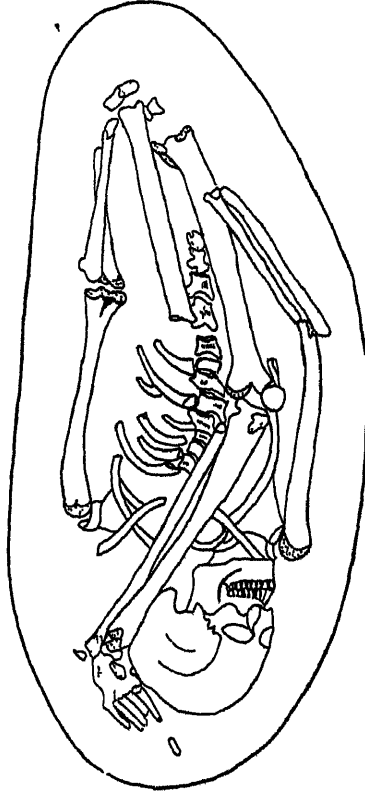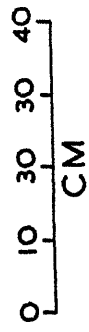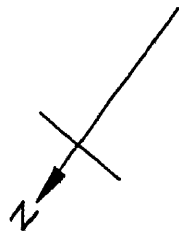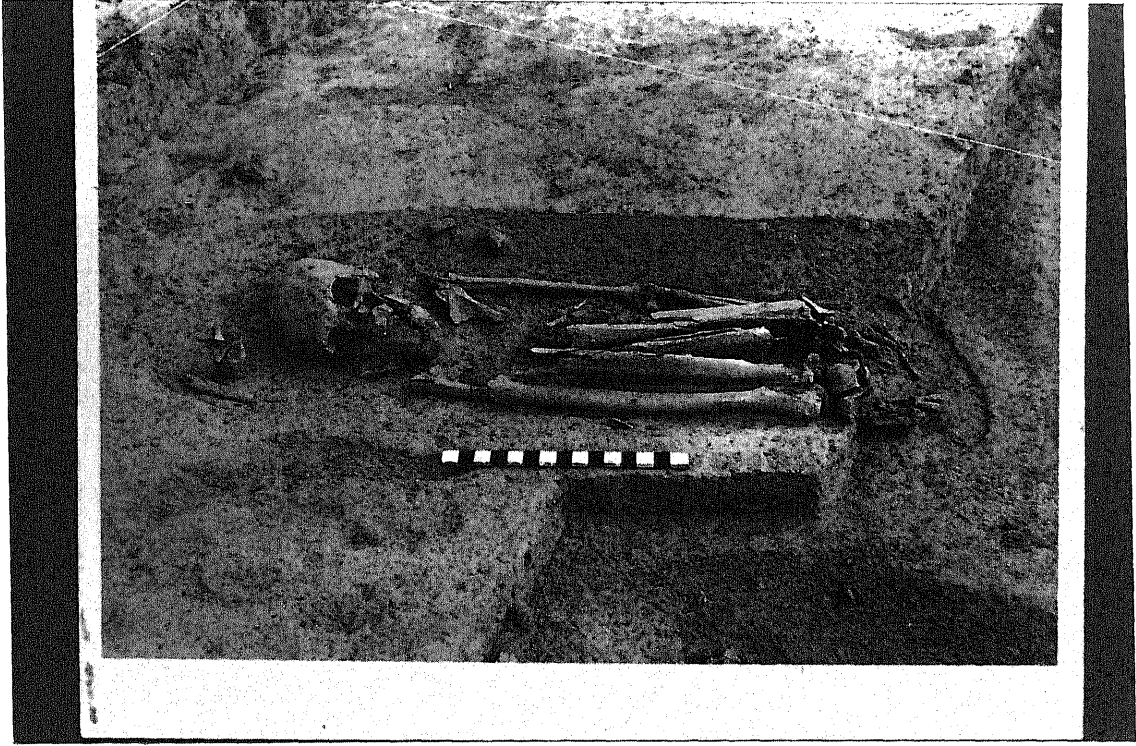
छायाचित्र : 22 दमदमाः हाथ–पैर मोड़कर दफनाया गया कंकाल
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
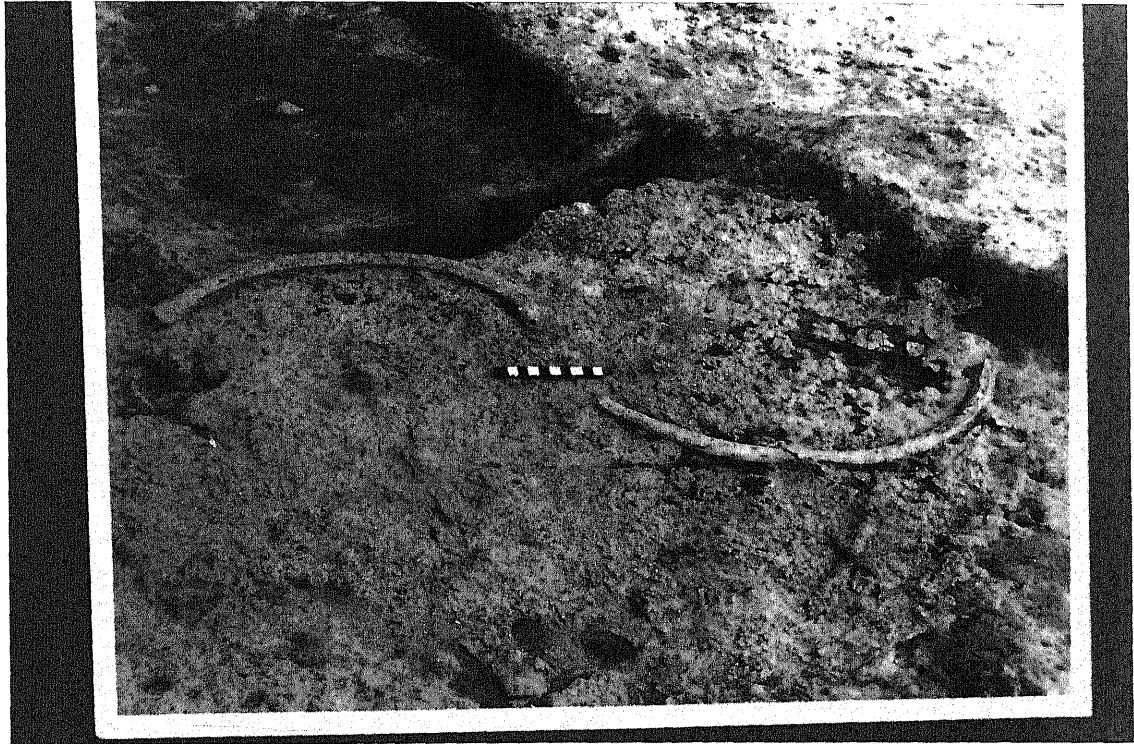
छायाचित्र : 23 दमदमाः उत्खनन में प्राप्त पशुओं की हड्डियाँ (हाथी की पसलियाँ)
(पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सौजन्य से)
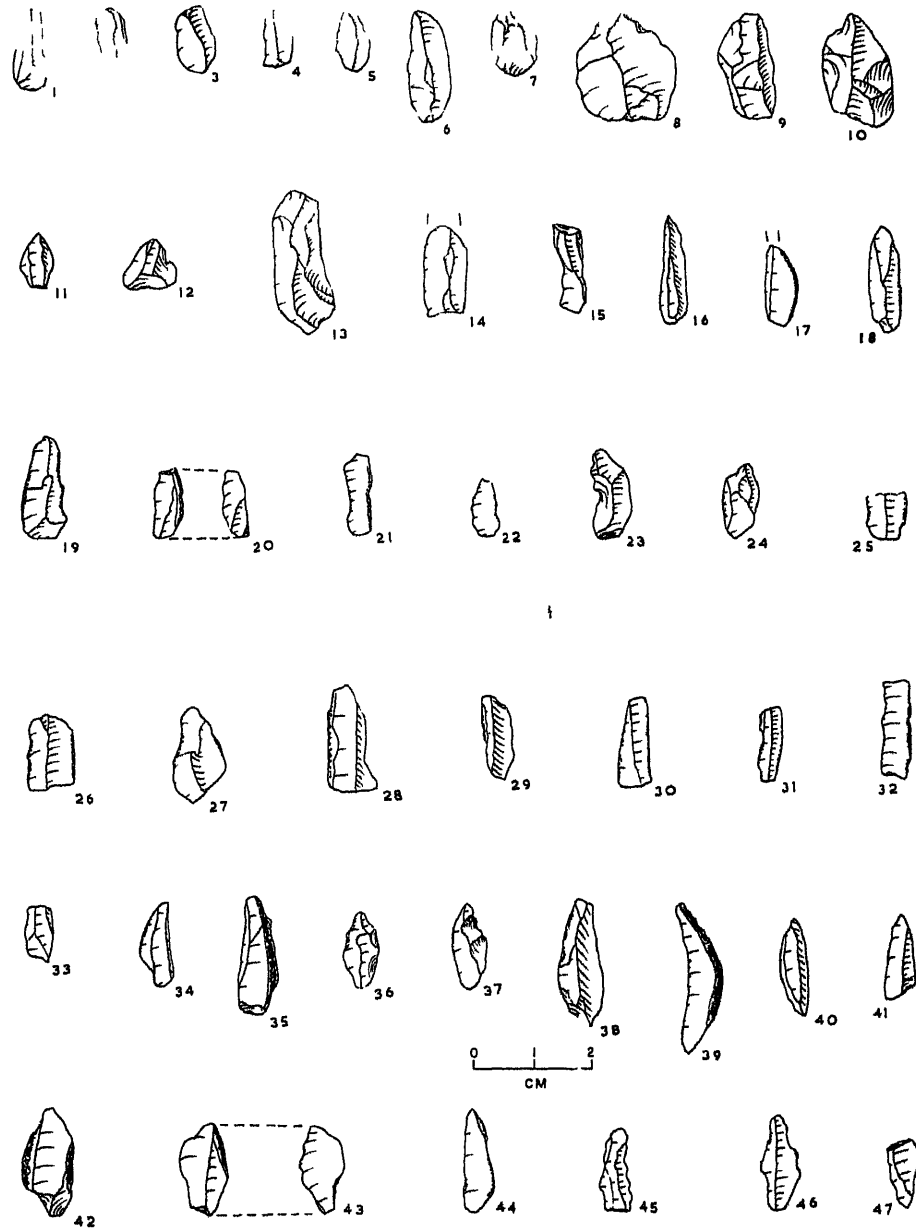
रेखाचित्र 17 दमदमा लघुपाषाण उपकरण
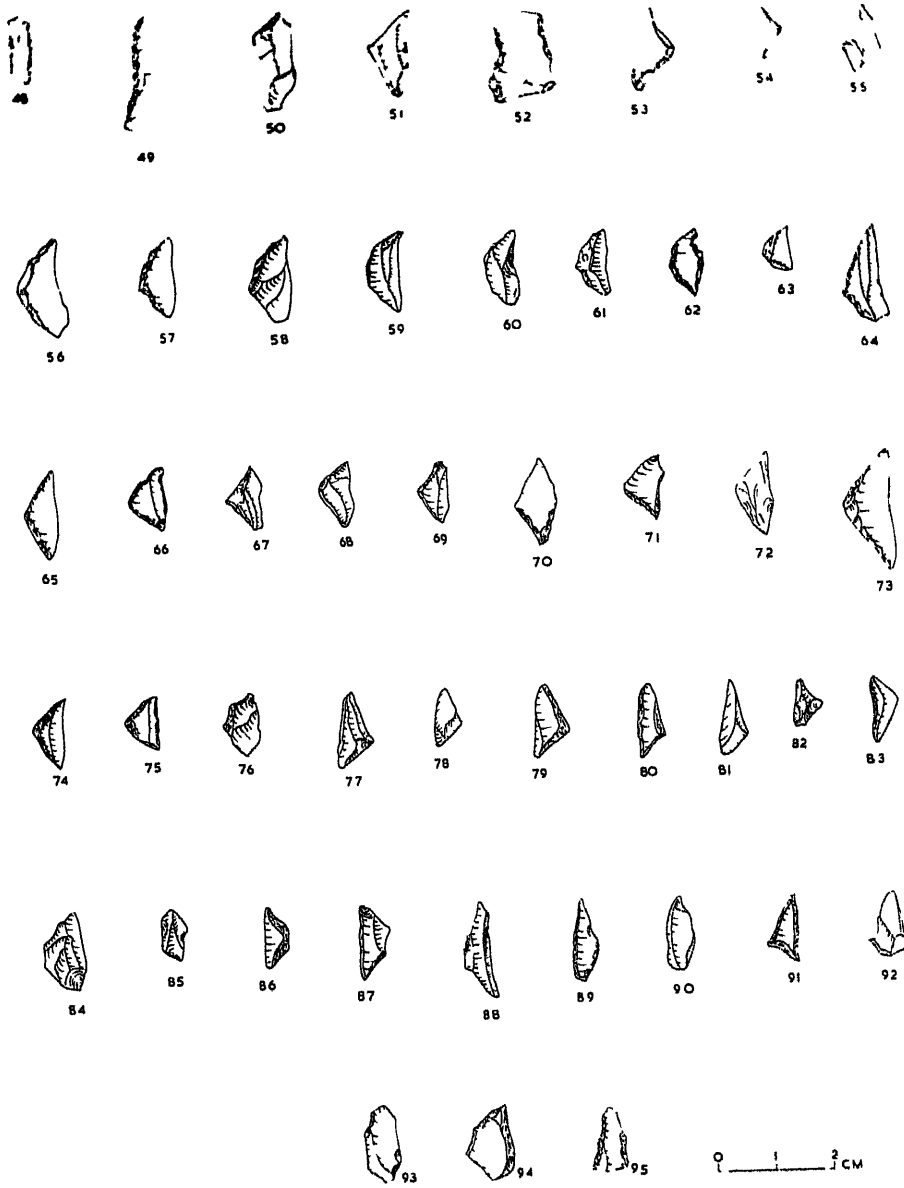
रेखाचित्र 18 दमदमा लघुपाषाण उपकरण

दमदमा मे उत्खनन के दौरान प्राय सभी स्तरो से जानवरो की हड्डियॉ प्राप्त हुई है। उल्लेखनीय है कि सभी हड्डियॉ वन्य पशुओ की हैं (छायाचित्र 23)। पशुओ की हड्डियो के प्रारम्भिक विश्लेषण के आधार पर कहा गया है कि ये हड्डियॉ गैडा चीतल साभर बारहसिघा तथा जगली सुअर आदि की है (थामस और अन्य 1995 1996)। इस सदर्भ मे उल्लेखनीय है कि लगभग 90% हड्डियॉ जली अथवा अधजली है जो इस बात की ओर सकेत करती है कि मध्य पाषाण युगीन मानव पशुओ का मॉस भूनकर खाता था। पशुओ के अतिरिक्त अनेक पक्षियो तथा मछली कछुआ आदि की हड्डियॉ भी बडी सख्या मे प्राप्त हुई है (पाल 1988 115–122)। वनस्पति के अवशेष के सन्दर्भ मे यहॉ के उत्खनन से प्राप्त बेर की गुठलियो का उल्लेख किया जा सकता है जो उनकी भोज्य सामग्री के विषय मे महत्वपूर्ण सकेत प्रदान करती है (पाल 1994 91–101)।

तालिका 4. दमदमा मे लघुपाषाण के निर्माण मे प्रयुक्त पाषाण प्रकार

स्तर	चैल्सिडनी	चर्ट	क्वार्टज	अगेट	कार्नेलियन	योग
1	1737	750	53	41	7	2588
2	339	97	9	8	2	455
3	159	61	-	3	-	223
4	135	22	-	2	-	159
5	169	15	1	1	-	186
6	99	16	2	3	-	120
7	92	17	1	1	2	113
8	145	47	4	-	1	197
9	81	12	3	1	1	98
10	49	7	1	1	-	58
योग	3005	1044	74	61	31	4197
प्रतिशत	71 85%	24 87%	1 76%	1 45%	0 30%	100%

इस प्रकार दमदमा के उत्खननसे मध्य गगा घाटी की मध्य पाषाण युगीन सस्कृति पर सर्वथा नवीन प्रकाश पडा है। विविध प्रकार के मानव शवाधानो लघु पाषाण उपकरणो पशुओ के श्रृगो के बने हुए उपकरणो एव आभूषणो मिट्टी के प्लास्टर से युक्त आवास के फर्श गर्त चूल्हो वन्य पशुओ की हड्डियो तथा वनस्पतियो के अवशेषो आदि की दृष्टि से दमदमा का उत्खनन अत्यधिक महत्वपूर्ण कहा जा सकता है।

प्रो0 आर0 के0 वर्मा ने मध्य पाषाणिक स्थलो से प्राप्त सिल–लोढो चल्हो और शवाधानो के आधार पर इन स्थलो के मध्य पाषाणिक जनसख्या का अनुमान लगाने का प्रयास किया है (वर्मा 2000 1–6)।

डॉ0 जे0 एन0 पाण्डेय ने भी दमदमा के उत्खनन से प्राप्त साक्ष्यो के आधार पर मध्य पाषाणिक मानव की जनसख्या का अनुमान लगाने का प्रयास किया है। इस स्थल के प्रत्येक चरण मे मध्य पाषाणिक मानव द्वारा प्रयुक्त क्षेत्र की गणना करके कुछ निष्कर्ष निकाले गये है। इस स्थल का कुल उत्खनित क्षेत्र 350 85 वर्ग मीटर है। एस0 एफ0 कुक और आर0 एफ0 हाइजर (1968) के सूत्र के प्रयोग करने पर यह जनसख्या 40 या 41 व्यक्तियो की होगी। विभिन्न चरणो के शवाधानो के आधार पर जनसख्या वृद्धि को तीन वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है। प्रथम से चतुर्थ चरण पहले वर्ग के अन्तर्गत आते है जब जनसख्या वृद्धि–दर कम और जनसख्या का घनत्व भी निम्न था। पॉचवा चरण दूसरे वर्ग मे है जिनमे सतत जनसख्या वृद्धि का एक छोटा उदाहरण है और छठे चरण के अन्तिम वर्ग मे जनसख्या के घनत्व मे तीव्र अवनति के प्रमाण मिलते हे।

दमदमा के उत्खनन से प्राप्त हुए पुरापुष्प तथा वनस्पतियो और खाद्य पदार्थो के विषय मे कुछ अध्ययन एम0 डी0 कजाले (1996) ने किया हे और कुछ बीरबल साहनी इन्स्टीटयूट आफ पैलियोबाटनी के के0 एस0 सारस्वत कर रहे है।

दमदमा के नर ककालो की हड्डियो से दो ए0 एम0 एस0 कार्बन–14 तिथियॉ प्राप्त हुई है (लुकास और अन्य 1996 301–311), जो इस प्रकार है

8 640±65 B P और 8 865±65 B P इन तिथियो के आधार पर यहाँ की मध्य पाषाणिक सस्कृति को लगभग 7000 ई0पू0 का समय दिया जा सकता है।

दमदमा महदहा और सरायनाहर राय के मध्य पाषाणिक मानव सामान्यत 1 80 मीटर लम्बे थे जिन्हे डोलिकोसेफलिक प्रजाति से सम्बन्धित किया गया है। हाथ पैर की हड्डियो के दोनो सिरो और कपाल के अस्थिकरण के आधार पर विभिन्न नर ककालो को 17 से 35 वर्ष की आयु के बीच रखा गया है। महदहा मे बच्चो के अतिरिक्त लगभग 50 वर्ष के एक वृद्धा का ककाल भी प्राप्त हुआ है। तत्कालीन जीवन की दुरूहता सभवत मानव को अधिक दिनो तक जीवित नही रहने देती थी। जैसा कि पहले कहा गया है, कि दमदमा के ककालो का अध्ययन ओरेगन विश्वविद्यालय के भौतिक नृतत्व शास्त्रविद् प्रो0 जान0 आर0 लुकास कर रहे है।

इन स्थलो पर आवास और समाधियाँ एक दूसरे से काफी नजदीक एक ही क्षेत्र मे थे (पाल 1994 91—101)। जहाँ पर लोग निवारा करते थे वही पर अपने मृतको के लिए समाधियाँ बनाते थे। उपर्युक्त तीनो स्थलो से प्राप्त गर्त चूल्हे गोल अथवा अण्डाकार है। इन चूल्हो मे कभी—कभी गीली मिट्टी का लेप भी किया जाता था। सभवत लेपयुक्त गर्त चूल्हो मे माँस पिण्ड रखकर उसके ऊपर घास—फूस रख दिया जाता था और मिट्टी के टुकडो से ढक कर आग लगा दी जाती थी। यही कारण है कि इन चूल्हो मे जली हड्डियाँ और राख के अतिरिक्त जली मिट्टी के टुकडे भी प्राप्त हुए थे। सरायनाहर राय मे एक चूल्हे को दो बार खोदकर प्रयोग करने के प्रमाण मिले है (शर्मा 1973 129—156)। अत निष्कर्ष निकाला गया है कि इस स्थल पर मध्य पाषाणिक मानव कम से कम दो बार रहने के लिए आया था।

उल्लेखनीय है कि महदहा से लघुपाषाण उपकरण सरायनाहर राय और दमदमा की अपेक्षा कम प्राप्त हुए है (शर्मा और अन्य 1980)। इस कमी को पूरा करने के लिए ही सभवत महदहा मे हड्डियो के उपकरण अधिक सख्या मे बनाये गये है। हड्डी के बने उपकरणो मे बाणाग्र, नोक खुरचनी आरी रूखानी आदि

उल्लेखनीय है। हड्डियो के बने बाणाग्रो का भारत मे प्राचीनतम प्रमाण महदहा के उत्खनन से ही प्राप्त हुआ है।

बलुआ पत्थर पर बने सिल–लोढे हथ गोले आदि भी महदहा से अधिक मात्रा मे उपलब्ध हुए है। सिल–लोढो की उपलब्धि से प्रतीत होता है कि मनुष्य अब जगली घासो को पीस कर खाने लगा था। महदहा के आवास–समाधि क्षेत्र मे कुछ ऐसे गर्त प्राप्त हुए है जिनमे गीली मिट्टी का मोटा लेप लगाया है। इनमे कभी–कभी लेप की गई परते भी प्राप्त होती हैं। चूँकि इन गर्तो मे न तो राख मिलती है और न तो जली हुई हड्डियॉ तथा न जली हुई मिट्टी के टुकडे, इससे सम्भावना यही है कि इन गर्तो मे खाने योग्य जगली घासो के बीज सग्रहीत किये जाते थे। जब इनका लेप खराब होने लगता था तब उन्हे पुन लीप दिया जाता था और गर्त मे आग जलाकर उसे पुख्ता बनाया जाता था। दमदमा और महदहा के लघु पाषाण उपकरण भी सरायनाहर राय की तरह चर्ट चैल्सिडनी कार्नेलियन अगेट और जैस्पर पत्थरो पर बने है। उपकरण प्रकारो मे समानान्तर बाहु वाले ब्लेड, नोक, खुरचनी तक्षणी त्रिभुज और समलम्ब चतुर्भुज सम्मिलित है।

सराय नाहर राय से समलम्ब चतुर्भुज नही मिले है। विन्ध्य क्षेत्र मे लेखहिया (मिश्र 1977 53) बघहीखोर (वर्मा 1987) और चोपनीमाण्डो के उत्खनन से इस बात के प्रमाण मिले है कि समलम्ब चतुर्भुज (शर्मा और अन्य 1980) का ज्ञान मनुष्य को त्रिभुज के बाद हुआ। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि महदहा और दमदमा की मध्यपाषाणिक सस्कृति सरायनाहर राय के बाद की है । सरायनाहर राय से सिल लोढे हड्डियो के बाणाग्र तथा आभूषण आदि न मिलना भी महदहा को उसके बाद का प्रमाणित करता है। विन्ध्य क्षेत्र मे जहॉ से इस सस्कृति के लोग पत्थर पिण्ड लेकर जीविका की तलाश मे आये, लोग पहाड की गुफाओ अथवा खुले स्थनो पर रहते थे। वहॉ ये लोग शिलाश्रयो की दीवालो और छतो पर तत्कालीन पशुओ के चित्र, आखेट दृश्य धनुष धारण किये हुए मनुष्यो तथा नृत्य करते पुरूषो और महिलाओ को बनाते थे। जिन रगो से ये चित्र बनाये गये है उनके प्रमाण गेरू पिण्डो के रूप मे शिलाश्रयो के उत्खनन से प्राप्त हुए है। इस सस्कृति के गगाघाटी के स्थलो पर शिलाश्रयो के अभाव मे उनकी कलात्मक

अभिरूचि के कोई प्रमाण नही मिलते लेकिन घिसे हुए गेरू के टुकडे प्राप्त हुए हैं। इन गेरू पिण्डो से निकले रग का प्रयोग कहॉ किया जाता था इसका कोई पुरातात्विक प्रमाण हमारे पास नही है। सभव है मानव चेहरे को अलकृत किया जाता हो या पशुओ की खालो पर चित्र बनाये जाते हो। कुछ हड्डियो के उपकरणो मे रेखाए बनाकर उत्कीर्ण करके अलकृत करने के प्रमाण अवश्य मिले है।

गगाघाटी की मध्यपाषाणिक सस्कृति के कालक्रम निर्धारण हेतु कार्बन तिथियॉ प्राप्त हुई है। सरायनाहर राय से एक रेडियो कार्बन तिथि 8394±110 ई0 पू0 (टी0आई0एफ0आर0 1941) प्राप्त हुई है। अज्यामितीय मध्यपाषाणिक सस्कृति को इसके पहले का और ज्यामितीय मध्यपाषाणिक सस्कृति को इसके बाद का समय दिया जा सकता है। विन्ध्य क्षेत्र के लेखाहिया से दो कार्बन तिथियॉ 1710±110 ई0 पू0 और 2410±110 ई0 पू0 प्राप्त हुई है (अग्रवाल 1974 60) इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि गगा घाटी मे भी यह सस्कृति सभवत 2000 ई0 पू0 तक चलती रही। दमदमा से अभी हाल ही मे दो ए0 एम0 एस0 कार्बन तिथियॉ (लुकास और अन्य 1996 301–311) प्राप्त हुई है जो इस प्रकार है–

8640±65 B P (G X- 20829- AMS)

8865±65 B P (G X- 20822- AMS)

इस आधार पर सरायनाहर राय से प्राप्त तिथि के अधार पर मध्यपाषाण सस्कृति के प्रारम्भ को 8000 ई0 पू0 तक ले जाया जा सकता है।

जीविका का प्रारूप

मध्यपाषाण काल मे मानव जनसख्या की मध्यगगा घाटी मे भी अभिवृद्धि हुई जैसा कि उत्तर पूर्व विन्ध्य एव समीपवर्ती मध्य गगाघाटी क्षेत्र मे बडी सख्या मे स्थित स्थलो से पता चलता है। जनसख्या वृद्धि का कारण प्रौद्योगिकी मे अभिनव परिवर्तन तीर–धनुष का व्यापक प्रयोग एव खाद्य ससाधनो की प्रचुर उपलब्धता थी।

तालिका 5 गागेय मैदान और विन्ध्य क्षेत्र से प्राप्त मध्यपाषाणिक कार्बन तिथियॉ

पुरास्थल का नाम	प्रयोगशाला सख्या	5730 ईसा पूर्व	अशसोधित तिथि
बघईखोर	टी0एफ0 187	1670±124 ईसवी	अप्राप्य
बघोर	एस0यू0ए0 1422	3514± 90	1410 ईसा पूर्व– 3795 ईसा पूर्व
बघोर II	पी0आर0एल0 715	6385± 227	अप्राप्य
लेखहिया	टी0एफ0 419	2415± 113	3035 ईसा पूर्व– 2780 ईसा पूर्व
लेखहिया	टी0एफ0 417	1715±108	2135 ईसा पूर्व– 1755 ईसा पूर्व
लेखहिया	जी0एक्स 20983–ए0एम0एस0	6420±75	
लेखहिया	जी0एक्स 20984–ए0एम0एस0	6050±75	
महदहा	बी0एस0 136	2180±124	2675 ईसा पूर्व – 2515 ईसा पूर्व
महदहा	बी0एस0 138	2005±134	2550 ईसा पूर्व – 2125 ईसा पूर्व
महदहा	बी0एस0 137	1015±258	1385 ईसा पूर्व – 815 ईसा पूर्व
दमदमा	जी0 एक्स0 20829–ए0एम0एस0	6690±65	
दमदमा	जी0 एक्स0 20822–ए0एम0एस0	6915±65	
सरायनाहर राय	टी0एफ0 1356/59	995±124	1140 ईसा पूर्व – 865 ईसा पूर्व
सरायनाहर राय	टी0एफ0 1104	8400±113	अप्राप्य

उत्तर–पूर्व विन्ध्य एव मध्य गगाघाटी की मध्य पाषाणकालीन सस्कृति के अध्ययन करने हेतु पुरातात्विक साक्ष्य तीन श्रेणियो मे विभाजित किये जा सकते है–

(1) उपकरण सम्बन्धी साक्ष्य।

(2) जीव–जन्तु सम्बन्धी साक्ष्य मुख्यतया खुदाई मे प्राप्त जानवरो की हड्डियो एव शिलाश्रयो मे की गयी चित्रकारी के आधार पर और

(3) वनस्पति सम्बन्धी साक्ष्य।

उपलब्ध लघुपाषाण उपकरण मे कई उपकरण प्रकारो का प्रयोग शिकार मे होता था। उत्तर–पूर्व विन्ध्य के मध्यपाषाण सस्कृति मे बहुत अल्पवनस्पति सम्बन्धी साक्ष्य उपलब्ध है। उत्तर–पूर्व विन्ध्य के शिलाश्रयो मे सर्वाधिक प्राचीन चित्रकारी मध्यपाषाण काल के आखेटक और सग्रहक समुदाय से सम्बन्धित है। जहॉ तक वनस्पति साक्ष्यो का सम्बन्ध है बेलन घाटी मे चोपनीमाण्डो के अन्तिम चरण से जगली चावल के कार्बनयुक्त अवशेष प्राप्त हुए है।

मध्यपाषाण कालीन लोगो को गगाघाटी ने मुख्यत स्थलीय, जलीय एव पक्षी आदि खाद्य ससाधनो ने आकर्षित किया। बडी सख्या मे पत्थर एव हड्डी के औजारो के अलावा सिल और लोढे के टुकडे भी उत्खनन मे मध्यपाषाण कालीन स्थलो से मिले है। जानवरो की हड्डियॉ कई प्रजाति के जगली पशुओ के सकेत करती है। हड्डियो पर कटे एव जले होने के निशान सकेत करते है कि इनका भोजन के लिए प्रयोग होता था। वनस्पतीय साक्ष्य महदहा एव दमदमा मे प्राप्त होते है। जिनमे छोटे गोल दाने (Millet) जगली घासो के खाद्य दाने है (काजले 1990, 1996)। डा0 के0 एस0 सारस्वत को कुछ धान के अवशेष भी मिले है लेकिन उनका विवरण अभी प्रकाशित नही है।

उत्तर–पूर्व विन्ध्य के मध्यपाषाण कालीन स्थलो मे वनस्पतीय अवशेषो की अनुपस्थिति तथा मध्य गगाघाटी के तीन खुदे हुए स्थलो मे वनस्पतीय साक्ष्यो की उपस्थिति मध्यपाषाण कालीन सस्कृतियो के दो विभिन्न पारिस्थितिकीय क्षेत्रो मे दो भिन्न जीविका–प्रारूपो की ओर सकेत करती है। उत्तर–पूर्व विन्ध्य के स्थलो–मोरहनापहाड, बघईखोर लेखहिया और भदहवॉ पहाडी मे वनस्पतीय साक्ष्यो के विषय मे सूचना का अभाव है। केवल चोपनीमाण्डो से जगली धान के अवशेष मिले है। 2002 मे इन्स्टीटयूट ऑफ आर्क्योलोजी लन्दन कालेज, लन्दन के डॉ0 डोरियन क्यू0 फुलर, प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद

विश्वविद्यालय के डॉ0 जे0 एन0 पाल और डॉ0 एम0 सी0 गुप्ता के साथ फ्लोटेशन तकनीक कुछ जगली घासो के बीज (Millet) प्राप्त हुए है। यह सकेत किया जा सकता है कि बघईखोर एव लेखहिया मे मानव ढाचे के सुरक्षित अवशेष पाये गये है। जानवरो की हड्डियो का अभाव केवल स्थलो के मिट्टी के रासायनिक गुणो के कारण ही नही हो सकता अपितु यह भी हो सकता है कि उत्तर–पूर्व विन्ध्य मे रहने वाले मध्य पाषाण कालीन लोग शिकार करने वालो के बजाय इकटठा करने वाले रहे हो। खाद्य इकटठा करने के साथ–साथ वे मछली पकड़ने तथा चिडियो एव जानवरो का शिकार भी करते रहे होगे । यह विश्वास करने के पर्याप्त कारण है कि उत्तर–पूर्व विन्ध्य के मध्य पाषाण कालीन लोगो के जीविका प्रारूप मे वनस्पतीय ससाधनो ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी होगी। माइक्रोवियर विश्लेषण से भी इसी तरह के निष्कर्ष निकले है (पाल 1996)।

उत्तर–पूर्व विन्ध्य क्षेत्र और मध्य गागेय मैदान मे जीविका का प्रारूप

वनस्पतीय आकडो की अपर्याप्तता के कारण प्रागैतिहासिक खाद्य का प्रारूप परिस्थतिकीय स्रोतो के आधार पर अनुमानित की जा सकती है। इस क्षेत्र मे आदिम जनजातियो के अध्ययन से भी आखेटक सस्कृति का पुनर्निमाण किया जा सकता है (क्रुक और हाइजर 1968 क्रुक 1896 चक्रवर्ती और मुखर्जी 1971)। मालती नागर ने वर्तमान समय के मध्य भारत के जनजातियो का समकालीन जातियो का अध्ययन कर ससाधनो की प्रचुरता, प्राप्यता एव वितरण का अनुमान किया है (नागर 1997 नागर और मिश्र 1989 66–78, 1990 असारी 2001)। उनके अनुसार जिनको शर्मा और क्लार्क ने उदधृत किया है, मध्य प्रदेश के रायसेन एव बस्तर जिले के भीमबेटका क्षेत्र की जनजातियॉ कभी भी 67 जगली वनस्पति प्रजाति का उपयोग भोजन हेतु करते है। इनमे 8 पत्तियॉ, 7 फूल 30 फल, 4 बीज तथा 18 कद, अकुर एव जड सम्मिलत है। शायद ही किसी माह मे जगली पौधो के ससाधन दोहन हेतु उपलब्ध न होते होगे। मानसून के सम 19 प्रजातियॉ 3 पत्ते एक फूल आठ फल तथा 7 कद प्राप्त होते है जाडे मे 22 प्रजातियॉ एक पत्ता एक फूल, 15 फल एव सात कद प्राप्य है एव ग्रीष्म के 23 प्रजातियॉ दो पत्ते, 4 फूल, 11 फल 1 बीज 3 कद एव एक गोद प्राप्य है।

उत्तर–पूर्व विन्ध्य क्षेत्र मे वर्षा ऋतु मे बडी सख्या मे जगली पत्तियॉ फूल फल कन्द आज भी प्राप्त होते है एवम् जगली लोग कच्चा तथा पकाकर इनका सेवन करते थे। इनमे चौलाई की पत्ती चकौडा बडा साग (बन साग) भुच्ची चेच कनकौआ लेहसुआ एव बनकारी आदि के फूल तथा पत्तियॉ पडोरा के फल सतावर के कद (अस्परागस रेसेमस) जगली सुरक्षित मुसानी (पोर्डलाका टयूबरोसा रोक्सव) सेमलकन्द, विस्मातिया अमलोह कद कामराज शुलखादी केसर गोद (नागर मोथा) आदि सम्मिलित है। छिउल पौधो की कोमल जडो एव खजूर के ऊपरी छिलको का भी सेवन अवसर पडने पर वर्षा ऋतु मे किया जाता था।

इस क्षेत्र मे शरद ऋतु मे प्राप्य मुख्य जगली फल है – आवला (फिलायस इठिलका), इमली (रैमिरिडस सेमिआरिया रोक्सब) सीताफल (अन्ना स्कवेमोसा) मकोई (सोलानम निग्रम) एव सेघा अथवा सेधिया। नवम्बर–दिसम्बर मे बथुआ प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध रहता है। जाडे मे झरबेर कुछ हद तक सहायक खाद्य सामग्री का काम करता है। झरबेर घनी काटेदार झाडियो की रचना करते है। फल अक्टूबर–नवम्बर मे पक जाते है। पके फलो का उपयोग तुरन्त तोडकर भी तथा उन्हे सुखाकर एव सुरक्षित कर ग्रीष्म एव वर्षा ऋतु मे खाने हेतु किया जाता है।

ग्रीष्म ऋतु मे महुआ के फूल (बौसिया हौटीफालिया) तेदू, बेल गूलर पीपल बरगद एव खजूर आदि पाये जाते है। ग्रीष्म ऋतु मे खाया जाता है। इस विषय मे उल्लेखनीय है कि महुआ के फूल ग्रीष्म ऋतु का सर्वाधिक महत्वपपूर्ण जगली खाद्य–उत्पाद बहुतायत मे होते है। मार्च–अप्रैल मे फूल आने के समय पेड के पत्ते झड जाते है। महुआ के फूल अनेक प्रकार से खाये जाते है। ताजे फूल कच्चे ही अथवा पकाकर खाये जा सकते है। महुआ के फूलो को सामान्यत सुखाकर एव उनको पीटकर अन्दर की भूसी निकालकर सुरक्षित सग्रह कर लिया जाता है। दाल एव चने के साथ भी इसे पकाया जाता है। फूलो से शराब भी बनायी जाती है। महुआ के फल भी खाने मे स्वादिष्ट होते है। महुआ के कोए से तेल प्राप्त होता है, जोकि प्रकाश मे लिए जलाने अथवा खाने के लिए उपयोग मे लाया जाता है। महुआ के फलो एव फूलो का महत्व प्राचीन जन–जातीय अर्थ–व्यवस्था मे प्रमुख खाद्य के रूप मे महत्वपूर्ण है। इस बात के साक्ष्य है कि

पश्चिमी भारत मे जलवायु प्रारम्भिक नूतन काल मे आर्द्र थी । पश्चिम भारत की तरह नूतन काल के प्रारम्भ मे उत्तर–पूर्व विन्ध्य और मध्य गागेय मैदान मे अधिक वर्षा एव वितरण होता था। वर्षा ऋतु मे वनस्पतियॉ खाद्य की आपूर्ति करते थे तथा पूरक रूप मे शाकाहारी जानवरो का शिकार भी करते थे। चोपनीमाण्डो से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्यो से इस सकल्पना को समर्थन मिलता है। चोपनीमाण्डो मे तृतीय चरण की खुदाई मे पर्याप्त सख्या मे पूर्ण व अपूर्ण गोल पत्थर सिल एव लोढे पाये गये है। इनमे एक या अनेक स्थानो पर प्रयोग के निशान हैं। बारह गोल पत्थरो मे पॉच पूर्ण एव शेष सात टुकडो मे है। इनका बडा महत्त्व है विशेषत यह देखते हुए कि ऐसे प्रमाण अन्यत्र भी मिले हैं। गुजरात मे जघनाज बम्बई के निकट येरगल राजस्थान मे बागोर कर्नाटक मे हुण्सगी–1 और सोरापुर दोआब मे तथा मध्य प्रदेश मे बाघोर–II और घघरिया शिलाश्रय मे पाये गये है। वलय पत्थरो (रिंग स्टोन) का बडी सख्या मे मध्य पाषाणकालीन स्थलो मे पाया जाना तथा पुरापाषाण काल मे उनकी अनुपस्थिति महत्वपूर्ण है। सभवत इनका उपयोग खुदाई करने वाली छडी के भार हेतु होता था। उपलब्ध साक्ष्य सकेत करते है कि मध्य गागेय मैदान और उत्तर–पूर्व विन्ध्य के मध्य पाषाण कालीन लोग खाद्य जडो एव कन्द का सकलन अपने सहायक खाद्य आपूर्ति के रूप मे करते थे।

दक्षिणी उत्तर पद्रेश मे बादा इलाहाबाद, वाराणसी जिलो तथा बडी सख्या मे मध्य पाषाण कालीन भित्ति–चित्रो एव छतो की चित्रकारी से उनकी कलात्मक गतिविधियो का साक्ष्य प्राप्त होता है। मध्य पाषाण कालीन लोगो ने अपने जीने की शैली तथा समकालीन प्राकृतिक वनस्पतियो का एक सुबोध विवरण छोडा है। मध्य पाषाण कालीन लोग मुख्यत लगूर हिरण, सुअर, गाय, गैडा, एव हाथी का शिकार करते थे। शिकारी कभी–कभी मुखौटा पहने रहते थे। तीर–धनुष एव भाले शिकार के प्रमुख अस्त्र थे। उत्तर–पूर्व विन्ध्य की चित्रकला मे जानवरो के शिकार के अलावा शहद एव फल इकटठा करने के दृश्य भी दिखाये गये हैं मछली पकडना तथा पक्षियो का शिकार करना भी दिखाया गया है।

गगाघाटी के मध्यपाषाणिक मानव के खाद्य सामाग्रियो ओर जीवन–यापन के ससाधनो के बारे मे कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष मानव ककालो के रासायनिक परीक्षणो से निकाले गये है।

मध्य गगाघाटी मे स्थित मध्य पाषाणकालीन उत्खनित स्थलो– सराय नाहर राय महदहा तथा दमदमा मे बडी सख्या मे जानवरो की हड्डियो के अवशेष मिलते है। सरायनाहर राय मे ये हड्डियॉ चूल्हो मे एव फर्श पर मिली है जबकि महदहा मे वे चूल्हो के साथ–साथ आवासीय एव समीपस्थ जलीय क्षेत्रो से भी मिली है। खोज के दौरान सम्पूर्ण दमदमा स्थल पर जानवरो की हड्डियॉ मिलती है किन्तु उनका बाहुल्य खुदाई के दौरान पूर्वी क्षेत्र मे ही दिखायी पडता है। यद्यपि सरायनाहर राय से हाथी की पसलियॉ और अन्य हड्डियॉ मिली है तथापि मध्य पाषाण काल के लोगो द्वारा शिकार किये गये जानवर मुख्यतया गोजातीय (बोबिड) एव छोटे शाकाहारी जन्तु थे। जलचर प्रजातियो का प्रतिनिधत्व कछुआ और मछली द्वारा हुआ है। इन सभी जानवरो की हड्डियॉ टूटी हुई एव जली हुई है। अस्थियो के अध्ययन के आलोक मे कहा जा सकता है कि महदहा से विभिन्न प्रकार के पशुओ का प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। इनमे अनेक प्रजातियो के हिरण सुअर एव मासाहारी जन्तु इसके अतिरिक्त कछुआ, मछली एव पक्षियो की हड्डियॉ भी पायी गयी है (थामस और अन्य 1995 29–36 1996 2002)। महदहा मे पाये गये एक जानकर का चर्वणक दॉत एव एक ग्रीवा कशेरूका की पहचान दरियायी घोडे (आलूर 1980 201–227, 1990) से की गयी है। यहॉ से गैण्डे के अस्थि अवशेष भी प्राप्त हुये है।

दमदमा के जन्तु अवशेषो मे हिरण, कछुआ गाय बैल भैस एव पक्षी सम्मिलित है। डा0 आलूर ने जिन हड्डियो के आधार पर भेड–बकरी की पहचान की थी, वे वस्तुत हिरण और अन्य मृगो की है।

इन तीनो स्थलो सरायनाहर राय, महदहा एव दमदमा के जन्तु अवशेषो मे हिरण, सुअर एव गाय बैल एव भैस सामान्य है। हाथी एव गैडा के अवशेष विरल है। महदहा मे मासाहारी जानवरो के कुछ अवशेष भी पाये गये है । कुछ अस्थियो

के बारे मे सकेत मिलते है कि ये दरियाई घोडे के हो सकते है। जन्तु ससाधनो की उपलब्धि के प्रारूप मे परिवर्तन के निर्धारण हेतु जानवरो की हड्डियो की मात्रा के ऑकडे अभी उपलब्ध नही है।

सराय नाहर राय महदहा एव दमदमा के मध्य पाषाण कालीन लोगो द्वारा आखेट किये गये जानवर मुख्यत हिरण प्रजाति (सर्विडस) एव गवल प्रजाति (वोविडस) के है जो व्यापक स्तर पर आखेट का सकेत देते है। बडी सख्या मे हिरण प्रजाति के पशु जगल एव झाडियो के रूप मे जगलो के अस्तित्व का सकेत देते है जबकि गवल प्रजाति के पशु भैसे और गैडो का अच्छा निरूपण अपेक्षाकृत खुले चारागाहो के महत्वपूर्ण भू–भाग का सकेत देते है। वर्तमान स्थापित मत जिसके अनुसार गैडो के लिए जलीय एव जगल आवश्यक है के विपरीत गैडे चारागाही क्षेत्रो मे रह सकते है। हाथी भैस और गैडे की उपस्थिति के आधार पर दलदली भू–भाग का भी अनुमान किया जा सकता है। जलीय एव अपेक्षाकृत शात जल का पर्यावरण कछुये एव मछली द्वारा प्रमाणित होता है। प्रतापगढ जिले की धनुषाकार झीलो का वनस्पति विज्ञान सम्बन्धी अध्ययन इस क्षेत्र मे चारागाही वनस्पति को इगित करता है। हिरण को प्रतिदिन 25 45 किलोग्राम हरे चारे की आवश्यकता होती हे। गाय–बैल को 55 75 किलोग्राम हरे चारे की प्रतिदिन आवश्यकता पडती है। जितने अधिक शाकाहारी पशु होगे उतने ही कम प्राकृतिक चारागाह होगे। तदनुसार मानव अथवा गोजातीय जनसख्या वृद्धि ने एक दूसरे के खाद्य सीमाओ को प्रभावित किया होगा। जे0 एन0 पाण्डेय का मत है कि वर्ष भर उपलब्ध खाद्यान्न ने मध्य पाषाण कालीन लोगो को इस क्षेत्र मे अर्द्ध–स्थाई आधार पर बसने को प्रेरित किया, इसके परिणाम स्वरूप मानव जनसख्या मे वृद्धि हुई एव ससाधनो पर दबाव बढा।

पुरातत्ववेत्ता खाद्य उत्पादक अर्थ व्यवस्थाओ के पर्यावरण एव भूमि पर प्रभाव से परिचित है किन्तु कृषि–पूर्व अवस्था के समय परिवर्तन की सम्भावना की व्याख्या करना आवश्यक है। यह मान लिया जाता है कि मध्य पाषाण कालीन लोगो ने अपनी आदिम सस्कृति के साथ पारिस्थितिकी पर अल्प प्रभाव डाला होगा। हाल मे ब्रिटेन मे कुछ सुझाव दिये गये है कि मध्य पाषाण कालीन लोग

जगलो को जलाने के दौरान जगलो को परिष्कृत कर रहे थे वे मानव एव जानवरो के उपयोग हेतु भी जगलो का विकास कर रहे थे। सरायराय महदहा एव दमदमा मे आग के उपयोग का प्रमाण मिलता है। मध्य गगा घाटी के मध्यपाषाण कालीन लोग जगलो को जलाते थे अथवा नही इसका कोई सीधा प्रमाण नही है । जगलो को ग्रीष्म ऋृतु मे ही जलाया जाता होगा जब पौधो मे रस की वृद्धि नही होती होगी। आग प्राय बडे एव प्रतिरोधी वृक्षो को जलाने मे ही प्रयुक्त होती होगी। जगलो के कृत्रिम सफाई का भी शिकार पर सीधा प्रभाव पडा होगा।

मध्य पाषाण कालीन उत्खनित स्थलो– सराय नाहर राय महदहा एव दमदमा से प्राप्त जानवरो की हड्डियॉ सामान्यतया जगली प्रजातियो से सम्बन्धित है। इसके अलावा जानवरो की हड्डियॉ गुजरात मे लघनाज (सकालिया 1965 एर्थाड और केनेडी 1965) राजस्थान मे बागोर (मिश्र 1973 92–101) तथा मध्य प्रदेश मे आदमगढ (जोशी 1978) के मध्यपाषाण कालीन स्थलो से प्राप्त हुई है। बागोर एव आदमगढ मे जगली एव पालतू दोनो प्रकार के जानवर पाये गये है। बागोर मे जगली जानवरो का प्रतिनिधित्व काला मृग चिकारा चीतल सॉभर खरगोश एव लोमडी करते है, एव आदमगढ मे हिरण, सॉभर खरगोश साही एव घोडा करते है। जगली एव पालतू जानवरो की उपस्थिति से सकेत मिलता है कि मध्य पाषाण कालीन आखेटक तथा खाद्य इकट्ठा करने वाले लोगो की अर्थव्यवस्था पशुचारिता के द्वारा अभिवृद्धि को प्राप्त हुई। बागोर एव आदमगढ के मध्यपाषाण कालीन स्थलो से प्राप्त जानवरो की हड्डियो की सावधानी पूर्वक जाच आवश्यक है। जब हम पश्चिम एशिया के अधिकाश भागो मे पशुपालन का इतिहास देखते है तो हम पुरातात्विक दृष्टि से पाते है कि एक समय अधिकाश स्थलो पर भेड बकरी जन्तु सम्बधी प्रमुख घटक बन गये। कुछ मामलो मे परिवर्तन धीमा रहा होगा। अन्य मामलो मे प्रजातियो का तीव्र परिवर्तन हुआ होगा। कृषि की तुलना मे आखेट के व्यावहारिक निहितार्थों से सम्बन्धित हिग्स एव जारमन (1972) जारमन एव सैक्सन (1972) द्वारा निर्मित बिन्दु उचित है एव आगे भी उनकी गम्भीर जाच पडताल की आवश्यकता है।

मध्य गगाघाटी के मध्य पाषाण कालीन लोगो के वानस्पतिक खाद्य इकटठा करने के विषय मे हमे मुख्यतया खाद्य सामग्री तैयार करने वाले उपकरणो द्वारा लगाये गये अनुमान पर ही आधारित रहना पडता है (वर्मा 2000 1–6)। सराय नाहर राय एव महदहा से कोई वनस्पति अवशेष नही मिला है। प्लवन तकनीक के द्वारा 1983–84 मे दमदमा मे खाद्यान्न के कुछ कार्बनीकृत दाने खोजे गये है। उनकी निश्चित पहचान अभी होनी है। महदहा एव दमदमा मे बलुआ पत्थर के बडे खण्डो का प्रयोग सिल के लिए होता था जिनके अवशेष पर्याप्त मात्रा मे पाये गये है। मध्य गगा घाटी मे पत्थर स्थानीय रूप से नही पाये जाते है। अतएव वहॉ पाये गये सिल और लोढे दक्षिण मे स्थित 100 किलोमीटर दूर प्रभास पहाडियो या उत्तर पूर्व विन्ध्य से लाये गये होगे ऐसी मान्यता है। चूॅकि प्रत्येक पूर्ण सिल का वजन 10 से 15 किलोग्राम होगा एव महदहा तथा दमदमा मे क्रमश 191 एव 141 अवशेष मिले है, अतएव एक यथेष्ट ऊर्जा–निवेश की आवश्यकता पडी होगी।

आर0 बी0 ली और जे0 डी0 वोरे (1968), जे0 येल्लेन एव अन्य द्वारा किये गये नृजातीय शोध प्रदर्शित करते है कि वर्तमान समय के शिकारी तथा खाद्यान्न इकट्ठा करने वाले समुदाय आरामदायक जीवन बिताते है प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन दो से पॉच घटे भोजन की तलाश मे बिताता है एव पौष्टिक तथा भिन्न प्रकार के आहार का आनन्द उठाता है।

आर0 वी0 ली ने दक्षिण अफ्रीका के कुग बुशमेन के सदर्भ मे आकलन किया है कि उनका 65 से 80 प्रतिशत खाद्य वानस्पतिक स्रोतो से प्राप्त किया जाता है। फल फूल जड आदि इकटठा किये गये मुख्य खाद्य हैं खाने मे मॉस की मात्रा प्राय 35 प्रतिशत से अधिक नही होती, यद्यपि कठिनाई से प्राप्त होने के कारण यह प्रमुखता प्राप्त खाद्य है। यह ध्यान देने की बात है कि वर्तमान समय के शिकारी एव खाद्य इकटठा करने वालो के उदाहरण बहुत कम है तथा यह आवश्यक नही है कि वे पहले के भोजन खोजने वाले समुदाय का प्रतिनिधित्व करते है। पुरातात्विक अध्ययन मे नृजातीय नमूनो का उपयोग सावधानी पूर्वक करना चाहिए। हम यह नही मान सकते है कि मध्य पाषाण काल का आखेटक एव खाद्य–सग्राहक पूर्णत आजकल के लोगो की भॉति ही व्यवहार करते रहे होगे।

महदहा को स्थल अवशोषण अध्ययन (Sıte Catchment analysıs) हेतु चुना गया (पाण्डेय 1985)। यह स्थल एक झील के किनारे स्थित है। यहाँ पर खुदाई मे चार चरणो के आवासीय जमाव और कई नर–ककाल मिले है। मध्य पाषाण काल मे यहाँ तीन प्रकार के क्षेत्र उपभोग हेतु उपलब्ध रहे होगे (1) झील (2) झील के दलदली किनारे एव (3) खुले वन स्थल। मध्य पाषाण काल मे झील के विस्तार का अनुमान करना कठिन है। यद्यपि मध्य पाषाण काल का यह स्थल सिकुडा तथा दलदल भूमि का एक क्षेत्र खाली है जो कि मानसून के समय बाढग्रस्त हो जाता है। झील का कुल सगणित क्षेत्रफल 9 60 वर्ग किलोमीटर है। आजकल झील के तल का प्रयोग मुख्यतया खेती की जमीन के रूप मे किया जा रहा है। महदहा के 10 किलोमीटर की परिधि का अवशोषण क्षेत्र एक गतिशील अर्थव्यवस्था के द्वारा शोषित किये जाने वाले स्थल की सीमा निर्धारित करता है। यह क्षेत्र दमदमा को आच्छादित कर लेता है जो महदहा से 5 किलोमीटर उत्तर–पश्चिम स्थित है। जैसा कि देखा जा सकता है कि अधिगम्य क्षेत्र पूर्व मे झील द्वारा यथेष्ट रूप से प्रभावित है ।

मध्यपाषाणिक मानव ने अपने पूर्वपाषाणिक पूर्वजो के ज्ञान का उपयोग करके लगभग 9000 वर्ष पहले भूमध्य सागर के पूर्व और सिधु घाटी के पश्चिम मे कृषि और पशुपालन प्रक्रिया का प्रारम्भ किया। प्राचीन विश्व के अधिकाश भागो मे नवपाषाणिक मानव ने कृषि के प्रसार मे अधिक योगदान दिया (मिश्र 2002)।

तृतीय अध्याय

नवपाषाण युगीन सस्कृति पशु पालन एव कृषि तकनीक का उद्भव एव विकास

नवपाषाण काल की अर्थव्यवस्था का आधारभूत तत्व कृषि से खाद्य–उत्पादन तथा पशुओ को पालतू बनाने की जानकारी है। कृषि तकनीक तथा पशुओ के उपयोग की जानकारी से स्थायी ग्राम्य जीवन का विकास हुआ। मानव–इतिहास मे इस स्तर का विशिष्ट महत्व हे। इसी स्तर पर मनुष्य ने सर्वप्रथम कृषि करना सीखा। इस नयी कृषि जीवन–पद्धति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण परिणाम था– विकसित अर्थव्यवस्था का विकास और जनसख्या मे पर्याप्त वृद्धि। नूतनकाल मे कृषि–क्राति का सबसे महत्वपूर्ण एव दुरूगामी परिणाम यह हुआ कि इससे सीमित क्षेत्र के दोहन से ही अधिक लोगो के लिए अधिक खाद्य सामग्री उपलब्ध हुई। स्थायी आवास से अधिक सश्लिष्ट समाज अस्तित्व मे आये और अतत नगरीय जीवन विकसित हुआ। लेकिन उल्लेखनीय है कि जगली खाद्यो के भोजन मे घट जाने के कारण और कृषि उत्पादित सीमित प्रकार के खाद्यान्नो के कारण आहार की पौष्टिकता मे कमी आयी और परिणामत मानव स्वास्थ्य मे गिरावट आयी (हैरिस 1996 IX, लुकास और पाल 1993)

उल्लेखनीय हे कि मध्य गगा घाटी के पश्चिमी भाग मे जहॉ से मध्य पाषाण सस्कृति के आवास और अन्य परम्पराओ के महत्वपूर्ण प्रमाण मिले है उस क्षेत्र मे प्राथमिक सदर्भ से नवपाषाणिक स्थलो का अभाव है । यद्यपि कुछ स्थलो से नवपाषाणिक उपकरण इस क्षेत्र मे भी प्रतिवेदित है (शर्मा 1949–50 4–25)। इसलिए इस क्षेत्र की मध्यपाषाणिक आखेट और सग्रहपरक सस्कृति स्थायी और उत्पादनपरक सस्कृति के रूप मे विकसित हुई इसके प्रमाण उपलब्ध नही है लेकिन मध्य गगा के मैदान का मध्यवर्ती और पूर्वी भाग नवपाषाणिक सस्कृति के

कई महत्वपूर्ण स्थलो के लिए उल्लेखनीय है। मध्यवर्ती और पूर्वी क्षेत्र मे मध्य पाषाणिक सस्कृति के प्रमाण नही मिलते है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि मध्य गगा घाटी की नवपाषाणिक सस्कृति का स्थानीय विकास सम्भवत नही हुआ था। सभवत मध्य पाषाण कालीन सस्कृति की भॉति यह सस्कृति भी विन्ध्य क्षेत्र से ही मध्य गगा घाटी मे प्रसरित पुष्पित एव पल्लवित हुई।

मध्य गगाघाटी के मैदानी क्षेत्र के उत्खनित स्थलो– चिराद चेचर–कुतुबपुर सेनुवार ताराडीह सोहगौरा इमलीडीह लहुरादेवा आदि स्थलो (रेखाचित्र 19) से नवपाषाण सस्कृति पर प्रकाश डालने वाले प्रमाण उपलब्ध हुए है और बहुत सम्भव है कि उस क्षेत्र मे सर्वेक्षण से कुछ अन्य पुरास्थल भी प्रकाश मे आये जो अभी भी जलोढ मिट्टी के नीचे दबे हो अथवा परवर्ती आवासीय जमाव के नीचे पडे हो। ऐसा प्रतीत होता है कि मैदानी क्षेत्र के स्थलो पर नवपाषाणकालीन मानव के आगमन से पूर्व घने जगल विद्यमान थे जो बाद मे कृषि के लिए अथवा चारागाहो के लिए साफ किये गये। जगलो को साफ करने के लिए सभवत आग का प्रयोग भी किया गया था।

नवपाषाणिक सस्कृति के उत्खनित स्थलो का सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है

चिराद

चिराद (अक्षाश 25^0 48 उ0 देशान्तर 84^0 50 पू0) बिहार के सारन जिले मे गगा के बाये तट पर स्थित है। सारन जिले मे स्थित होने के कारण ‘हिरण अर्थ के आधार पर कहा जा सकता हे कि यह भू–भाग घने जगलो से आवृत था। जगली पशुओ मे हिरणो की सख्या अपेक्षया यहॉ अधिक थी। इस स्थल पर सास्कृतिक जमाव मैदानी क्षेत्र के अन्य स्थलो की भाति बहुसास्कृतिक है। यहॉ नवपाषाण काल से लेकर पाल वश के काल तक का सास्कृतिक जमाव मिलता है। इस स्थल का उत्खनन बिहार राज्य पुरातत्व विभाग के राज्य निदेशालय द्वारा सन 1963 से 1968–69 ई0 तक लगातार किया गया। सन 1969–70 और 1970–71 ई0 मे इस स्थल का पुन उत्खनन हुआ, जिसमे पूर्व धातुयुगीन नवपाषाण सस्कृति

रेखाचित्र 19 मध्य गगाघाटी के प्रमुख नवपाषाणिक उत्खनित स्थल

का आवासीय जमाव प्रकाश मे आया। यहाँ के दो ढाँचे आर0 डी0 एक्स0 साइड (15 X10 मीटर) और आर0 डी0 बी0 (10 X 10 मीटर) का उत्खनन टीले के पूर्वी और पश्चिमी भाग पर किये गये जिसमे लगभग 4 5 मीटर मोटा नवपाषाणिक आवासीय जमाव प्रकाश मे आया। इस जमाव के 6 स्तर निर्धारित किये गये है जिसमे नवपाषाणिक पुरासामग्रियाँ सरचनाएँ और अधिवास के प्रमाण प्राप्त हुए है। यद्यपि चिराद मे परवर्ती सस्कृतियो के मोटे जमाव के कारण नव पाषाणिक धरातल के विस्तृत क्षेत्र मे उत्खनन नही किया जा सका लेकिन इस धरातल से झोपडियो के फर्श के अवशेष और मिट्टी के बर्तन लघु पाषाण उपकरण पाषाण कुल्हाडी आदि उपकरण, मृण्मूर्तियाँ और उपरत्नो पर मनके आदि सामग्रियाँ प्रकाश मे आयी है (नारायण 1970 1–35)।

चिराद के नवपाषाणिक धरातल का क्षैतिज उत्खनन नही किया गया है। इसलिए उनके गृह निर्माण और आवासीय अवशेषो पर अधिक प्रकाश नही पडा है। यद्यपि गोलाकार या अर्द्धगोलाकार झोपडियाँ के प्रमाण उत्खनन से अवश्य उपलब्ध हुए है। जली मिट्टी के ऐसे टुकडे जिन पर बाँस और लकडी के निशान है यह बताते है कि इस सस्कृति के लोग झोपडियो की दीवाल लकडी और बाँस से बनाकर उन पर मिट्टी का मोटा लेप लगाते थे।

चिराद से क्वार्टजाइट बेसाल्ट या ग्रेनाइट पत्थरो पर बने हुए सिल लोढे हथगोले हथौडे और कुल्हाडियाँ प्राप्त हुई है। यहाँ की कुल्हाडियाँ लम्बाई और चौडाई लगभग बराबर होने के कारण गोलाकार मानी गयी है । इनके निर्माण के लिए सबसे पहले फलक निकाले गये है और फिर इन्हे गढकर एव रगडकर अत्यन्त चिकना और पालिशदार बनाया गया है । कुछ कुल्हाडियो का अनुभाग आयताकार है । चिराद के समीप राजगीर की पहाडियाँ है लेकिन प्रतीत होता है कि नवपाषाण कालीन मानव पत्थर के पिण्ड समीपवर्ती सोन नदी के तल से एकत्र करता था (राय चौधरी 1971 17)।

चल्सेडनी चर्ट, अगेट आदि महीन कण वाले पत्थरो पर बने समानान्तर बाहु वाले ब्लेड ,खुरचनी, बाणाग्र, खचित ब्लेड, नोक दन्तुरित ब्लेड अर्द्धचन्द्र

छिद्रक आदि लघुपाषाण उपकरण भी यहाँ से प्राप्त हुए है (छायाचित्र 24)। कुछ ज्यामितिक उपकरण भी लघु पाषाण उपकरणो मे सम्मिलित है । घिसकर पालिश किये गये गोलाकार नवपाषाणिक कुल्हाडियो की सख्या चिराद मे कम है लेकिन हड्डियो और मृगश्रृगो के बने हुए विभिन्न प्रकार के उपकरण यहाँ से प्राप्त हुए है । इन उपकरणो मे सुई, नोक छिद्रक, पिन पुच्छल एव छिद्र युक्त बाणाग्र खुरचनी छेनी हथौडे कुल्हाडियाँ आदि सम्मिलित हैं (छायाचित्र 25)।

नवपाषाणिक चिराद की पात्र परम्पराओ के अध्ययन से भी इस सस्कृति के स्वरूप पर प्रकाश पडता है। लाल, भूरे, काले एव लाल पात्र परम्परा के मिट्टी के बर्तन यहाँ से प्राप्त हुए है। कुछ बर्तनो की ऊपरी सतह को चिकने पत्थरो से घोटकर चिकना और चमकीला बनाया गया है। ये पात्र मुख्यत हस्त निर्मित है लेकिन कुछ ऐसे पात्र भी है जिन्हे साधारण चाक पर धीरे–धीरे घुमाकर बनाया गया है। कुछ बर्तनो को गीली मिट्टी लगाकर ऊपरी सतह पर खुरदुरा भी किया गया है। बर्तनो को आसजन विधि से अलकृत करने अथवा पका लेने के बाद उन्हे खरोचकर अलकृत करने का प्रमाण भी प्राप्त होता है। एक पात्र पर सोलह तीलियो वाले धुरीयुक्त चक्र का आरेखण उल्लेखनीय है। भूरे रग के बर्तनो पर पका लेने के बाद लाल गेरू से चित्र बनाये गये है। चित्रण अभिप्रायो मे एक दूसरे को आर–पार काटती रेखाएँ सकेन्द्रिक वृत्त और लहरदार रेखाए सम्मिलित है। एक पात्र खण्ड पर बिन्दुओ से त्रिशूल का चित्र बनाया गया है। लाल गेरू स चिन्हित ये अभिप्राय कभी–कभी लाल तथा काले–और–लाल पात्र परम्परा के बर्तनो पर भी प्राप्त होते है। चिराद से एक पात्र खण्ड ऐसा भी प्राप्त हुआ है जिस पर चटाई की छाप है। रस्सी की छाप से युक्त (cord impressed ware) पात्र खण्ड भी यहाँ से प्राप्त हुये है। बर्तन आकारो मे चौडे अथवा सकरे मुँह वाले गोलाकार, घडे टोटीदार घडे, आधार वाले कटोरे छिद्रयुक्त होठदार अथवा टोटीदार कटोरे और लम्बे तथा छोटे नलीदार टोटी के बर्तन सम्मिलित है ।

प्रमुख पात्र प्रकारो मे बडे मुँह और सकरे गले के घडे टोटीदार घडे होठयुक्त कटोर छिद्र युक्त और पैर युक्त कटोर साधार कटोरे छोटे आकार के बर्तन, चम्मच, करछुल आदि सम्मिलित है । बर्तनो को पका लेने के बाद इन पर
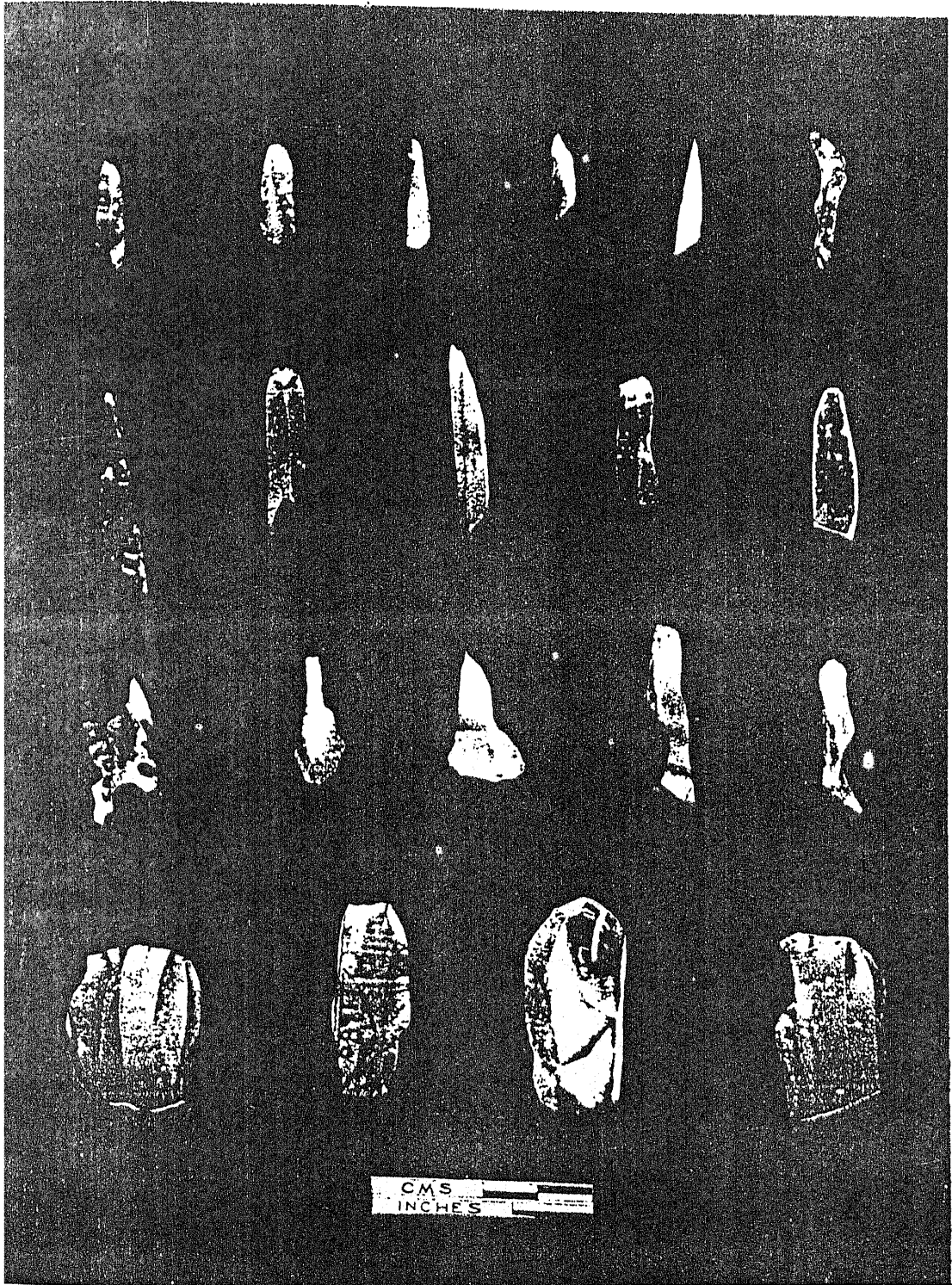
छायाचित्र 2.4. चिरांदः अस्थि निर्मित उपकरण
(संकालिया 1974 के अनुसार)
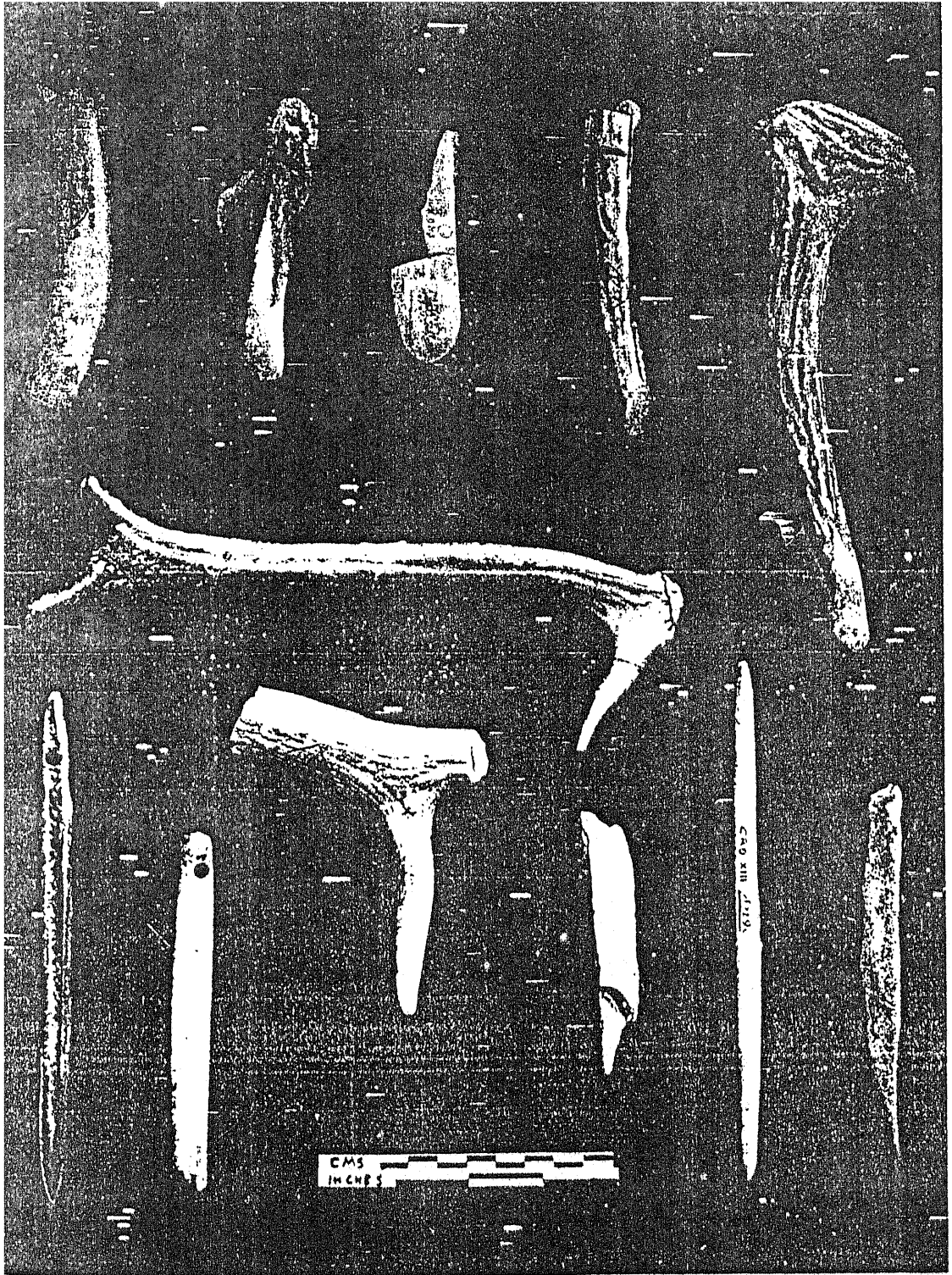
छायाचित्र 25: चिरांद: अस्थि निर्मित उपकरण
(संकालिया 1974 के अनुसार)

रग से अथवा रेखाए उत्कीण करके चित्र बनाए गये है । चित्रित अभिप्रायो मे अर्द्धवृत्त लहरदार रेखाए आदि सम्मिलित है । टोटीयुक्त बर्तनो का प्रयोग सभवत पानी और अन्य द्रव पदार्थों के लिए किया जाता था जबकि सकरे मुँह वाले बडे बर्तन अनाजो के सग्रह के लिए प्रयुक्त किये जाते रहे होगे । चिराद के उत्खनन मे प्लेट या तस्तरी जैसे बर्तनो की सख्या बहुत कम है । जबकि कटोरे हाडी और टोटीदार बर्तन अधिक हे । इस आधार पर यह अनुमान किया गया है कि इस क्षेत्र का नवपाषाणकालीन सस्कृति का मानव अपने भोजन मे तरल पदार्थो का अधिक प्रयोग करता था (प्रसाद 1997 161–162)।

चिराद के नवपाषाणकालीन लोगो के कलात्मक अभिरूचि को अभिव्यक्त करने वाले उपादानो मे उपरत्नो पर बने हुए सुन्दर मनके हड्डी के कुण्डल और झुमके मिट्टी तथा हड्डी की चूडियॉ, कूबड वाले बैल चिडियॉ तथा नाग की मृण्मूर्तियो का उल्लेख किया जा सकता है ।

हड्डी के बने उपकरणो और मनको से भी मध्यगगा घाटी मे नवपाषाणकालीन मानव के विशिष्ट उद्योगो का पता चलता है । क्योकि गगा के मैदान मे उपकरण निर्माण के लिए पत्थरो की कमी थी इसलिए बडे पैमाने पर पशुओ की हड्डियो और हिरन की सीगो पर उपकरणो का निर्माण किया गया । जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि हड्डी पर बने उपकरणो मे स्क्रेपर छिद्रक छेनी हथौडा, सुई, प्वाइट भालाग्र और बाणाग्र आदि उपकरण सम्मिलित है । बैल की एक कधे की हड्डी का प्रयोग बेलचे के रूप मे किया गया है । इतने प्रचुर मात्रा मे हड्डी के उपकरणो का प्रयोग भारतीय नवपाषाणिक सदर्भ मे सिर्फ बुर्जहोम (का 1979 219–228) मे दिखाई पडता है । लेकिन दोनो क्षेत्रो मे उपकरणो के प्रकार अलग–अलग है। चिराद के नवपाषाणिक मानव ने लटकन चूडियॉ चर्खी की तरह के आकार का और कघी जैसे आभूषण हड्डी और कछुए की सीग के बने हुए प्राप्त हुए है। चैल्सेडिनी अगेट जैस्पर मारबुल स्टेएटाइट और फयास के बने हुए विभिन्न प्रकार के मनके भी उपलब्ध हुए है । विभिन्न प्रकार की पुरासामग्रियो से चिराद के नव–पाषाणकालिक मानव के उत्कृष्ट शिल्प पर उल्लेखनीय प्रकाश पडा। प्राकृतिक सामग्रियो पर उनकी कला निर्भर थी। विभिन्न प्रकार के वस्तुओ के

निर्माण मे मिट्टी का ही बडे पैमाने पर प्रयोग किया गया । सहज उपलब्धता और मैदानी क्षेत्र की मिट्टी के लचीलेपन के कारण इसे विविध सामग्रियो के निर्माण के लिए प्रयुक्त किया गया। मिट्टी की बनी हुई कूबड युक्त बैल की मूर्तियॉ पक्षी मनके हथगोले गोले और अन्य सामग्रियॉ उपलब्ध हुई हे । एक छिद्रयुक्त बेलनाकार मिट्टी की वस्तु जिस पर धुऑ लगा हुआ है उसकी पहचान उत्खनन कर्त्ता ने स्मोकिग पाइप के रूप मे किया है ।

मैदानी क्षेत्र का नवपाषाणिक मानव नदियो के तट पर नदी की बाढ सीमा से ऊपर अपने आवासो का निर्माण करता था । चिराद मे उत्खनन उर्ध्वाधर हुआ जिससे सीमित क्षेत्र मे ही उत्खनन कार्य किया गया । इसलिए आवास का पूरा प्रमाण उपलब्ध नही हो सका । सिर्फ कुछ गोलाकार दो मीटर व्यास वाले एक दूसरे के पास स्थित झोपडियो के फर्श प्राप्त हुए है। सभवत इन गोलाकार झोपडियो की छत कोणाकार थी जिसमे दलदली भूमि मे प्राप्त होने वाले नरकुल का प्रयोग किया गया था । ऐसा लगता है कि इस प्रकार की सरचना मे झोपडियो के फर्श के बीच मे एक स्तम्भ लगाया जाता था । इस प्रकार की झोपडियॉ अभी भी समीपवर्ती गॉवो मे देखी जा सकती है ।

बी0 एस0 वर्मा के अनुसार चिराद मे कुछ फर्श के नीचे आवास बनाने के प्रमाण प्राप्त हुए है । गोलाकार झोपडियो के फर्श पर एक–दूसरे के समीप स्थित खुले मुँह वाले कई चूल्हे भी प्राप्त हुए है । ऐसा लगता है कि चिराद मे बार–बार बाढ और अग्निकाड से इन आवासो को क्षति पहुँची। उत्खनित खन्तियो के अनुभाग मे बार–बार आई बाढ के प्रमाण मिलते है। बॉस–बल्ली के निशान से युक्त अत्यधिक मात्रा मे जली मिट्टी के टुकडे अग्निकाड के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इसके अतिरिक्त कोयले और राख से युक्त काली परते प्राप्त हुई है । लेकिन 35 मीटर मोटा आवासीय जमाव यह प्रदर्शित करता है कि बार–बार के बाढ और अग्नि की विभीषिका के बावजूद नवपाषाणिक मानव ने इस स्थल का परित्याग नही किया अपितु पूर्ववर्ती जमाव के ऊपर फिर से अपने अधिवास निर्मित करके रहने लगे। सम्भवत उर्वर भूमि और प्राकृतिक सम्पदा की सम्पन्नता के कारण यह पुरास्थल निरन्तर आबाद रहा।

चिराद की नवपाषाणिक अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर थी। उत्तर भारत मे नवपाषाणिक सस्कृति मे कृषि द्वारा खाद्यान्न उत्पादन के प्राचीनतम प्रमाण यहॉ के उत्खनन से प्राप्त हुए है। खाद्यान्नो मे चावल के दाने भूसी गेहूँ, जौ मटर उर्द के अवशेष प्राप्त हुए है। जगली धान की एक प्रजाति ओरिजा पेरेनिष अभी भी उडीसा मे पायी जाती है। ऐसा माना जाता है कि गगा घाटी और भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरवर्ती भाग मे धान की खेती का प्रारम्भ हुआ था। सभवत नवपाषाणिक सस्कृति के समय जगली अवस्था के धान के सग्रह से धान की खेती का प्रारम्भ हुआ । प्रतीत होता है कि धान की खेती का प्रारम्भ चिराद कोलडिहवा तथा महगडा मे हुआ जहॉ से जगली ओर पालतू दोनो अवस्था का धान प्राप्त हुआ है। गगाघाटी मे लहुरादेवा के उत्खनन से भी धान की खेती के प्राचीन प्रमाण उपलब्ध हुए हे (तिवारी और अन्य 2001–2002 54–59)। अन्य खाद्यान्नो के उद्भव के बारे निश्चित प्रमाण नही है। मूँग का आदि क्षेत्र भारत को माना जाता है। उत्तर–प्रदेश के तराई क्षेत्र मे जगली प्रजाति की एक मूँग उत्पन्न होती है जो सभवत पश्चिमी एशिया से आयी थी । इसके प्रमाण उत्तर भारत और पश्चिमी भारत से मिले है। हडप्पन स्थलो के अतिरिक्त जौ अतरजीखेडा से प्राप्त हुआ है। पश्चिमी एशिया मे जौ और गेहूँ साथ–साथ पैदा किये जाते थे। ट्रैटिकम स्फैरोकौकम नामक गेहूँ की प्रजाति के प्रमाण मोहनजोदाडो के उत्खनन से उपलब्ध हुए है। सभवत यह प्रजाति भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर–पश्चिमी भाग मे उद्भूत हुई थी। भारत मे इस गेहूँ की खेती बडे पैमाने पर की जाती थी फिर भी गेहूँ, जौ और मूँग जो चिराद के उत्खनन मे प्राप्त हुए है उनके उद्भव के बारे मे निश्चय के साथ कुछ नही कहा जा सकता (विष्णुमित्रे 1972 18–21)। ऐसा लगता है कि चिराद के नवपाषाणिक मानव को कृषि के ऋतुचक्र के बारे मे पूरी जानकारी थी। क्योकि धान जैसी खरीफ की फसले और गेहूँ, जौ मूँग जेसी रबी के फसलो के प्रमाण प्राप्त हुए है। सभवत बरसात के तुरन्त बाद नम भूमि मे बीज बो दिये जाते थे और लघु पाषाणोपकरणो से निर्मित हसिये जैसे उपकरणो से फसल पक जाने पर काट ली जाती थी। फिर भी सभवत कृषि बहुत प्राथमिक प्रकार की थी। गदाशीर्ष का प्रयोग जमीन खोदने के लिए लकडी मे किया जाता रहा होगा।

चिराद से उपलब्ध अनाजो से ऐसा प्रतीत होता है कि नवपाषाणिक मानव जगल की सफाई से लेकर फसल काटने तक के कृषि सम्बन्धी विभिन्न क्रिया–कलापो से सुपरिचित थे। सर्वप्रथम नवपाषाणिक मानव ने कृषि के लिए जगली भूमि को साफ किया होगा। सभवत यह कार्य सामूहिक रूप से किया जाता रहा होगा। वृक्षो और पौधो को काटने का एक मात्र उपयुक्त उपकरण प्रस्तर की कुल्हाडी थी। उल्लेखनीय है कि चिराद के उत्खनन से केवल चार कुल्हाडियॉ उपलब्ध हुई थी जिससे प्रतीत होता है कि जगल की सफाई के लिए बडे पैमाने पर उनका प्रयोग नही किया गया था। सभवत इसके लिये उन्होने आग का प्रयोग किया था। आग के प्रयोग से सभी वनस्पतियॉ जलकर राख हो गई होगी जो मिट्टी मे मिलकर उसकी उर्वरा शक्ति मे वृद्धि की होगी।

पर्वतीय क्षेत्रो की आदिम जातियॉ इस तरह के कार्य झूम कृषि मे करते है। कृषि मे दूसरे चरण मे जमीन की जुताई की जाती थी जिसके लिये लकडी से निर्मित प्रारम्भिक/आदिम प्रकार के खोदने वाले उपकरणो का प्रयोग किया जाता था, यद्यपि उत्खननो से लकडी से निर्मित इस प्रकार के उपकरण उपलब्ध नही है। यहॉ की जलवायु इस तरह के अवशेषो को सुरक्षित नही बचा सकी। खोदने वाली लकडी के निशान जैसे प्रमाण चिराद के उत्खनन से नही मिले है। तीसरे चरण मे बीज बोया जाता था। बोने का कार्य मानसून की वर्षा से प्रारम्भ होता था । इसके उपरान्त जब तक फसल पक नही जाती थी तब तक उसकी देखभाल की जाती थी और अन्त मे फसल काटने का कार्य होता था। फसल के काटने मे भी तकनीकी प्रक्रिया और उपकरणो की आवश्यकता थी। ऐसा सकेत किया गया है कि लघु पाषाण उपकरणो को सग्रथित करके काटने वाले हसिये जैसे उपकरण निर्मित किये गये थे। ब्लेड जैसे उपकरणो का प्रयोग हसिये के रूप मे किया जाता था। यह भी सभव है कि पकी हुई फसल को जड से उखाड लिया जाता था और फसल को पीटकर दाने अलग कर लिये जाते रहे हो। इसके उपरान्त सिल–लोढे से अनाज के दाने अलग पीसे रहे होगे।

गगा के मैदान मे नवपाषणिक काल के कृषि के साथ–साथ पशुपालन के भी प्रमाण प्राप्त हुए है। पशुपालन कृषि का अभिन्न अग है। प्रचुर सख्या मे

उत्खनन से हड्डियॉ प्राप्त हुई है। पशुओ मे बकरी सुअर, भैंसा गैंडा हिरण बैल आदि की पहचान की गयी है। सबसे अधिक सख्या मे हिरण की हड्डियॉ प्राप्त हुई है। तदुपरान्त भैसे बैल सुअर और बकरी की हड्डियॉ आती है। पालतू पशुओ मे कूबडयुक्त बैल भैस भेड बकरी सुअर और कुत्ता सम्मिलित है। जगली पशुओ के अतर्गत गैडा हिरण चीतल आदि सम्मिलित हैं। क्योकि अधिकाश हड्डियो पर काटने के निशान है इससे लगता है कि इन पशुओ को मॉस के लिए काटा गया होगा (नाथ और विश्वास 1980 115–124)।

नवपाषाणिक अर्थव्यवस्था मे जलचरो का भी महत्वपूर्ण स्थान था। चिराद के उत्खनन से मछली सीपी, घोघे आदि की हड्डियॉ प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध हुई है। झीलो और नदियो से ये मछलियॉ पकडी जाती थी। उत्खनन मे पक्षियो की हड्डियॉ भी मिली है। जगली क्षेत्रो से खाने योग्य वनस्पतियॉ भी एकत्र की जाती थी। इस प्रकार विभिन्न स्रोतो से उपलब्ध सतुलित आहार नवपाषाणिक लोगो का अभीष्ट था।

उत्खनन से उपलब्ध उपकरणो मे कोई भी उपकरण ऐसा नही है जिसे हाथी गैडे या भैसे जैसे बडे जानवरो के शिकार के लिए प्रयुक्त किया जा सके। सभवत इन पशुओ का शिकार अन्य विधियो जैसे गहरे पानी आदि मे पशुओ को धकेल कर किया जाता रहा होगा अथवा गडढे खोदकर उनके ऊपर घास–फूस डालकर उसमे उन्हे फॅसा दिया जाता रहा होगा। छोटे पशुओ और पक्षियो के शिकार के लिए हड्डियो और पत्थरो के बाणाग्रो का प्रयोग किया जाता था। पकी मिट्टी के गोले हथगोले के रूप मे प्रयुक्त किये जाते थे। बडी मात्रा मे मछलियो की हड्डियॉ उपलब्ध हुई है लेकिन न तो हार्पून और न ही मछली पकडने की कटिया ही उपलब्ध हुई है। चिराद के उत्खननकर्त्ता के अनुसार सूजे जैसे हड्डी के उपकरण मछली के पकडने के लिए जाल बनाने मे प्रयुक्त होते थे और पकी मिट्टी की गोलियो का प्रयोग जाल को पानी मे डुबोने के लिये किया जाता था। मछलियो को पकडने के लिए विभिन्न प्रकार के जालो या धनुष–बाण का प्रयोग किया जाता रहा होगा। जैसा कि इस समय भी कुछ आदिम जनजातियॉ इस प्रकार के तरीको का प्रयोग करती है । कुछ आदिम जातियो द्वारा प्रचलित तरीको की तरह

मछिलयो को मारने के लिए पानी मे जहरीले तत्व मिलाये जाते रहे होगे (नागर 1997 210–217)।

यद्यपि मध्य गगाघाटी मे विभिन्न पुरास्थलो के उत्खननो से नवपाषाणिक धरातल बहुत सीमित क्षेत्र मे ही प्रकाश मे आ सका है । चिराद के उत्खनन से अठारह गोलाकार आवास का प्रमाण मिलता है । उल्लेखनीय है कि गर्त आवास परम्परा उत्तर भारत की कश्मीर घाटी की नव पाषाणिक सस्कृति मे अधिक प्रचलित थी। जैसाकि ऊपर कहा जा चुका हे कि इस सस्कृति के लोगो को जलवायु सबधी परिस्थितियो परिवर्तनो एव ऋतु चक्र का भी ज्ञान था। अब वे अपने पूर्वजो के सचरणशील जीवन का परित्याग कर स्थायी रूप से एक स्थान पर आवास बनाने लगे। चिराद जैसे उपयुक्त स्थल पर बाढ और अग्नि जैसे प्राकृतिक आपदाओ के बावजूद एक ही स्थान पर लम्बे समय तक रहते रहे। पाषाण उद्योग के स्थान पर हड्डी के उपकरण और विभिन्न प्रकार की पात्र परम्पराओ का विकास हुआ। मनके मृण्मूर्तियो आभूषणो तथा मिट्टी के बर्तनो पर चित्र के रूप मे कला का विकास उल्लेखनीय है। इसके प्रमाण चिराद के अतिरिक्त उस क्षेत्र के अन्य नव पाषाणिक पुरास्थलो चेचर–कुतुबपुर ताराडीह सेनुआर इमलीडीह सोहगौरा और लहुरादेवा जैसे स्थलो से भी प्राप्त हुए है।

उपलब्ध कार्बन तिथियो (तालिका सख्या 6) के आलोक मे चिराद की नवपाषाण सस्कृति विन्ध्य क्षेत्र की सस्कृति के काफी बाद की प्रमाणित होती है। चिराद के नवपाषाणिक धरातल से कुल 9 कार्बन तिथियॉ प्राप्त हुई है जिनमे से तीन तिथियो 1580±110 1675±140 और 1755±155 ई0 पू0 को उपयुक्त माना गया है (मडल 1972 106–116)। नवपाषाणिक और ताम्रपाषाणिक धरातलो के सधि स्थल से 1050±190 ई0 पू0 की एक तिथि प्राप्त हुई है । इस आधार पर चिराद की नवपाषाणिक सस्कृति 1800 से 1200 ई0 पू0 के मध्य रखा गया है (अग्रवाल एव कुसुमगर 1974 71)। चूँकि निचले धरातल से कोई तिथि नही मिली है इसलिए इस सस्कृति का प्रारम्भ 2000 ई0 पू0 या इससे भी पूर्व का समय देने की सस्तुति की गयी है। यहॉ के अवसादन दर की गणना के आधार पर इस सस्कृति

का प्रारम्भ और भी पहले 4000 से 3000 ई0 पू0 तक प्रस्तावित किया गया है (विष्णुमित्रे 1972)।

तालिका 6 गागेय मैदान और विन्ध्य क्षेत्र से प्राप्त नवपाषाणिक कार्बन तिथियाँ

पुरास्थल का नाम	प्रयोगशाला सख्या	5730 ईसा पूर्व	अशसोधित तिथि
चिराद	टी0एफ0 1035 टी0एफ0 1127 टी0एफ0 1025 टी0एफ0 1033 टी0एफ0 1034 टी0एफ0 1030 टी0एफ0 1031 टी0एफ0 1032	1270±105 ईसापूर्व 1375±100 ईसापूर्व 1515±155 ईसापूर्व 1540±110 ईसापूर्व 1570±115 ईसापूर्व 1580±100 ईसापूर्व 1675±140 ईसापूर्व 1755±155 ईसापूर्व	
कोलडिहवा	पी0आर0एल0 101 पी0आर0एल0 100	4530±185 ईसापूर्व 5440±240 ईसापूर्व	
महगडा	पी0आर0एल0 407 पी0आर0एल0 408 पी0आर0एल0 409 बी0एस0 128	1440±100 ईसापूर्व 1330±240 ईसापूर्व 1440±150 ईसापूर्व 3330±100 ईसापूर्व	
बरूडीह	टी0एफ0 1099 टी0एफ0 1100 टी0एफ0 1101 टी0एफ0 1102	750±110ईसापूर्व 1055±210 ईसापूर्व 595±90 ईसापूर्व 660±90 ईसापूर्व	
कुनझुन	बीटा 4879 बीटा 6414 बीटा 6415	3120±70 ईसापूर्व 4010±110 ईसापूर्व 4600±80 ईसापूर्व	
लहुरादेवा	बी0एस0 1951 बी0एस0 1966	5320±90 ईसापूर्व 6290±160 ईसापूर्व	4220 ईसा पूर्व 4196 ईसा पूर्व 4161 ईसा पूर्व 5298 ईसा पूर्व

सेनुवार (नवपाषाणिक–ताम्रपाषाणिक)		1770±120 ईसापूर्व 1660±120 ईसापूर्व 1500±110 ईसापूर्व 1400±110 ईसापूर्व	

यह उल्लेखनीय तथ्य हे कि गगा की मैदान की इस नवपाषाणकालीन सस्कृतियो ने परवर्ती विकसित सस्कृतियो को ठोस आधार प्रदान किया था ।

मध्य गगा घाटी और उसके समीपवर्ती विन्ध्य क्षेत्र के उत्खनित और सर्वेक्षित नव पाषाणिक स्थलो से प्राप्त प्रमाणो से प्रतीत होता है कि इन दोनो क्षेत्रो की नवपाषाणिक सस्कृतियो का स्वरूप एक ही है यद्यपि गगाघाटी की नवपाषाणिक सस्कृति विन्ध्य क्षेत्र की तुलना मे अधिक विकसित है (पाल 1986)।

पूर्वी मध्य गगाघाटी की इस नवपाषाणिक सस्कृति की विन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाणिक सस्कृति से तुलना करने पर हमे कुछ महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होते है। विन्ध्य क्षेत्र मे नवपाषाणिक सस्कृति के कई स्थलो का उत्खनन किया गया है। बेलन घाटी मे कोलडिहवा पचोह और महगडा (शर्मा और अन्य 1980) के उत्खनन से इस सस्कृति मे गोलाकार नवपाषाणिक कुल्हाडियॉ, सिल लोढे लघु पाषाण उपकरण मिट्टी के मनके हड्डी के बने बाणाग्र और गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपडियो के प्रमाण प्राप्त हुए है। यहॉ के लोग धान की खेती करते थे और गाय बैल भेड, बकरी घोडे आदि पशुओ को पालते थे। पाषाण उपकरणो के अध्ययन और पालतू तथा जगली गाय बैल भेड बकरी के साथ साथ मिलने के आधार पर यह माना गया है कि विन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाणिक सस्कृति ने ही स्थानीय जगली पशुओ को ही पालतू बनाया। यहॉ से उपलब्ध रेडियो कार्बन तिथियो के आलोक मे धान की खेती सर्वप्रथम प्रारम्भ करने का भी श्रेय विन्ध्य क्षेत्र की इस सस्कृति को है। इस सस्कृति को पॉचवी–छठी सहस्राब्दी ईसा पूर्व का समय प्रदान किया गया है। अभी हाल मे ही विन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाणयुगीन सस्कृति के सन्दर्भ मे टोकवा (मिश्र और अन्य 1998–1999) नामक पुरास्थल से नवीन साक्ष्य प्रकाश मे आया है।

यह स्थल अदवा एव बेलन नदी के सगम पर स्थित है। इस स्थल की विशेषता यह है कि यहॉ पर जो भी सास्कृति जमाव प्राप्त हुआ है वह नितान्त ठोस जमाव के रूप मे दिखाई पडता है। विन्ध्य क्षेत्र के नवपाषाण सस्कृति की पात्र परम्पराए पूर्णत हस्तनिर्मित है। यहॉ की कुछ पात्र परम्पराओ के बर्तनो की ऊपरी सतह पर रस्सी की छाप अथवा कछुये की हड्डी को पीटकर अलकृत किया गया है और कुछ के ऊपरी सतह को खुरदुरा बनाया गया है (पाल 1977 278–279)। कुछ पात्रो की ऊपरी सतह को घोटकर चिकना ओर चमकीला किया गया है। पात्रो को घोटकर चिकना बनाने की प्रथा से दोनो सस्कृतियो का परिचय था। एक ही तरह के घडे और कटोरे तथा टोटीदार बर्तन भी दोनो सस्कृतियो से प्राप्त हुए है।

दोनो सस्कृतियो के नवपाषाणिक कुल्हाडियो मे साम्य है और एक ही तरह के लघुपाषाण उपकरण भी प्राप्त होते है। चिराद मे पात्रो को पकाने के बाद चित्रित भी किया गया है। लेकिन विन्ध्य क्षेत्र मे पात्रो को चित्रित करने की परम्परा नही थी और न तो उन्हे पकाने के बाद खरोचकर अलकृत ही किया गया है। चिराद मे मिलने वाली मृण्मूर्तियॉ भी महगडा कोलडिहवा टोकवा और पचोह से नही मिली है। हड्डियो के बने उपकरणो की सख्या भी विन्ध्य क्षेत्र मे अधिक नही है। रस्सी अथवा कछुये की हड्डी की छाप वाले मिट्टी के बर्तन जो विन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाणिक सस्कृति का चारित्रिक लक्षण है चिराद मे भी मिलते है। उर्पयुक्त विश्लेषण से यही प्रतीत होता हे कि चिराद की नवपाषाण सस्कृति अधिक विकसित है जबकि विन्ध्य क्षेत्र की यह सस्कृति अभी भी शैशवावस्था मे है (मिश्र 1977 116 पाल 1986)। उपलब्ध कार्बन तिथियो के आलोक मे भी चिराद की नवपाषाण सस्कृति विन्ध्य क्षेत्र की सस्कृति के काफी बाद की प्रमाणित होती है।

नवपाषाणिक स्थल नदियो के तट पर कुछ ऊॅचाई पर स्थित है। जहॉ पर वार्षिक बाढ का पानी नही पहॅुच पाता था। जल की सुलभता और वार्षिक बाढ से समीपवर्ती क्षेत्रो मे उपजाऊ भूमि नदियो के तट पर स्थिति के मुख्य कारण हैं। विन्ध्य क्षेत्र के महगडा इन्दारी जैसे स्थल प्राकृतिक भू–तात्विक जमावो की प्राचीर से घिरे हुए प्राप्त हुए है जो सभवत लू और ठडी हवाओ से उनकी रक्षा करते थे।

अधिकाश नवपाषाणिक स्थलो के समीप घने जगल थे जहाँ से जगली वनस्पतियो को आसानी से प्राप्त किया जा सकता था । यही नही इन जगलो मे अनेकानेक पशुओ की उपस्थित शिकार के लिए अत्यन्त उपयुक्त थी। अत ऐसे स्थलो पर लम्बे समय तक जीवन निर्वाह करने मे कोई कठिनाई नही थी।

चेचर–कुतुबपुर

यह स्थल (अक्षाश 25^0 35 उ0 देशान्तर 85^0 20 पू0) भी बिहार मे गगा के दाहिने तट पर स्थित वैशाली जनपद मे है। इस स्थल का उत्खनन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के आर0 एस0 विष्ट द्वारा सन 1977–78 ई0 मे किया गया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1977–78 17–18)। यहाँ के उत्खनन से तीन सस्कृतियो के प्रमाण उपलब्ध हुए है। जिनमे सबसे प्राचीन प्रथम सास्कृतिक काल को तीन उपसास्कृतिक कालो – प्रथम–ए प्रथम–बी तथा प्रथम–सी मे विभाजित किया गया है। प्रथम–ए उपसास्कृतिक काल मे उसी प्रकार की नवपाषाणिक पुरासामग्री उपलब्ध हुई है जैसा कि चिराद के नवपाषाणिक स्थल से मिली है।

ताराडीह

यह स्थल बिहार के गया जिले मे प्रसिद्ध महाबोधि मन्दिर के दक्षिण–पश्चिम दिशा मे स्थित एक ऊँचे टीले के रूप मे मिलता है। इस स्थल का उत्खनन बिहार राज्य पुरातत्व निदेशालय के डा0 ए0 के0 प्रसाद द्वारा सन् 1981–82 से किया जा रहा है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1977–78 17–18)। यहाँ के उत्खनन से भी बहुसास्कृतिक जमाव प्राप्त होता है जो नवपाषाण काल से लेकर ऐतिहासिक काल तक का है। यहाँ नवपाषाणकालीन धरातल का उद्‌घाटन सन 1984–85 ई0 के उत्खनन से हुआ। लगभग 60 सेमी0 मोटे नवपाषाणिक (प्रथम सास्कृतिक काल) के स्तर से हाथ से बने मिट्टी के बर्तन नवपाषाणिक कुल्हाडियाँ, लघु पाषाण उपकरण हड्डी के उपकरण, जली मिट्टी की समाग्रियाँ और बाँस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे आदि मिले है। इस स्थल से विभिन्न आकार के चूल्हे भी प्रकाश मे आये है।

सेनुवार

इस पुरास्थल (अक्षाश 24^{0} 56 उ0 देशान्तर 83^{0} 56 पू0) को प्रकाश मे लाने का श्रेय बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरातत्वविदो को है। बिहार के रोहतास जिले मे स्थित यह स्थल कैमूर पहाडियो के बहुत निकट है। इस क्षेत्र मे सन 1986–87 ई0 मे किये गये पुरातात्विक अन्वेषणो मे प्रारम्भिक कृषिपरक सस्कृति के कई स्थल कैमूर के पास मैदानी क्षेत्र से प्रकाश मे आये है जिनमे से सेनुआर नामक स्थल का उत्खनन बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के बी0 पी0 सिह ने किया (सिह 2000–2001)। कुदरा नामक छोटी नदी के तट पर स्थित इस स्थल के उत्खनन से भी नवपाषाणिक सास्कृतिक जमाव के ऊपर कई सस्कृतियो के प्रमाण उपलब्ध हुए है जो क्रमश प्रथम–नवपाषाणिक द्वितीय– ताम्रपाषाणिक तृतीय–एन0 बी0 पी0 वेयर तथा चतुर्थ–कुषाण कालीन है। प्रथम नवपाषाणिक सास्कृतिक काल को प्रथम–ए तथा प्रथम बी उपकालो मे विभाजित किया गया है। प्रथम बी उपकाल के सास्कृतिक काल से ताबे के प्रमाण उपलब्ध हुए है। इसलिए उसे नवपाषाण और ताम्रपाषाणिक सस्कृति के सक्रमण काल से समीकृत किया गया है। गगा के मैदान और विन्ध्य की पहाडियो के मध्यवर्ती क्षेत्र मे स्थित इस नवपाषाणिक स्थल से हड्डी पर बने हुए उपकरण ओर पात्र परम्पराओ के उल्लेखनीय प्रमाण उपलब्ध हुए है। छोटे आकार की पालिशदार कुल्हाडियो के लिए यह स्थल उल्लेखनीय है (रेखाचित्र 20)। बर्निश्ड रेड वेयर और बर्निश्छ ग्रे वेयर के पात्रो के ऊपर मोटे लेप के परत है । साधारण रेड वेयर के अतिरिक्त बर्निश्ड ग्रे वेयर के पात्र भी इस तरह के लेप से युक्त है । लाल गेरू से बर्तनो के मुँह पर चित्र बनाये गये है । जो बर्तनो को पका लेने के बाद चित्रित किये गये थे। खुरदुरे सतह वाले पात्र और रस्सी की छाप वाले पात्र विन्ध्य क्षेत्र के कोलडिहवा और महगडा के पात्रो से साम्य रखते है । लघु पाषाण उपकरणो मे सामान्तर भुजाओ वाले पुर्नगठित ब्लेड भुथडे ब्लेड और फलक उल्लेखनीय है । अन्य पाषाण उपकरणो मे सिल–लोढे चक्र हथौडा और हथगोले का उल्लेख किया जा सकता है । पशुओ की हड्डी पर बने हुए बाणाग्र और प्वाइट जिनके नोक पर प्रयोग के प्रमाण है, प्राप्त हुए है । सेनुवार से बडी मात्रा मे प्राप्त हड्डी
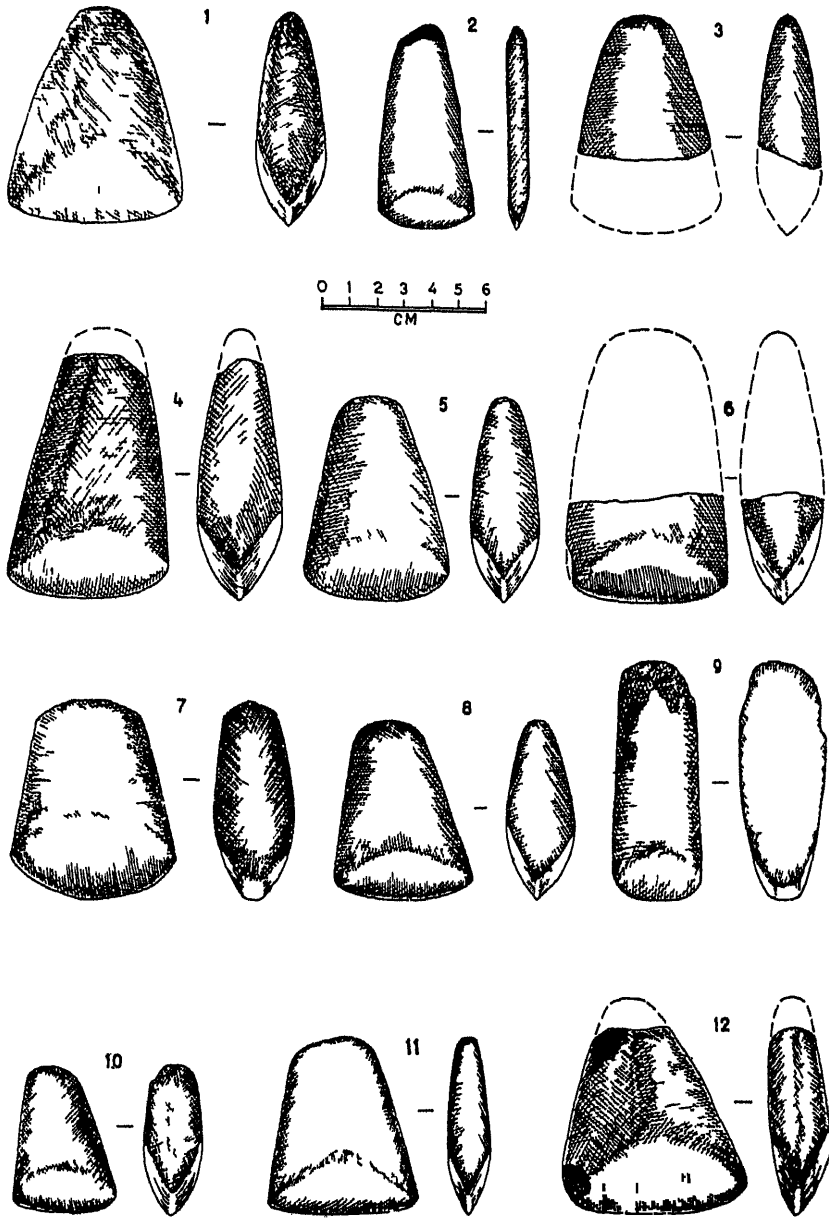
रेखाचित्र 20 सेनुवार नवपाषाणिक पालिशदार कुल्हाडियाँ
(बी०पी० सिह 1988–89 के अनुसार)

के उपकरणो की माइक्रोवियर एनालिसिस डा0 गायत्री चतुर्वेदी ने किया है। बर्निश्ड ग्रेवेयर के लिए भी इस स्थल का महत्वपूर्ण स्थान है (रेखाचित्र 21)।

द्वितीय सास्कृतिक काल ताम्रपाषाणिक है तृतीय काल मे लोहे के साथ एन0 बी0 पी0 डब्लू0 सस्कृति मिलती है। उत्खनन से पता चलता है कि यहॉ एन0 बी0 पी0 डब्लू0 सस्कृति का प्रथम चरण ही विद्यमान था। चतुर्थ काल कुषाण काल से सम्बन्धित है। तृतीय एव चतुर्थ काल मे समय का अन्तराल है।

प्रारम्भिक नवपाषाण कालीन प्रथम सास्कृतिक काल को तिथिक्रम की दृष्टि से 2200 से 2000 ईसा पूर्व के मध्य रखने का आग्रह दिखायी पडता है। पशुपालन ओरिजा सतिवा प्रकार के धान की प्रारम्भिक कृषि और सग्रहण इस चरण की अर्थ व्यवस्था को इगित करते है। यहॉ से छोटे आकार के पालिशयुक्त कुल्हाडियॉ सिल लोढे इत्यादि मिले है। हड्डी के निर्मात उपकरण भी मिलते है। पशुओ की मृण्मूर्तियॉ भी मिली है। मिट्टी और उपरत्नो के मनके सीप के लटकन और हड्डी की चूडियॉ भी प्राप्त हुई है। पात्र परम्परा के अर्न्तगत मार्जित लाल बर्तन रस्सी की छाप से युक्त लाल बर्तन प्रमुख पात्र प्रकारो का प्रतिनिधित्व करते है। अल्प मात्रा मे रुक्ष काले–और–लाल पात्र परम्परा प्राप्त होती है।

यहॉ से प्राप्त पुरासामग्रियो का विन्ध्य क्षेत्र के नवपाषाणिक सामग्री तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर प्रमाणित होता है कि प्रारम्भिक सेनुवार की सस्कृति का सम्पर्क बेलन घाटी से था । पात्र परम्परा की समानता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस काल के निम्न धरातल से प्राप्त रेडियो कार्बन तिथि इस सस्कृति को 2200 से 2000 ईसा पूर्व के मध्य रखती है । प्रथम बी उपकाल का तिथिक्रम 2000 से 1950 ईसा पूर्व प्रस्तावित किया गया हे (सिह 2000–2001 109–118) ।

धान के अतिरिक्त इस चरण मे कई फसलो की खेती का प्रचलन हो गया था जिसमे गेहूँ, जौ ज्वार, मिलेट लेन्टिल मटर, रागी और खेसारी के प्रमाण प्राप्त होते है । ऐसा प्रतीत होता है कि उपयुक्त परिवेश की तलाश मे कैमूर क्षेत्र
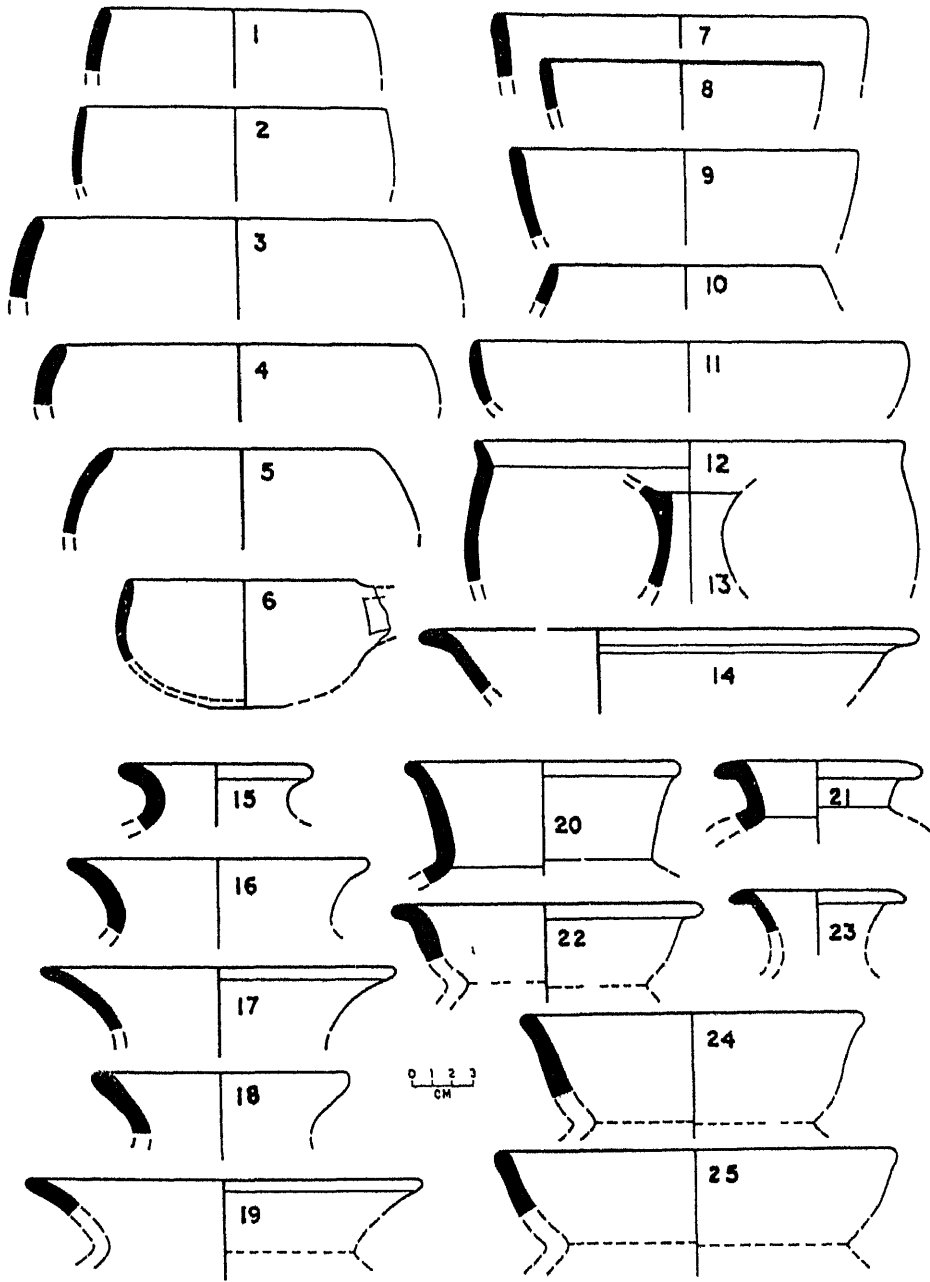
रेखाचित्र 21 सेनुवार नवपाषाणिक मृदभाण्ड, बर्निश्ड ग्रे एण्ड रेड वेयर
(बी0पी0 सिह 1988–89 के अनुसार)

से नवपाषाणिक मानव उत्त मे बिहार की ओर प्रस्थान किया जिसका प्रमाण चिराद ताराडीह मानेर तथा चेचर–कुतुबपुर से प्राप्त होता है ।

सोहगौरा

नवपाषाणिक सस्कृति के प्रमाण सोहगौरा (अक्षाश 26° 32 उ0 देशान्तर 80° 32 पू0) के निचले धरातल से भी मिले है। यह स्थल उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद मे आमी और राप्ती नदियो के सगम पर स्थित है । इस स्थल का उत्खनन गोरखपुर विश्वविद्यालय के डा0 एस0 एन0 चतुर्वेदी ने सन् 1962–63 और सन 1975–76 ई0 मे किया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1977–78 17–18 चतुर्वेदी 1985 101–108)।

इमलीडीह खुर्द

यह पुरास्थल (अक्षाश 26° 30 उ0 देशान्तर 30° 12′ 5 पू0) गोरखपुर जनपद के दक्षिण पश्चिम भाग मे घाघरा की सहायक कुआनो नदी के बाये तट पर स्थित है । इस क्षेत्र का सर्वेक्षण सन 1990–91 ई0 मे प्रारम्भ हुआ । यह आवासीय स्थल गोरखपुर से लगभग 40 किमी दक्षिण मे स्थित हे । इमलीडीह और इस क्षेत्र के अन्य स्थलो पर किये गये सर्वेक्षण से बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के डा0 पुरूषोत्तम सिह को एक ताम्रपाषाणिक सस्कृति के प्रमाण मिले जिसे उन्होने नरहन सस्कृति का नाम दिया। सन 1992 ई0 मे इमलीडीह मे किये गये उत्खनन मे नरहन सस्कृति के पूर्व की सस्कृति अर्थात नवपाषाणिक सस्कृति के प्रमाण उपलब्ध हुए है जिसमे हाथ से बने हुए रस्सी के छाप वाले मिट्टी के बर्तन (रेखाचित्र 22 23) अलकृत पात्र (रेखाचित्र 24) और अन्य पुरा सामग्रियॉ सम्मिलित है (सिह 1984 120–122)। प्रथम सास्कृतिक काल से बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे, मिट्टी के बने फर्श और चूल्हे प्राप्त हुए है। 1 95 मीटर के व्यास वाला एक गोलाकार गर्त भी उपलब्ध हुआ है। कुछ मिट्टी की पतली दीवालो से बनी हुई गोलाकार सरचनाए भी मिली है जिनका प्रयोग अनाज रखने के लिए किया जाता था। बहुत से स्टीयटाइट के लघु मनके मिट्टी अगेट और फ्यान्स के बने मनके, हड्डी के बाणाग्र और मिट्टी के बर्तनो के टुकडो से बने डिस्क भी प्राप्त
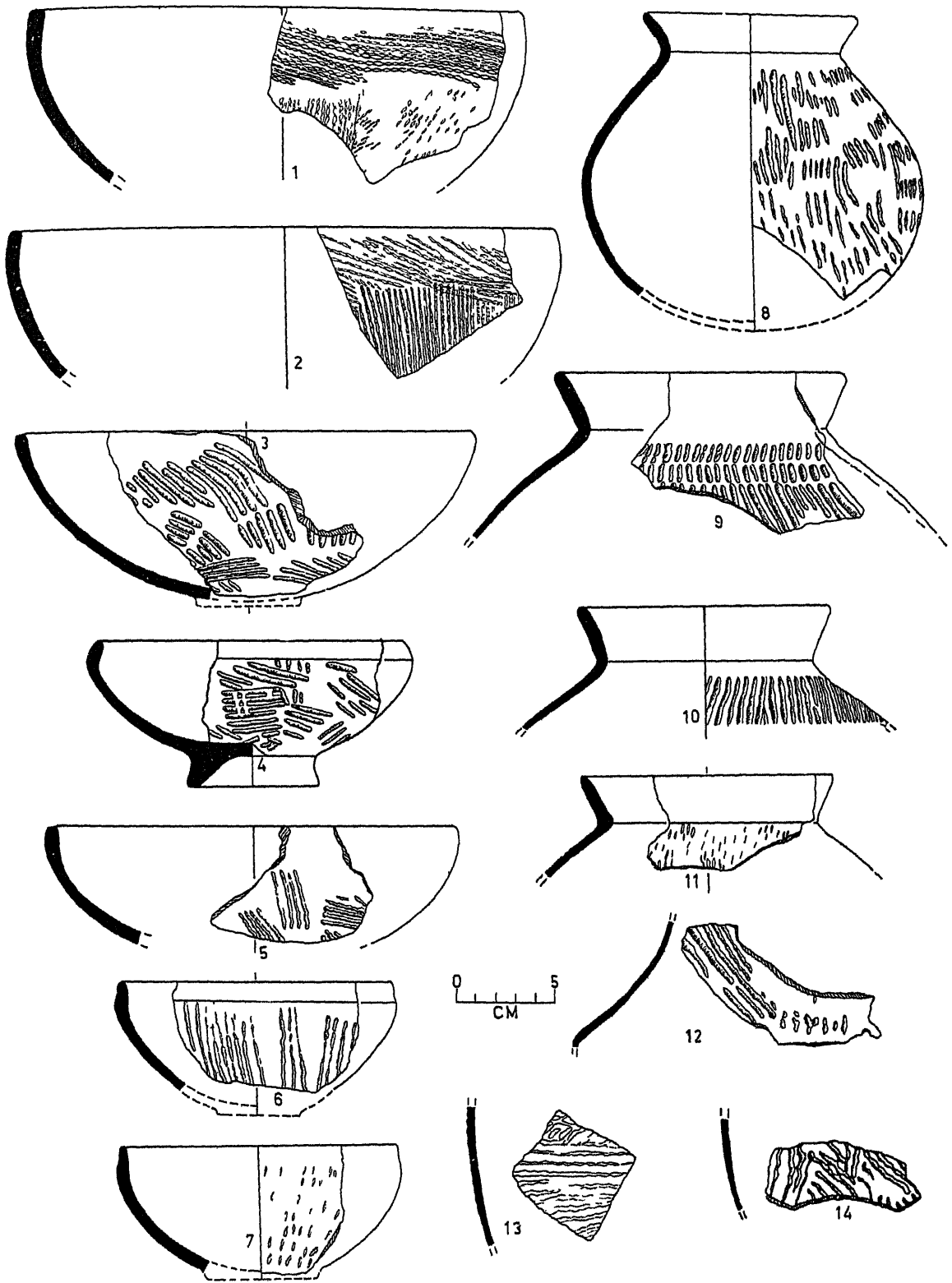
रेखाचित्र 22 इमलीडीह खुर्द रस्सी छाप युक्त मृदभाण्ड, प्रथमकाल
(पी0 सिह 1992–93 के अनुसार)
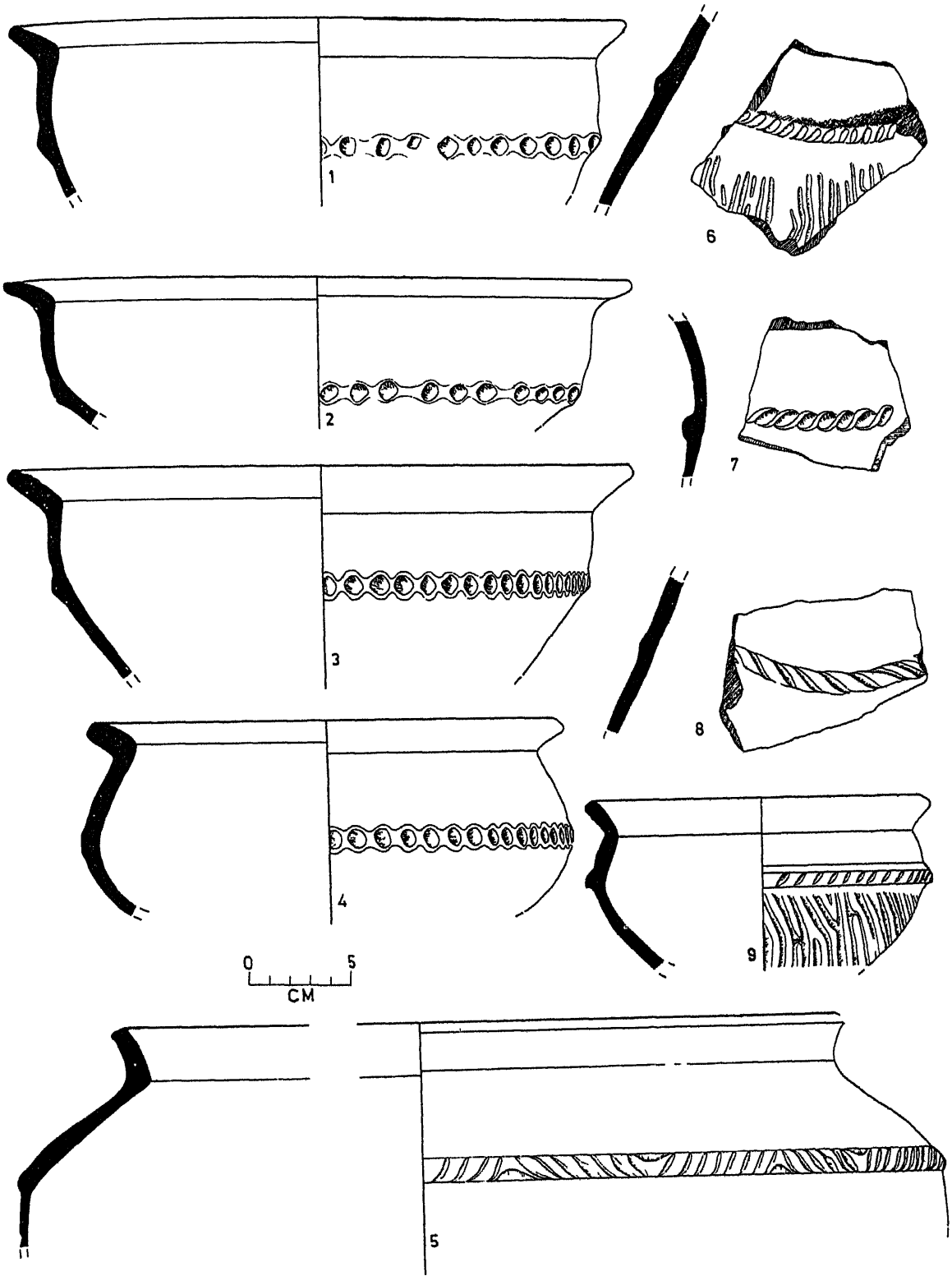
रेखाचित्र 23 इमलीडीह खुर्द रस्सी छाप युक्त अलकृत मृदभाण्ड, प्रथम काल
(पी0 सिह 1992–93 के अनुसार)
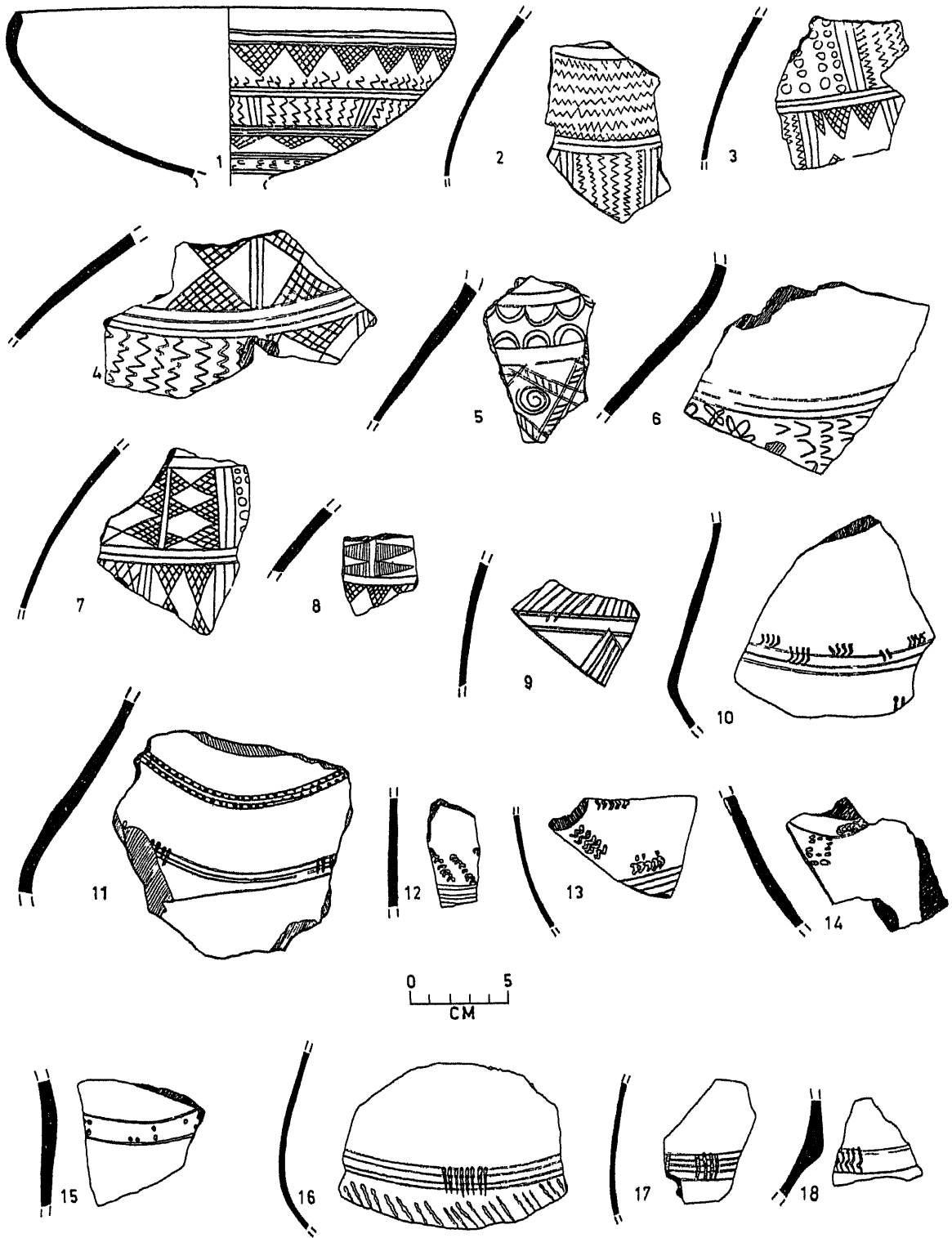
रेखाचित्र 24 इमलीडीह खुर्द पकाने के उपरान्त उत्कीर्ण और चित्रित मृदभाण्ड, प्रथम काल (पी0 सिंह 1992–93 के अनुसार)

हुए है। इस चरण से उपलब्ध पात्र–परम्परा का साम्य सोहगौरा की प्रथम चरण की पात्र–परम्परा से है । इसलिए उसका सम्बन्ध नवपाषाणिक सस्कृति से है लेकिन उत्खननकर्त्ता ने इस सस्कृति को प्राक नरहन सस्कृति से अभिहित किया है । यहॉ से उपलब्ध जिन पशुओ की पहचान की गयी है उनमे गाय बैल भेड बकरी सुअर हिरण और भेडिया आदि सम्मिलित है । मछली घोघे और कछुए के अस्थि अवशेष भी प्राप्त हुए है । अनाजो के प्रमाण से ऐसा लगता हे कि यहॉ के निवासी रबी और खरीफ दोनो फसलो से परिचित थे । धान जौ गेहूँ, ज्वार सावा बाजरा मटर खेसारी मूँग तिल आदि अनाजो के प्रमाण प्राप्त हुए है।

लहुरादेव

यह पुरास्थल (अक्षाश 26^0 46 उ0 देशान्तर 82^0 57 पू0) उत्तर प्रदेश के सन्त कबीर नगर जनपद मे बस्ती–गोरखपुर मार्ग पर भुजैनी चौराहे से 5 किमी दक्षिण जगदीशपुर गॉव के समीप स्थित है । प्रारम्भ मे यह स्थल तीन तरफ से झील से घिरा हुआ था । इस समय इसके अधिकाश भाग मे खेती होती है केवल पश्चिमी क्षेत्र मे जलभराव है । यह स्थल पूर्व से पश्चिम 220 मीटर तथा उत्तर से दक्षिण 140 मीटर के क्षेत्र मे फैला हुआ है । इस स्थल के पुरातात्विक महत्व को प्रकाश मे लाने का श्रेय गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्रो0 शेल नाथ चतुवेर्दी को है (चतुर्वेदी 1980 339–340 1985 105)। इस स्थल का उत्खनन उत्तर पद्रेश राज्य पुरातत्व विभाग की ओर से डॉ0 राकेश तिवारी के निर्देशन मे 2001 तथा 2002 मे किया गया (तिवारी एव अन्य 2001–2002 54–59)। यहॉ के उत्खनन से पॉच सास्कृतिक काल उद्घाटित किये गये है जिनका विवरण निम्नवत् है

प्रथम सास्कृतिक काल – प्रारम्भिक कृषि के चरण (नवपाषाण काल)

द्वितीय सास्कृतिक काल – ताम्रपाषाण काल

तृतीय सास्कृतिक काल – प्रारम्भिक लौह काल

चतुर्थ सास्कृतिक काल – एन0बी0पी0डब्लू0

पचम सास्कृतिक काल – प्रारम्भिक शताब्दी ई0पू0 / ई0

प्रारम्भिक सास्कृतिक जमाव को पुन दो उपकालो मे विभाजित किया गया है– प्रथम–ए तथा प्रथम–बी। इस जमाव से मिट्टी के बर्तन पशुओ की जली हुई तथा बिना जली हुई हड्डियॉ कोयले के टुकडे जली मिट्टी के टुकडे इत्यादि सामग्रियॉ प्राप्त हुईं। प्रथम ए उपकाल से प्राप्त मिट्टी के बर्तन लाल तथा काले–तथा–लाल रग के है। अधिकाश बर्तन हस्तनिर्मित है। मार्जन (Burnishing) के प्रमाण भी कतिपय बर्तनो पर दिखायी पडते है। सामन्यतया बर्तन अधपके है। कुछ बर्तनो मे लाल रग लेप लगाने का भी प्रमाण मिला है। अधिकतर बर्तन रस्सी की छाप से युक्त तथा अलकृत किए गये है। उत्खनन से अनाज के दाने भी प्राप्त हुए है जिनका अध्ययन बीरबल साहनी पुरावनस्पति सस्थान के डॉ0 के0 एस0 सारस्वत ने किया है। उनके अनुसार इस सस्कृति के लोग जगली तथा कृषि से उत्पन्न धान (*ओरिजा सतीवा*) उत्पन्न धान से परिचित थे। अन्य पुरावशेषो मे मिट्टी के मनके मिट्टी के हथगोले अस्थि निर्मित बाणाग्र जली एव अधजली पशुओ की हड्डियॉ सम्मिलित है। कतिपय हड्डियो के ऊपर काटने के निशान विद्यमान है। सरचना सम्बधी प्रमाण मे स्तभगर्तों का उल्लेख किया जा सकता है । इससे आवासीय झोपडियो के निर्माण का साक्ष्य प्रस्तुत होता है।

यहॉ से दो रेडियो कार्बन तिथियॉ भी प्राप्त हुई है । जिनके आधार पर इस सस्कृति के तिथिक्रम पर प्रकाश पडता है। प्राप्त तिथियो का उल्लेख निम्नवत् है

(1) बी0एस0– 1951– बी0पी0 5320±90 अशसोधित तिथि 4220 4196 4161 ईसा पूर्व ।

(2) बी0एस0– 1966– बी0पी0 6290±16 अशसोधित तिथि 5298 ईसा पूर्व।

उपर्युक्त तिथियो के आलोक मे लहुरादेव के प्रथम सास्कृतिक काल की तिथि छठवी–पॉचवी सहस्राब्दी के मध्य प्रस्तावित की गयी है (तिवारी और अन्य 2001–2002 54–59)।

द्वितीय सास्कृतिक काल का सम्बध ताम्रपाषाण युगीन रास्कृति से है। इसकी कृष्णलेपित पात्र परम्परा चित्रण अभिप्राय ताम्र उपकरण इत्यादि चारित्रिक विशेषताए प्राप्त होती है।

झूँसी

झूँसी की (अक्षाश 25^0 26 10 उ0 देशान्तर 81^0 54 30 पू0) पहचान प्रतिष्ठानपुर से की गई है । गगा–यमुना के सगम पर इलाहाबाद नगर के ठीक सामने स्थित लगभग 3 किलोमीटर के क्षेत्र मे विस्तृत इस टीले का अधिकाश भाग वर्तमान झूँसी गॉव द्वारा आबाद है । इस समय यह स्थल नालो के कारण कई छोटे टीलो मे विभाजित हो गया है । लेकिन समुद्र कूप टीला अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित है जिसकी अधिकतम ऊँचाई लगभग 16 मीटर है। समय–समय पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग द्वारा इस स्थान पर किये गये सर्वेक्षण एव पुरातत्व विभाग द्वारा इस स्थान पर किये गये सर्वेक्षण से मिट्टी के बर्तन सिक्के मृण्मूर्तियॉ पाषाण मूर्तियॉ मुहरे हड्डी, लोहे और ताबे के उपकरण आादि प्राप्त हुए है जो इस स्थल की प्राचीनता को प्राक एन0 बी0 पी0 काल से लेकर मध्य काल तक के विस्तृत सास्कृतिक काल का सकेत देते है। इस स्थल का उत्खनन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग द्वारा 1994–95 मे छोटे पैमाने पर किया गया। समुद्र–कूप के टीले पर ऊपर से नीचे तक एक सोपान खन्ती मे किये गये उत्खनन से 15 5 मीटर के आवासीय जमाव उपलब्ध हुए जिन्हे पॉच सास्कृतिक कालो मे विभजित किया गया है । तत्पश्चात 1998 1999 तथा 2002 मे पुन उत्खनन कार्य किया गया है जिससे निम्नलिखित सास्कृतिक अनुक्रम प्रकाश मे आये

प्रथम सास्कृतिक काल – नवपाषाणकालीन

द्वितीय सास्कृतिक काल –ताम्रपाषाणयुगीन

तृतीय सास्कृतिक काल –एन0बी0पी0डब्लू0

चतुर्थ सास्कृतिक काल –शुग कुषाणकालीन

पचम सास्कृतिक काल– गुप्त कालीन

छॅठा सास्कृतिक काल– प्रारम्भिक मध्ययुगीन

जहॉ तक इस स्थल की प्रथम सस्कृति का सम्बन्ध है इसमे नवपाषाण युगीन पुरावशेषो की प्राप्ति होती है । इनमे रस्सीछाप से युक्त मृदभाण्ड लघुपाषाण उपकरण इत्यादि के मिलने से इस स्थल की प्रारम्भिक सस्कृति के रुप मे समझा जाता है । प्रस्तुत अध्याय मे मात्र नवपाषाण युगीन पुरास्थल के रुप मे झूॅसी का परिचय प्रस्तुत किया गया है (मिश्र और अन्य 2002 व्यक्तिगत सूचना) ।

महगडा

यह पुरास्थल (अक्षाश 24^{0} 54′ 50 उ0, देशान्तर 82^{0} 3 30″ पू0) इलाहाबाद से 80 किमी की दूरी पर दक्षिण पूर्व की आकर बेलन नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है । इस स्थल उत्खनन का कार्य 1976–77 ई0 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पुराविदो ने स्वर्गीय प्रो0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन मे किया था यहॉ से नवपाषाणयुगीन एकल सास्कृतिक जमाव प्रकाश मे आया है । यहॉ की नवपाषाणिक सास्कृति का साम्य इसी स्थल से ठीक दक्षिणी के ओर बेलन नदी के दाहिने किनारे पर स्थित कोलडिहवा नामक स्थल के प्रथम सास्कृतिक काल से तुलनीय है । सरचनाओ के प्रमाण गोलाकार अथवा अडाकार आवासीय झोपडियो के रूप मे प्राप्त हुए है । जिन स्थलो पर उत्खनन का क्षेत्र अत्यधिक सीमित था वहॉ से बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे अत्यधिक मात्रा मे प्राप्त हुए है । इनसे भी झोपडियो का ही प्रमाण मिलता है । चिराद, महगडा और इन्दारी के उत्खनन से गोलाकार कुल्हाडियॉ प्राप्त हुई है । महगडा के क्षैतिज उत्खनन से नव पाषाणिक अधिवास प्रक्रिया पर उल्लेखनीय प्रकाश पडता है । यहॉ की सभी उत्खनित झोपडियो के फर्श गोलाकार अथवा अडाकार है । गोलाकार झोपडियो का व्यास 6 40 मीटर और 4 30 मीटर के नीचे और अडाकार झोपडियो की न्यूनतम तथा अधिकतम धुरी क्रमश 3 40 मीटर से 6 मीटर और 2 80 मीटर से 4 20 मीटर के बीच की थी । इन झोपड़ियों के फर्शो का औसत आवासीय क्षेत्र 15 79 वर्ग मीटर है (मण्डल 1997 163–164)। इन फर्शो के चारो ओर स्तम्भ गर्तो के

प्रमाण है जिनमे बास अथवा लकडी के लट्ठे गाड दिये जाते थे । इन्ही पर झोपडियो की छत टिकी रहती थी । उनके बास-बल्ली और घास–फूस से निर्मित दीवाल भी बनायी जाती थी जिस पर मिट्टी का मोटा लेप भी लगाया जाता था, जिसके प्रमाण जली मिट्टी के टुकडो के रूप मे प्राप्त हुए हैं । चिराद के उत्खनन से उपलब्ध वृत्ताकार अथवा अर्द्धवृत्ताकार झोपडी जिसका व्यास 3 मीटर था। महगडा के उत्खनित फर्शों की स्थिति से ऐसा लगता है कि अधिवास प्रक्रिया मे इन झोपडियो की केन्द्रीय भूमिका थी । मकान प्राय सीधी रेखा मे न होकर गोलाई मे स्थित होते थे । एक मकान मे एक अथवा एक से अधिक झोपडियॉ सम्मिलित थी क्योकि दो या तीन झोपडियॉ एक दूसरे से जुडी हुई प्राप्त हुई है । इस तरह लगभग 1600 वर्गमीटर के क्षेत्र मे आठ घरो के प्रमाण प्राप्त हुए हैं । इनमे से प्रत्येक घर के आस–पास पर्याप्त खुली हुई भूमि थी । झोपडियो के फर्शों से उपलब्ध पुरासामग्रियो के विश्लेषण से झोपडियो के प्रयोग सम्बन्धी प्रमाण उपलब्ध हुए है। तीन झोपडियो वाले बडे घरो की एक झोपडी सभवत आवास के लिए प्रयुक्त की जाती थी और शेष दो उपकरण निर्माण खाद्य सामग्री, भोजन बनाने आदि के लिए प्रयुक्त की जाती थी ।

125 मीटर X 75 मीटर के क्षेत्र मे विस्तृत पशुओ का एक बडा बाडा महगडा के उत्खनन से उपलब्ध अधिवास सबधी एक महत्वपूर्ण प्रमाण के रूप मे देखा जा सकता है । इस बाडे के चारो ओर झोपडियो के फर्श विद्यमान है । सभवत बाडे की सुरक्षा की दृष्टि से बाडे के चारो ओर टट्र की दीवाले थी जैसा कि उपलब्ध स्तम्भगर्तो के निशान से प्रतीत होता है । इसमे प्रवेश के लिए तीन रास्ते थे । सभवत बाडे को बास बल्ली से निर्मित घास–फूस की दीवालो से घेरा तो गया था पर उसके ऊपर कोई छत नही थी, क्योकि बाडे के भीतर स्तम्भ गर्त का कोई प्रमाण उपलब्ध नही है । इस बाडे मे विभिन्न आयु वर्ग के पशुओ के खुरो के निशान उपलब्ध हुए है । इससे लगता है कि पशुओ को बाडो मे खुला ही रखा जाता था ।

महगडा के उत्खनन से इस स्थल के जनसख्या का अनुमान लगाने का प्रयास किया गया है । महगडा स्थल का सम्पूर्ण आवास क्षेत्र 8000 वर्ग मीटर है ।

इसमे से तीन हजार वर्ग मीटर का क्षेत्र इसके चारो ओर प्राकृतिक आवास के अन्तर्गत आता है और इस प्रकार शेष 5000 वर्ग मीटर क्षेत्र आवास के लिए प्रयुक्त किया जाता था । अभी तक पूरे आवासीय क्षेत्र के 1/3 भाग 1650 वर्गमीटर का उत्खनन किया गया है जिसमे अठारह झोपडियो आठ घर और एक बाडे के प्रमाण उपलब्ध हुए है । यदि प्रत्येक घर मे पॉच या छ व्यक्ति औसत मानते है तो लगभग 40 या 50 व्यक्ति का अनुमान किया जा सकता है घरो बाडे और उनके बाहर के खुले क्षेत्र तो अन्य कार्यों के लिए प्रयुक्त किये जाते रहे होगे । यह पूरे आवास क्षेत्र का 1/3 भाग है । इसका अर्थ यह हुआ कि पूरे अधिवास के लगभग आधे हेक्टेयर क्षेत्र मे लगभग 24 घर थे जिनमे कम से कम 141 से 150 व्यक्ति रह सकते थे । बाडे के उत्खनन से प्राप्त खुरो के निशान का क्षेत्र और पूरे बाडे के क्षेत्र का आकार लगभग 40 से 60 पशुओ का मान लिया गया है (शर्मा 1980)।

कोलडिहवा इलाहाबाद से दक्षिण पूर्व दिशा मे 80 किमी की दूरी पर बेलन नदी के दाहिने तट पर स्थित है। 1974–75 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पुराविदो ने इस स्थल को प्रकाश मे लाने का कार्य किया । नवपाषाण काल का यह प्रथम उत्खनित प्राथमिक सन्दर्भ का स्थल है जहॉ से पालिशदार, गोलाकार कुल्हाडियॉ प्राप्त हुई थी (छायाचित्र 26)। रस्सी के छाप वाले (रेखाचित्र 25) और खुरदुरी सतह वाले (रेखाचित्र 26) हाथ से बने मिट्टी के बर्तन विन्ध्य क्षेत्र के नवपाषाणिक स्थलो कोलडिहवा महगडा, पचोह, इन्दारी टोकवा (छायाचित्र 27, 28) और कुनझुन से प्राप्त हुए है जिन्हे इस क्षेत्र की नवपाषाणिक सस्कृतिक की चारित्रिक विशेषता माना जाता है (शर्मा और अन्य 1980)। इन स्थलो से लघुपाषाण उपकरण प्रचुर मात्रा मे प्राप्त हुए है (छायाचित्र 29)।

रेबा रे ने बिहार के मैदानी क्षेत्र और छोटा नागपुर पठार के नवपाषाणिक सस्कृति के स्थलो का अधिवास प्रक्रिया की दृष्टि से विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है (रे 1987)। झारखण्ड का छोटा नागपुर पठार, जहॉ आदिम जनजातियॉ रहती है, आधुनिक विकास से कोसो दूर है। इनमे से कई आदिम जातियॉ अभी भी आखेटक और स्थानान्तरित कृषि करते है और कुछ लोग स्थायी जीवन और कृषि पर निर्भर है। सथाल प्रजाति मैदानो घाटियो और गॉवो मे निवास करती है एवम्

छायाचित्र 26: कोलडिहवाः पालिशदार गोलाकार कुल्हाड़ियाँ
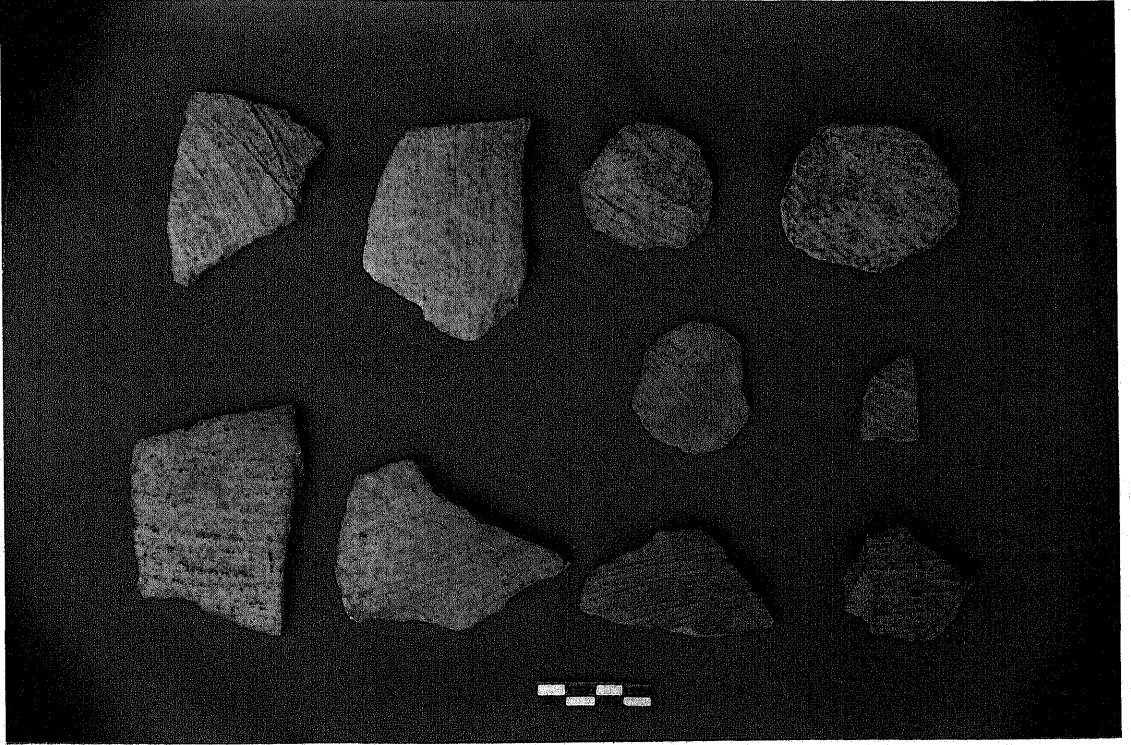
छायाचित्र : 27 टोकवाः हस्तनिर्मित खुरदुरे पात्र खण्ड़
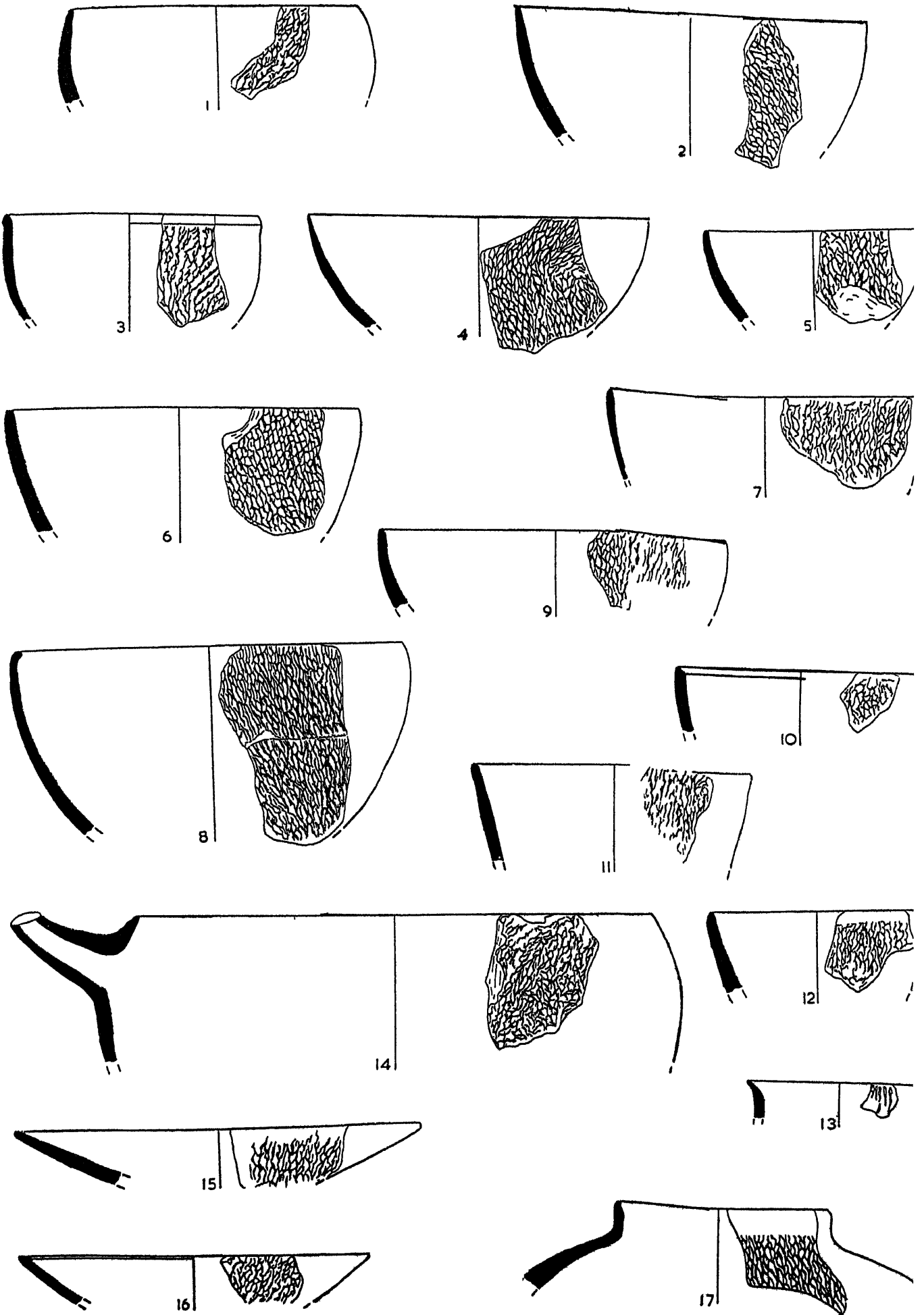
रेखाचित्र 25 महगढ़ा हस्तनिर्मित रस्सी छाप युक्त मृदभाण्ड
(शर्मा और अन्य 1980 के अनुसार)
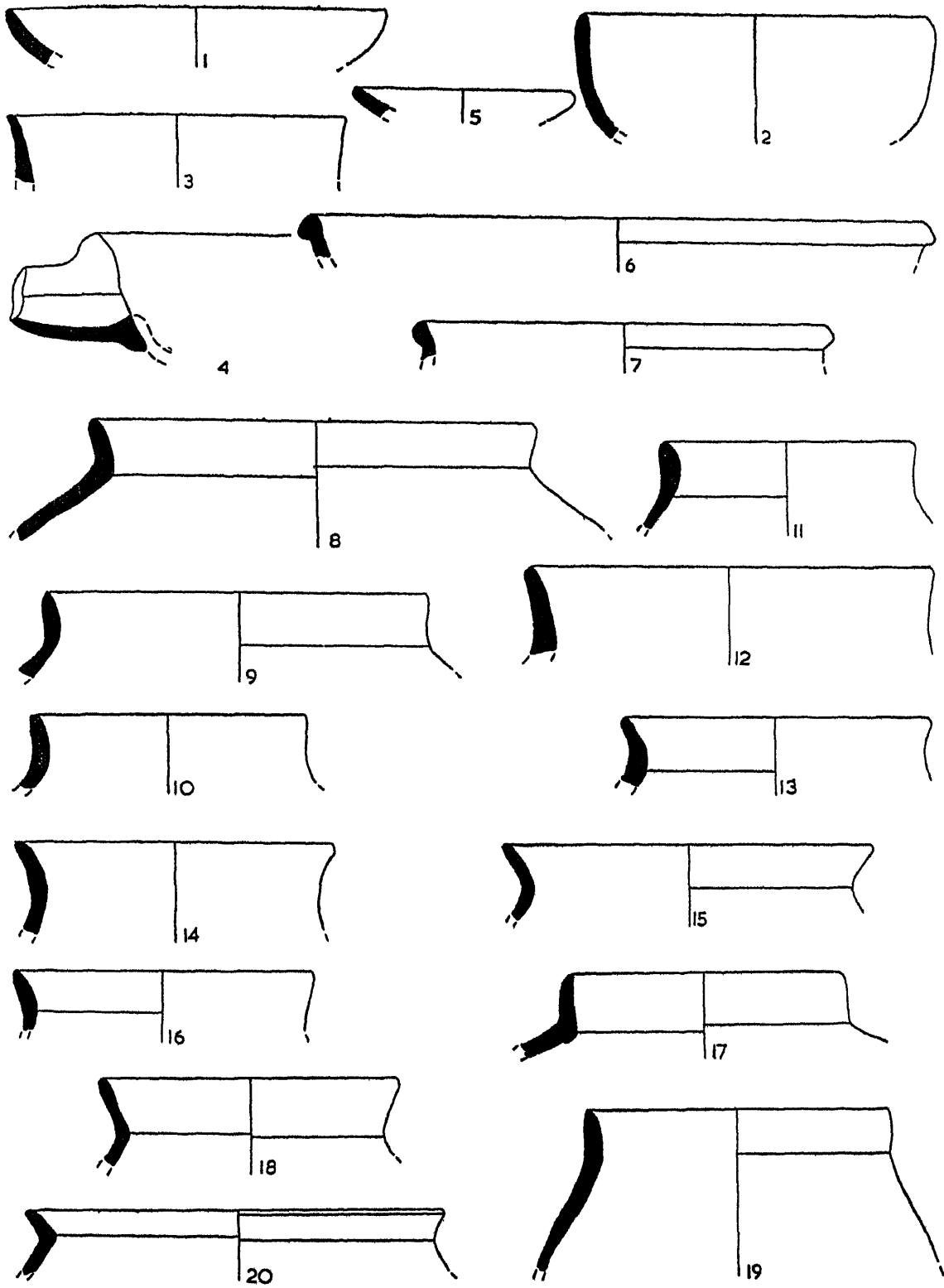
रेखाचित्र 26 महगडा हस्तनिर्मित खुरदुरे सतह वाले मृदभाण्ड
(शर्मा और अन्य 1980 के अनुसार)
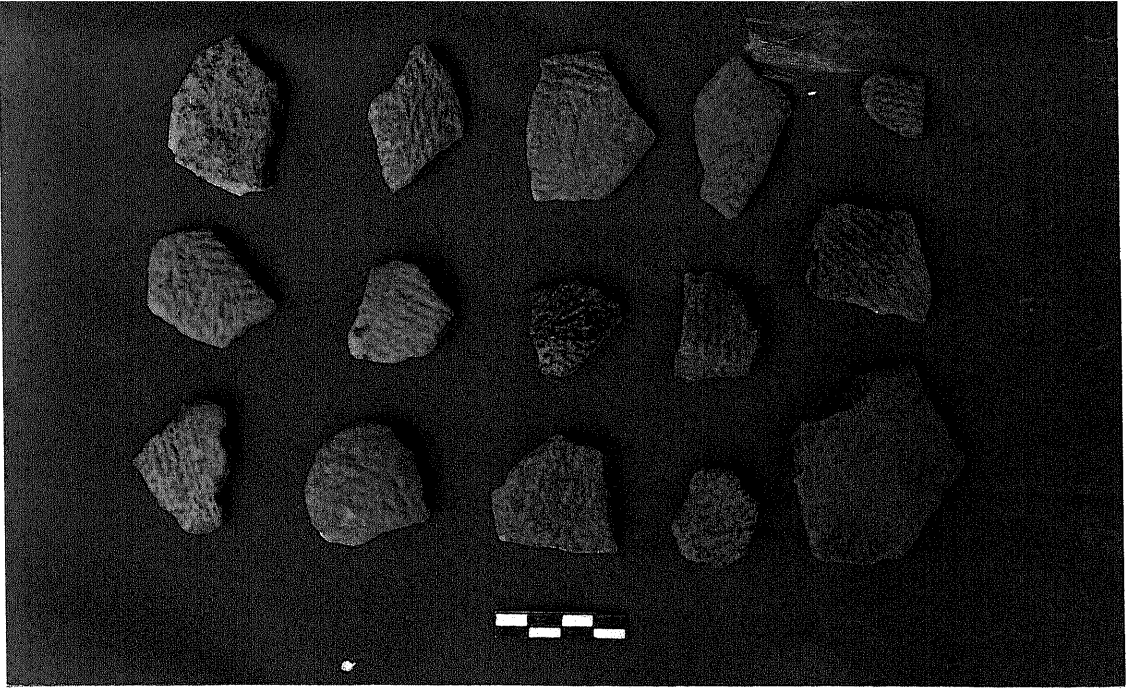
छायाचित्र 28ः टोकवाः हस्तनिर्मित रस्सी की छाप से युक्त पात्र खण्ड
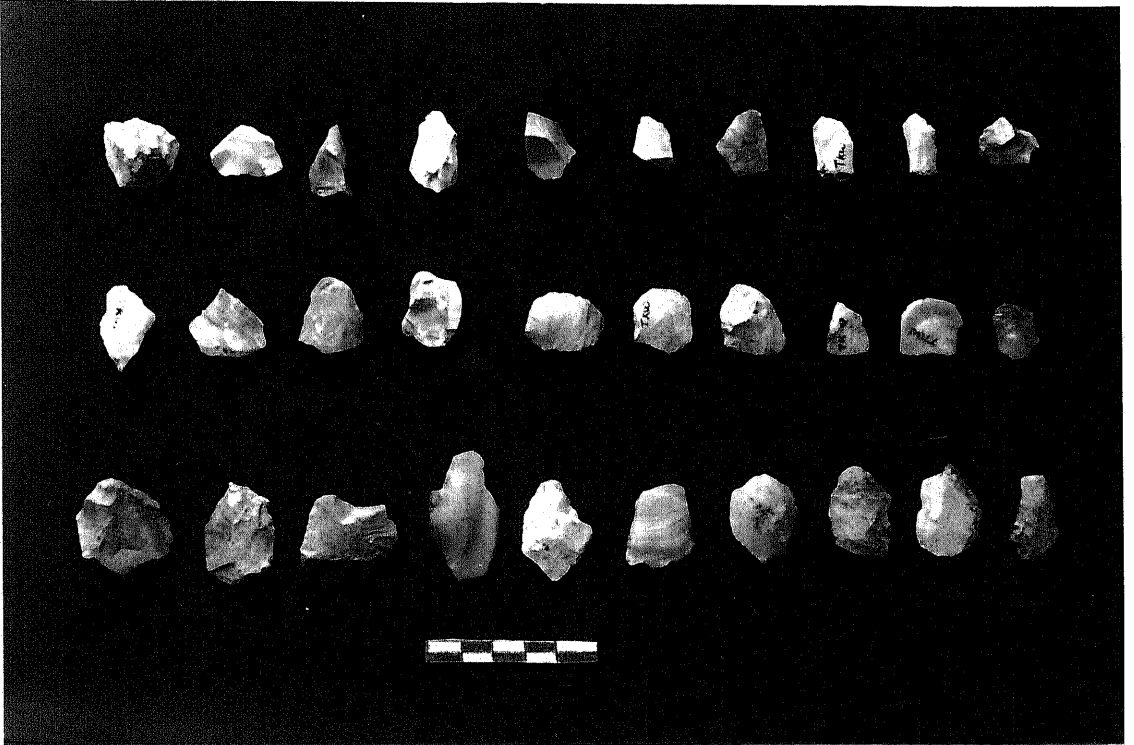
छायाचित्र : 29 टोकवाः नवपाषाणिक लघुपाषाण उपकरण

लैटेराइट भूमि पर कृषि करती है। यहॉ की मुख्य फसलो मे गेहूँ, धान मोटे अनाज दाले आदि उत्पादित किये जाते है (राय चौधरी 1971 17)।

बिहार और झारखण्ड के पठारी क्षेत्र सिह भूमि, सथाल परगना, मुगेर और गया जिलो मे बहुत से नवपाषाणिक सस्कृति के स्थल प्रतिवेदित किये गये है और इनमे से अधिकाश स्थलो पर उपकरण और अन्य सामग्री सतह पर बिखरी हुई मिली है । अधिकतर स्थलो की स्थिति और पुरा सामग्री के बारे मे पूरी जानकारी उपलब्ध नही है । इसलिए इनके सास्कृतिक तत्वो पर समुचित प्रकाश नही डाला जा सकता । सिह भूमि जनपद के स्थल सजय स्वर्णरेखा और हरकई नदी घाटी मे स्थित है । इन घाटियो के प्रमुख स्थलो मे सोनुआ लोटा पहाड वरदाब्रिज, बरूडीह उकरी दूँगी और सिनी है । इनमे से चक्रधरपुर से सात किलोमीटर पूर्व वरदाब्रिज स्थल विशेष उल्लेखनीय है (सेन 1950 1–12) । यह स्थल 1938 मे खोजा गया था । इस स्थल से बडी सख्या मे फलकित, घिसे हुए तथा पाटिशदार नवपाषाणकालीन कुल्हाडियॉ प्राप्त हुई थी ।यहॉ से निर्माण की विभिन्न अवस्थाओ से नवपाषाणिक उपकरण उपलब्ध हुए है जो नये अप्रयुक्त तथा बिल्कुल ही घिसे हुए नही है । इससे लगता है कि यह नवपाषाणकालीन उद्योग स्थल रहा होगा (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1960–61 14, *इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1962–63 6) 1958 के बाद इस क्षेत्र मे और कई नवपाषाणिक स्थलो की खोज की गयी । इन स्थलो के आधार पर कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र मे नवपाषाण कालीन मानव अपने अस्थायी आवास बनाकर निवास करता था । कुल्हाडियॉ वसुले, छेनियॉ, सिल–लोढे और गदाशीर्ष जैसे उपकरण यहॉ से एकत्रित किये गये है। उपकरणो के निर्माण के लिए इपिडियोराइट का उपयोग गया है । इन उपकरणो के साथ चाक से बने मिट्टी के बर्तन भी मिलते है । लेकिन स्तरीकरण के अभाव मे इनके नवपाषाणिक सदर्भ के बारे मे निश्चय के साथ कुछ नही कहा जा सकता । सजय घाटी के स्थलो मे सिली के समीप स्थित बरूडीह नामक स्थल विशेष उल्लेखनीय है। इस टीले पर छोटे पैमाने पर उत्खनन किया गया (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1962–63 9) । इस स्थल पर किये उत्खनन और सर्वेक्षण से कुल्हाडियॉ और अन्य वस्तुए, जले हुए चावल के दाने, जली मिट्टी

के टुकडे और हड्डी के टुकडे उपलब्ध हुए है । यहाॅ से हॅसिये की तरह का लौह उपकरण भी प्राप्त हुआ है । सेन ने यहाॅ की सस्कृति को दो चरणो मे विभाजित किया है । पहले के अन्तर्गत पालिशयुक्त कुल्हाडियाॅ बसूले व अन्य उपकरण, लकडी के कोयले हाथ से बने मिट्टी के बर्तन सम्मिलित है और दूसरे चरण मे जले हुए धान के दाने कोयले जली मिट्टी के टुकडे, चाक से बने मिट्टी के बर्तन और लौह उपकरण सम्मिलित किये गये है । दूसरे चरण से ही पालिश की गयी कुल्हाडियाॅ और अन्य पाषाण उपकरण मिलते है । इस स्थल के उत्खनन से स्तम्भ गर्त या सरचना के और कोई प्रमाण उपलब्ध नही हुए है लेकिन गर्त चूल्हो के कुछ प्रमाण यहाॅ से प्राप्त हुए है। रेबा रे के अनुसार सिहभूमि जनपद के अधिकाश नवपाषाणिक स्थल कृषि पर आधारित थे । कुल्हाडियो का प्रयोग जगल को साफ करने के लिए किया जाता था । कुछ कुल्हाडियाॅ लकडी काटने और छीलने मे प्रयुक्त की जाती थी । सिल और लोढे की उपस्थिति से भी कृषि का सकेत मिलता है । यद्यपि घरो के प्रमाण उपलब्ध नही हैं लेकिन बडी मात्रा मे सिल और लोढे तथा मिट्टी के बर्तन आवासीय स्थल का सकेत करते है ।

पठारी क्षेत्र का नवपाषाणिक मानव सभवत मैदान की प्राकृतिक सम्पदा के कारण आकर्षित होकर यहाॅ आया । वार्षिक बाढ के कारण उर्वर भूमि कृषि के लिए अधिक उपयुक्त थी । बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के नवपाषाणिक स्थल इस सन्दर्भ मे विशेष उल्लेखनीय है ।

चतुर्थ अध्याय

ताम्रपाषाणयुगीन सस्कृति

विगत चार दशको मे मध्य गगा घाटी मे किये गये पुरातात्विक अन्वेषणो से ताम्रपाषाणिक सस्कृति के बहुत से स्थल प्रकाश मे आये हैं (रेखाचित्र 27)। इन स्थलो से उत्तर पूर्वी भारत मे ताम्रपाषाणिक सस्कृति का एक नया अध्याय प्रकाश मे आया है। ताम्र धातु के ज्ञान एव तत्सम्बन्धित तकनीकी विकास के नवीन योगदान से इस सस्कृति को विशिष्टता प्रदान की गयी है। यही इस युग की मृदभाण्ड कला एव अन्य उद्योगो के विकास के आधार पर इस सस्कृति का स्वरूप पूर्ववर्ती सस्कृति से पृथक पहचान रखता है। इन स्थलो मे उल्लेखनीय स्थल है – उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ जनपद मे पुरेदेवजानी, पेलखवार और भेवानी (पाल 1987 196–200) जौनपुर मे एकहुऑ (इस स्थल की खोज प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के डा0 जे0 एन0 पाल श्री बी0 बी0 मिश्र एव डॉ0 मानिक चन्द्र गुप्त ने 1987 मे की थी) वराणसी मे राजघाट (नारायण एव राय 1977), प्रहलादपुर (नारायण एव राय 1967) सरायमोहना (इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1967–68 48–49), कमौली (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1963–64 58), गाजीपुर मे मसोनडीह (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1963–64 57–58), आजमगढ मे राजा नहुष का टीला (नेगी 1975 56–58), बस्ती मे बनवारी घाट (भटट 1970 78–88) गुलरहिया घाट (भट्ट 1970 78–88) लहुरदेवा (चतुर्वेदी 1985 101–108) सूसीपार (चतुर्वेदी 1985 101–108), रामगढघाट (चतुर्वेदी 1985 101–108) बडा गॉव (चतुर्वेदी 1985 101–108), और गेरार (चतुर्वेदी 1985 101–108), बलिया मे खैराडीह (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1981–82 67–70) भूनाडीह (सिह 1996) गोरखपुर मे सोहगौरा (चतुर्वेदी 1985 101–108) नरहन (सिह 1994) व इमलीडीह (सिह 1990) तथा बिहार के सारन जनपद मे चिराद (वर्मा 1969 201–211), और माझी (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू*

मध्य गगाघाटी के प्रमुख ताम्रपाषाणिक उत्खनित स्थल
N
INDIA
AREA OF MAP
INDEX
CHALCOLITHIC SITES
DISTRIC
SRAVASTI
PIPRAHWA
GANWARIA
RAPTI R
AYODHYA
Faizabad
DHURIAPAR
Gorakhpur
Deoria
NARHAN
GHAGHARA R
Sultanpur
Azamgarh
KHAIRADIH
MANJHI
VAISALI
GOMTI R
Bela-Pratapgarh
Jaunpur
Ballia
Chapra
Ghazipur
Arrah
Patna
CHECHAR-KUTUBPUR
Allahabad
Varanasi
GANGA R
YAMUNA R
Mirzapur
SENUWAR
LAHARIA-DIH
BURHI GANDAK R
GANDAK R
Muzaffarpur
KOSI R
20 0 100 KM
28
27°
26°
25
N
E
82°
83
84
85°
86°
87°
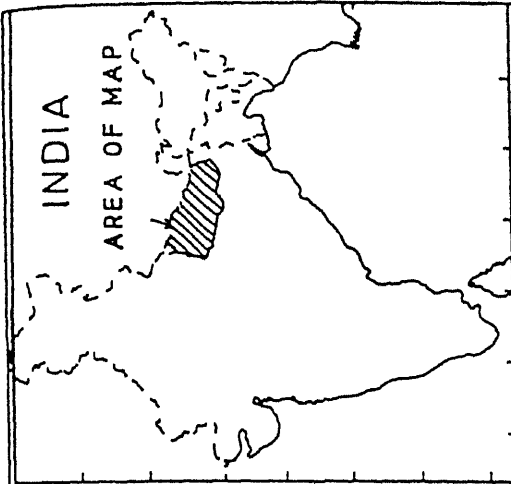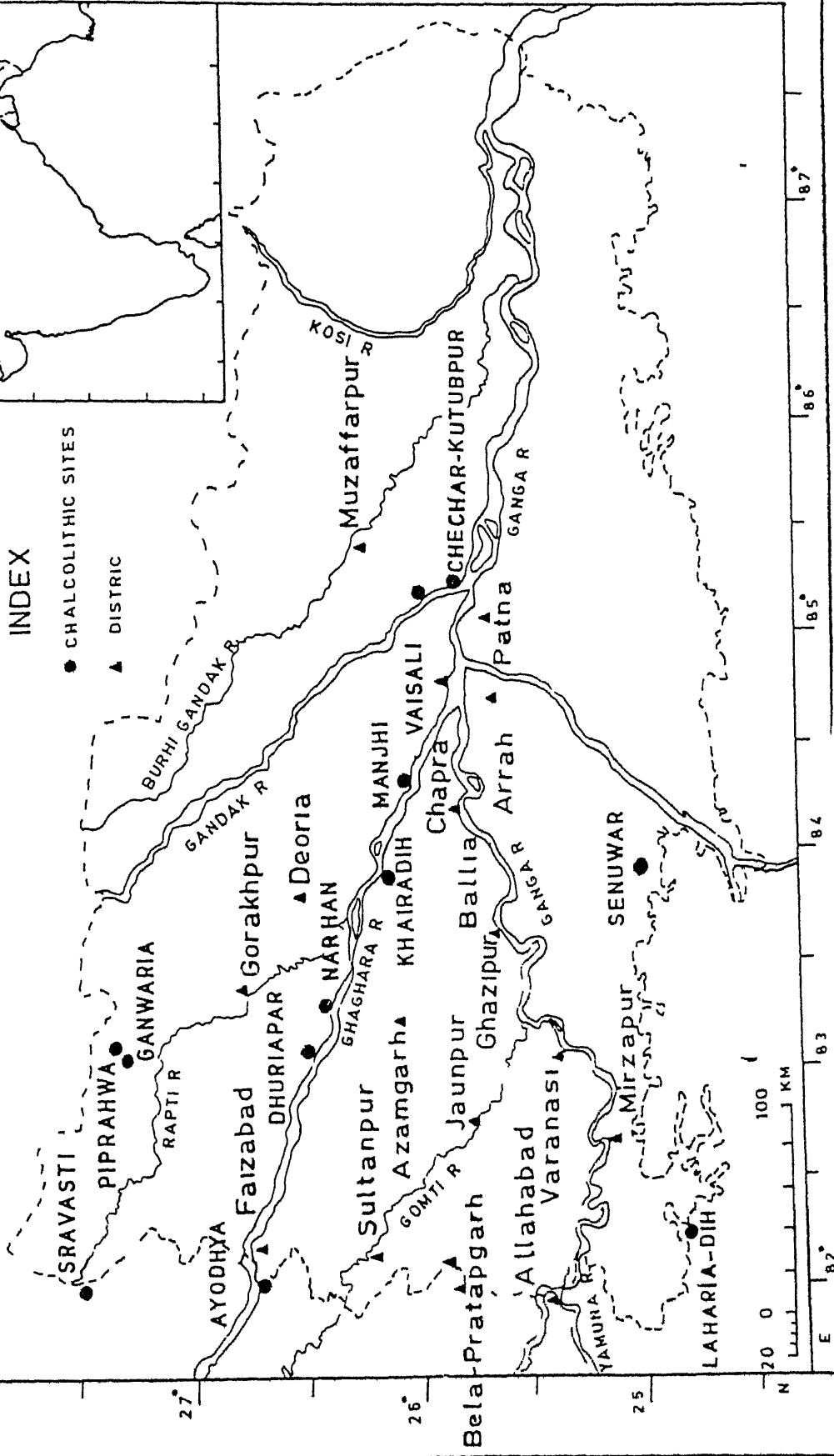
1983–84 15–16 1984–85 12–13), पटना जनपद मे मानेर (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1984–85 11–12) भागलपुर जनपद मे ओरियप (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1966–67 6–7) और चम्पा (सिन्हा 1978 15–16), वैशाली जनपद मे चेचर कुतुबपुर (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1977–78 17–18), गया जनपद मे सोनपुर (सिन्हा एव वर्मा 1970) और ताराडीह (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1981–82 10–12, 1982–83 16–25 1983–84 12–13, 1984–85 12–13), और रोहतास जनपद मे सेनुवार (सिह 1992 77–84, 1995–96 75–93 2001–2002 109–118)।

इन स्थलो मे से राजघाट, प्रहलादपुर, सरायमोहना, कमौली, मसोनडीह सोहगौरा, नरहन इमलीडीह भूनाडीह भुरियापार खैराडीह, चिराद माझी, मनेर, ओरियप, चम्पा चेचर कुतुबपुर सोनपुर, ताराडीह और सेनुवार का उत्खनन किया गया है। कौशाम्बी, श्रगवेरपुर और झूँसी के प्राचीनतम सास्कृतिक धरातल को पात्र परम्पराओ के आधार पर ताम्रपाषाणिक सस्कृति के अन्तर्गत रखा जा सकता है। मध्य गगा घाटी के दक्षिणवर्ती विन्ध्य क्षेत्र कें उत्खननित स्थलो मे ककोरिया (मिश्र एव मिश्र 2000 68) और कोलडिहवा (मिश्र एव मिश्र 2000 68–69) से मध्य गगाघाटी के ताम्रपाषाणिक सस्कृति के न केवल उद्‌भव पर प्रकाश पडा है अपितु दोनो के पारस्परिक सास्कृतिक सम्पर्क भी उजागर हुए है। मध्य गगा घाटी के उपर्युक्त उत्खनित स्थलो का सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है

कौशाम्बी

कौशाम्बी मे (अक्षाश 25^0 20′ 30 उ0 देशान्तर 81^0 23 12″ पू0) पूर्वी प्रवेश–द्वार पर किये गये उत्खनन से चार सास्कृतियो के विषय मे साक्ष्य मिले हैं जिनका वर्गीकरण मिट्टी के बर्तनो के आधार पर किया गया है । प्रथम सास्कृतिक काल की प्रमुख पात्र–परम्पराओ मे लाल–परम्परा है जिस पर कभी–कभी चित्रण अभिप्राय मिलते है । कृष्ण–लोहित पात्र–खण्ड भी प्रथम सास्कृतिक काल से मिले है। पात्र चाक पर बने हुए है जिन पर प्रलेप (स्लिप) लगाने के साक्ष्य मिलते है । प्रमुख पात्र–प्रकारो मे कटोरे थालियॉ तथा तसले (बेसिन) आदि हैं । प्रथम से

लेकर चतुर्थ निर्माण काल तक इस प्रथम सास्कृतिक काल से सम्बद्ध हैं । पुरातात्विक आधार पर कालक्रम 1165 ई0 पू0 से 885 ई0पू0 के बीच मे निर्धारित किया गया है । कौशाम्बी मे जो लोग सबसे पहले रह रहे थे वे ग्रामीण सस्कृति के लोग थे लेकिन यहॉ के तीसरे निर्माण–काल से नगर–जीवन के साक्ष्य मिलने लगते हैं ।

द्वितीय सास्कृतिक काल चित्रित धूसर पात्र–परम्परा से सम्बन्धित है। पॉचवे से लेकर आठवे तक चार निर्माण–काल इससे सम्बन्धित है । ऊपरी गगा घाटी मे मिलने वाली चित्रित धूसर पात्र–परम्परा तथा कौशाम्बी की इस तरह की पात्र–परम्परा के बीच कुछ विभिन्नताऍ दृष्टिगोचर होती है । कौशाम्बी से प्राप्त पात्र–खण्ड अपेक्षाकृत मोटे है । इनका धूसर वर्ण कुछ हल्के रग का तथा चित्रण–अभिप्राय भी कम मिलते है । थाली, कटोरे प्रमुख पात्र प्रकार है । चित्रित धूसर पात्र परम्परा के साथ कृष्ण–लोहित मृदभाण्ड परम्परा (ब्लैक एण्ड रेड वेयर) बहुतायत से मिलती है । द्वितीय सास्कृतिक काल का काल–क्रम 885 ई0 पू0 से लेकर 605 ई0 पू0 के बीच निर्धारित किया गया है ।

श्रृगवेरपुर

श्रृगवेरपुर पुरास्थल (अक्षाश 25° 35′ 22 उ0 देशान्तर 81° 38 40′ पू0) के उत्खनन से प्राप्त प्रारम्भिक दो सस्कृतियॉ ताम्रपाषाण कालीन सस्कृति के अर्न्तगत रखी जा सकती है । प्रथम सास्कृतिक काल (1050–1000 ई0 पू0) गैरिक मृद्भाण्ड सस्कृति का है । गैरिक मृदभाण्डो के अतिरिक्त सरकण्डो की छाप से युक्त मिट्टी के जले हुए टुकडे मिले है जिनसे इगित होता है कि ये लोग बॉस–बल्ली से निर्मित झोपडियॉ बनाते थे । मृण्मय चक्रिक खण्ड और कार्नेलियन के फलक का एक खण्डित टुकडा मिला है । इसके पश्चात् यह पुरास्थल सभवत कुछ समय तक वीरान रहा।

द्वितीय सास्कृतिक काल (950–700 ई0 पू0) की प्रमुख पात्र–परम्पराओ मे कृष्ण–लेपित और चमकाई गई धूसर पात्र–परम्परा का उल्लेख किया जा सकता

है। हड्डी के बने बेधक और बाण–फलक हड्डी का एक लटकन जैस्पर तथा मिट्टी के बने मनके अन्य महत्वपूर्ण पुरावशेष है ।

श्रृगवेरपुर के उत्खनन से मध्य गगा घाटी की प्रारम्भिक सस्कृति के रूप मे गैरिक मृद्भाण्डो की प्राप्ति विशेष महत्वपूर्ण है । द्वितीय सास्कृतिक काल की कृष्ण–लोहित, कृष्ण लेपित एव धूसर पात्र–परम्परा पश्चिमी बिहार तथा विन्ध्य क्षेत्र की ताम्रपाषाणिक सस्कृति से अनुप्राणित ानी जा सकती है ।

झूँसी

झूँसी की (अक्षाश 25^0 26 10 उ0 देशान्तर 81^0 54 30 पू0) पहचान प्रतिष्ठानपुर से की गई है । गगा–यमुना के सगम पर इलाहाबाद नगर के ठीक सामने स्थित लगभग 3 किलोमीटर के क्षेत्र मे विस्तृत इस टीले (छायाचित्र 30) का अधिकाश भाग वर्तमान झूँसी गॉव द्वारा आबाद है । झूँसी के उत्खनन एव खोज सम्बन्धी विवरण पूर्ववर्ती अध्याय मे लिखा जा चुका है। यहॉ के उत्खनन से प्राप्त ताम्रपाषाण युगीन सस्कृति के सम्बन्ध मे ही उल्लेख आवश्यक है । यहॉ के द्वितीय सास्कृतिक काल का सम्बन्ध ताम्रपाषाण काल से है । इस सास्कृतिक जमाव की मोटाई 4 36 मीटर मिलती है । यहॉ मृदभाण्ड चूल्हे तथा स्तम्भगर्त इस सस्कृति का प्रतिनिधित्व करते है (छायाचित्र 31) । इसको दो उपकालो मे विभाजित किया गया है द्वितीय ए तथा द्वितीय बी । द्वितीय ए लौह रहित तथा द्वितीय बी लौह युक्त ताम्रपाषाणिक सस्कृति का प्रतिनिधित्व करते है । यहॉ की मृदभाण्ड कला विन्ध्य क्षेत्र एव मध्यगगा घाटी ताम्रपाषाणिक के सन्दर्भ मे प्राप्त होती है । प्रमुख पात्र प्रकारो मे घडे (छायाचित्र 32 33) कटोरे , होठदार कटोरे (छायाचित्र 34), तश्तरियॉ गिलास (छायाचित्र 35) आदि का उल्लेख किया जा सकता है। कुछ चित्रित पात्र खण्ड भी प्राप्त हुए है (छायाचित्र 36) । अन्य पुरासामग्रियो मे हड्डी के बने बाणाग्र (छायाचित्र 37) उपरत्नो और मिट्टी के बने मनको (छायाचित्र 38) का उल्लेख किया जा सकता है। इस सन्दर्भ मे ककोरिया (मिश्र 1999) कोलडिहवा (पाल 1986) राजानल का टीला (तिवारी और अन्य 1996–97 और 1997–1998)

छायाचित्र 30: झूँसी समुद्रकूप टीले का विहंगम दृश्य

छायाचित्र 31: झूँसी: ताम्रपाषाणिक धरातल के उत्खनन का दृश्य
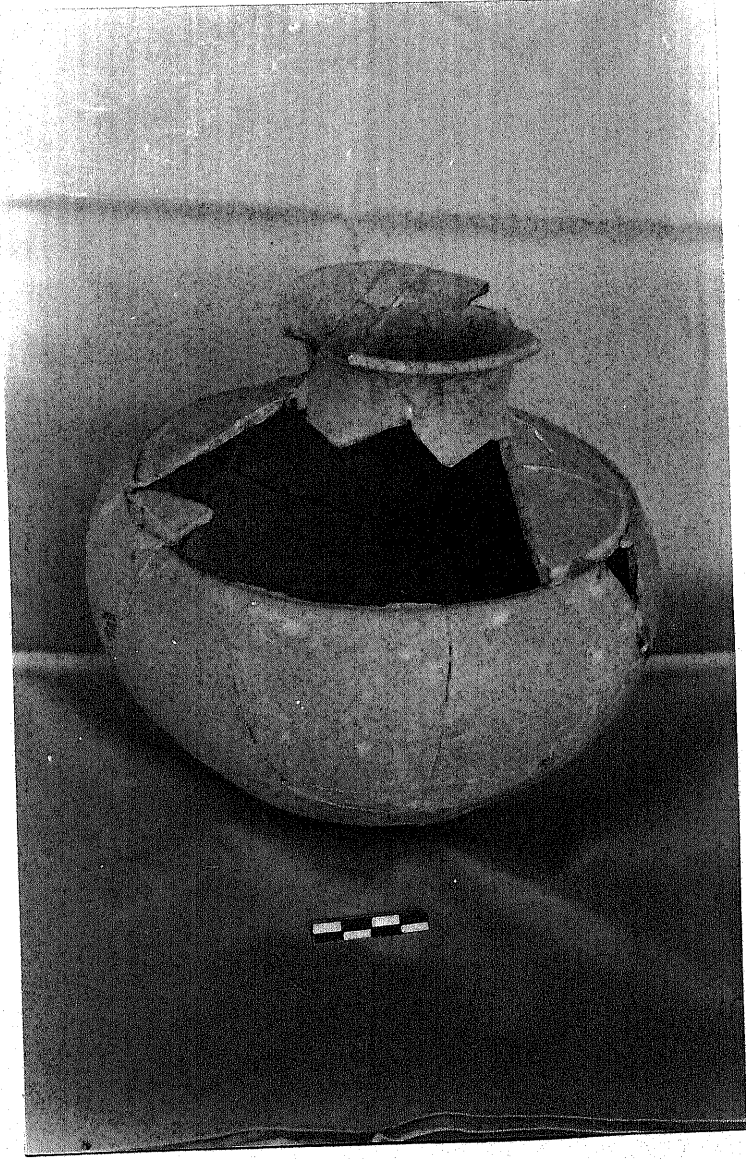
छायाचित्र 32: झूँसी: ताम्रपाषाणिक घड़ा
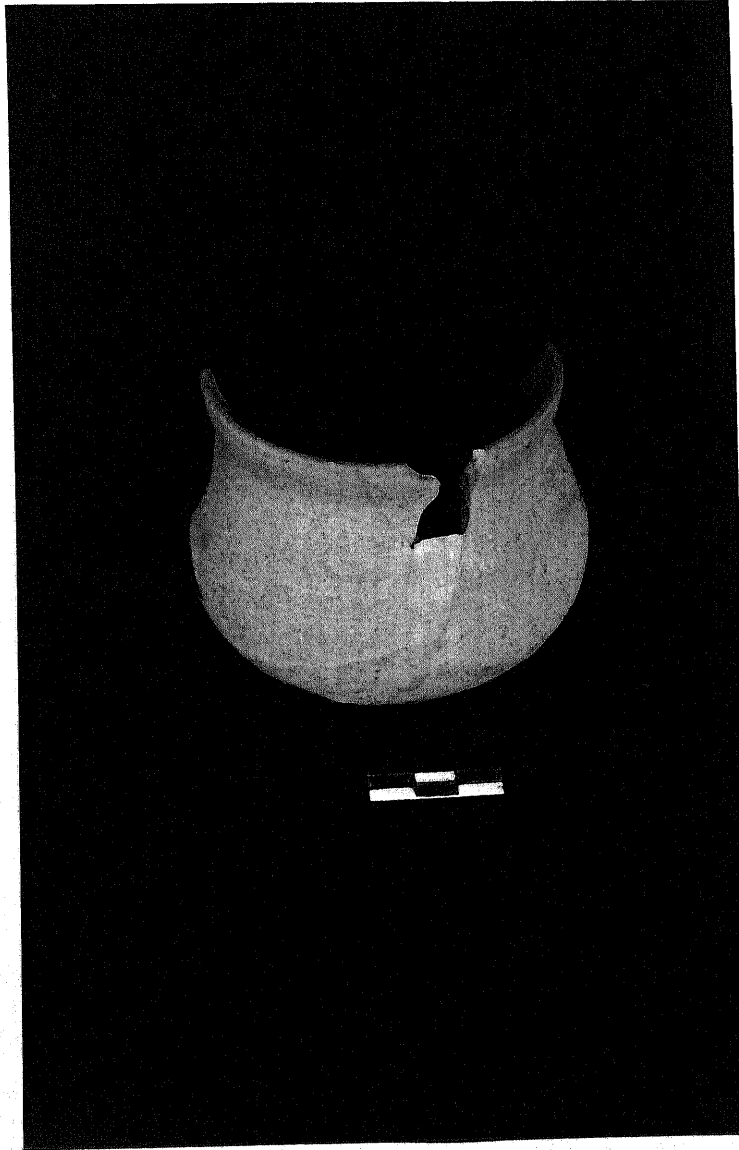
छायाचित्र 33: झूँसी: ताम्रपाषाणिक छोटे आकार का घड़ा

छायाचित्र 34: झूँसी: ताम्रपाषाणिक होंठदार कटोरा
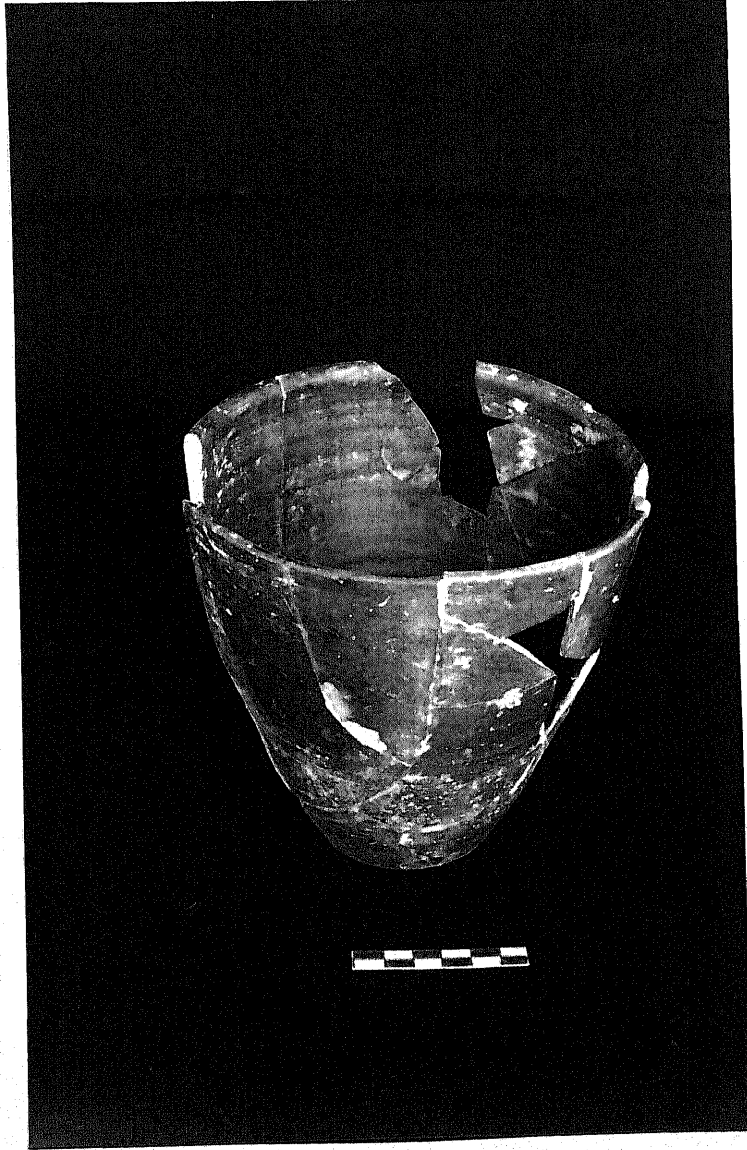
छायाचित्र 35: झूँसी: ताम्रपाषाणिक गिलास

छायाचित्र 36: झूँसी: ताम्रपाषाणिक चित्रित पात्र खण्ड़

छायाचित्र 37: झूँसी: अस्थि निर्मित बाणाग्र
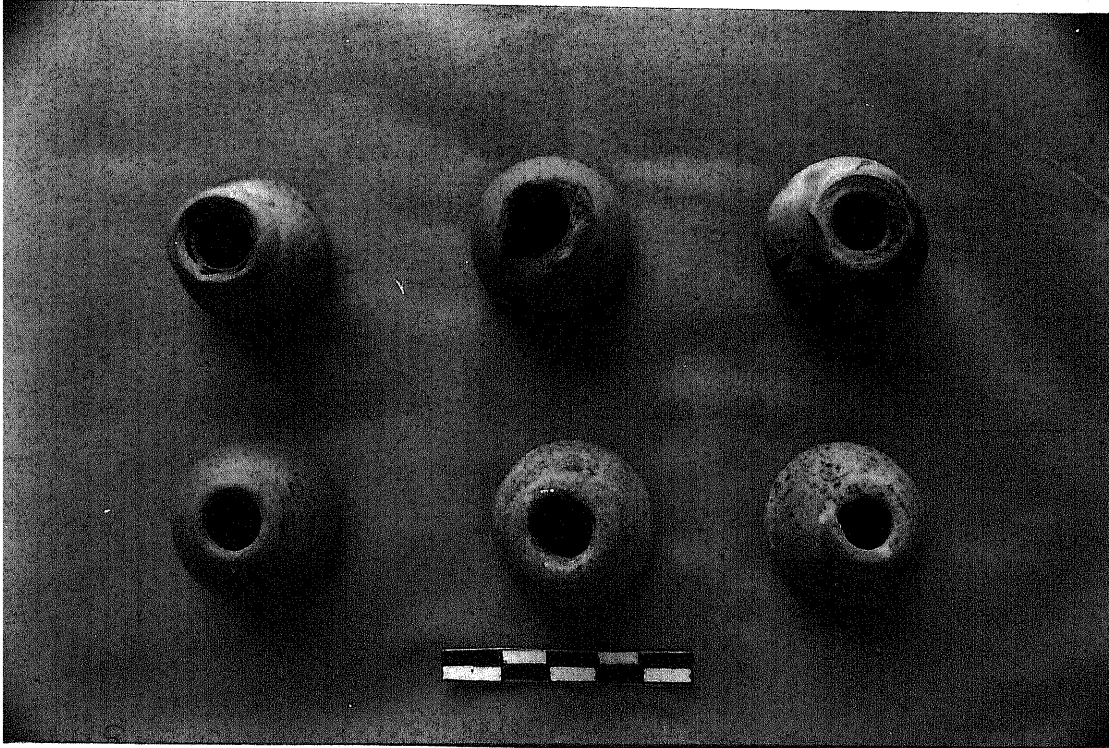
छायाचित्रः 38 झूँसीः घटाकृति के मिट्टी के मनके

मल्हार, इमलीडीह, खैराडीह चिराद सेनुवार ताराडीह प्रहलादपुर अगियावीर इत्यादि पुरास्थलो का उल्लेख तुलनात्मक अध्ययन से दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं ।

अगियाबीर

यह पुरास्थल (अक्षाश 25^0 13 52 उ0, देशान्तर 82^0 38 41 पू0) मिर्जापुर मे गगा नदी के बाये किनारे पर वाराणसी– इलाहाबाद राजमार्ग पर कटका रेलवे स्टेशन से दो किमी दक्षिण पूर्व मे स्थित है । यह उल्लेखनीय तथ्य है कि यह स्थल मिर्जापुर सन्त रविदास नगर एव वाराणसी जनपदो की सीमाओ के सन्धि स्थल पर स्थित है यह प्राचीन टीला गगा की बाढ मे अशत निमज्जित हो गया हे । इसको प्रकाश मे लाने का श्रेय बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरुषोत्तम सिह एव अशोक कुमार सिह को है । यहॉ के उत्खननो के परिणामस्वरूप निम्नलिखित सास्कृतिक अनुक्रम (सिह और सिह 1999–2000 31–56) प्रकाश मे आये है

प्रथम सास्कृतिक काल– ताम्रपाषाण युगीन

द्वितीय सास्कृतिक काल– प्राक् एन0 बी0 पी0 डब्लू0 (लौह युक्त) युगीन

तृतीय सास्कृतिक काल– एन0 बी0 पी0 डब्लू0 युगीन

चतुर्थ सास्कृतिक काल– शुगकुषाण युगीन

यहॉ के प्रथम एव द्वितीय सास्कृतिक काल की सस्कृति समसमायिक मध्य गागेय मैदान की सस्कृति के समतुल्य है । इनमे इमलीडीह खुर्द, धुरियापार, वैना, खैराडीह, इत्यादि घाघरा और उसकी सहायक नदियो के तट पर स्थित है । इसी क्रम मे सोनभद्र जनपद मे राजानल का टीला, चन्दौली जनपद मे स्थित, मल्हार इत्यादि उत्खनित पुरास्थलो का उल्लेख किया जा सकता है । अगियाबीर का सस्कृतिक अनुक्रम इलाहाबाद जनपद मे स्थित झूँसी नामक पुरास्थल से साम्य रखते है ।

राजघाट

यह पुरास्थल (अक्षाश 25^0 4 30 उ0 देशान्तर 83^0 1 30′ पू0) वाराणसी मे गगा के बाये तट पर स्थित है जिसकी पहचान प्राचीन वाराणसी (काशी) के रूप मे की गयी है । इस स्थल का उत्खनन बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के ए0 के0 नारायण और टी0 एन0 राय ने कई वर्षो तक किया (नारायण एव राय 1976, 1977)। इन उत्खननो से 800–700 ई0 पू0 से लेकर परवर्ती मध्य काल तक के छ क्रमिक सास्कृतिक चरणो के प्रमाण उपलब्ध हुए है । इनमे से प्रथम दो चरणो का सम्बन्ध प्रस्तुत अध्ययन काल से है।

प्रथम सास्कृतिक काल 800–700 ई0 पू0 से लेकर 300–200 ई0 पू0 के मध्य रखा जा सकता है । इसे पुन तीन चरणो– प्रथम 'ए, प्रथम–'बी' और प्रथम सी के अन्तर्गत विभाजित किया गया है । इन तीनो ही चरणो मे लौह उपकरण उपलब्ध हुए हैं । प्रथम चरण प्राक् एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति का है । 3 55 मीटर के इस सास्कृतिक जमाव से मुख्यत ब्लैक–एड–रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर (कृष्ण लेपित पात्र परम्परा) तथा रेड वेयर (लाल पात्र परम्परा) के पात्र उपलब्ध हुए है । इसी तरह के ब्लैक स्लिप्ड वेयर (कृष्ण लेपित पात्र परम्परा) हस्तिनापुर के प्राक् एन0बी0पी0डब्लू0 जमाव से भी प्राप्त हुए थे । उल्लेखनीय है कि राजघाट के ब्लैक स्लिप्ड वेयर के पात्र हस्तिनापुर के द्वितीय चरण मे मिलने वाले पी0जी0डब्लू0 (चित्रित धूसर पात्र परम्परा) के पात्रो से साम्य रखते है । राजघाट के कुछ ब्लैक एड रेड वेयर (कृष्ण लेपित पात्र परम्परा) के पात्रो पर सफेद रग से चित्र बना हुआ है । चित्रित अभिप्रायो मे साधारण स्ट्रोकार्बन लहरदार रेखाए आदि सम्मिलित है । कभी–कभी इन चित्रो को बनाने के लिए मोटे ब्रश का भी प्रयोग किया गया है । इसी धरातल से चर्ट पर बना हुआ एक ब्लेड उपकरण भी उपलब्ध हुआ है । उत्खनन की खन्ती मे इस धरातल से कोई लौह उपकरण नही मिला था और लाल पात्र परम्परा के कुछ बर्तनो का आकार–प्रकार चिराद के ताम्रपाषाणिक धरातल के बर्तनो से साम्य रखता है । इस आधार पर इस धरातल को ताम्रपाषाणिक सस्कृति से समीकृत किया गया है (राय 1983 51)।

प्रथम बी चरण मे पहली बार एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के पात्र मिलते है । लेकिन पूर्ववर्ती ब्लैक–एण्ड–रेड (कृष्ण लेहित पात्र परम्परा) वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर (कृष्ण लेपित पात्र परम्परा) के पात्र चलते रहते है । यद्यपि उनकी सख्या घट जाती है । पकी मिट्टी के ईटो का प्रयोग भी इस चरण मे दिखायी देता है । प्रथम सी' चरण और द्वितीय सास्कृतिक काल परवर्ती एन0 बी0 पी0 डब्लू0 सस्कृति से सम्बन्धित किये गये है जिन्हे 400–300 ई0 पू0 से लेकर ईसा की प्रारम्भिक शताब्दी के मध्य रखा गया है । इस समय यहॉ नगरीकरण के प्रमाण मिलने लगते है । यहॉ का तीसरा सास्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के बाद का है जिसमे रेड पालिस्ड वेयर (लाल लेपित पात्र परम्परा) के बर्तन मिलते है ।

प्रहलादपुर

प्रहलादपुर नामक पुरास्थल (अक्षाश 25^0 26' 30' उ0 देशान्तर 83^0 27 30'' पू0) गगा के दाहिने तट पर चन्दौली जनपद मे स्थित है । यह स्थल 1387 X 415 मीटर के क्षेत्र मे विस्तृत है । बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के ए0 के0 नरायाण एव टी0 एन0 राय ने 1963 मे इस स्थल का उत्खनन किया था। यहॉ के 3 91 मीटर आवासीय जमाव को प्रारम्भिक मध्य और परवर्ती (प्रथम ए', प्रथम बी' और प्रथम सी') चरणो मे विभाजित किया गया है । प्रथम 'ए चरण से ब्लैक स्लिप्ड वेयर (कृष्ण लेपित पात्र परम्परा), रेड वेयर, पी0जी0डब्लू0, (चित्रित धूसर मृदभाण्ड), मोटे प्रकार का रेड वेयर और सादे ग्रे वेयर के बर्तन प्राप्त हुए है । इस चरण से लौह उपकरण भी उपलब्ध हुए है । अन्य पुरासामग्रियो मे हड्डी के बाणाग्र मृण्मूर्तियॉ पाटरी डिस्क, अगेट कार्नेलियन और मिट्टी के मनके उपलब्ध हुए हैं । प्रथम 'बी चरण मे पूर्णत विकसित एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के प्रमाण मिलते है। इसके साथ प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति की अन्य सामग्रियॉ– हड्डी के बाणाग्र, मिट्टी और मिट्टी के बर्तनो के दृश्य, मिट्टी के कोन और मिट्टी के बने मनके उपलब्ध हुए थे । पशुओ और मनुष्यो की मृण्मूर्तियॉ, लेख रहित आहत मुद्राए मिट्टी के वलयकूप भी इस चरण से प्राप्त हुए है। प्रथम 'सी' उपचरण परवर्ती एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र

परम्परा) सस्कृति से सम्बद्ध है जिसमे पकी मिट्टी के डिस्क और हड्डी के बाणाग्रो की सख्या कम हो जाती है । लेकिन अन्य पुरासामाग्रियॉ चलती रहती है । पुरातात्विक सामग्रियो के आधार पर प्रथम ए उपचरण को 673 ई0 पू0 का समय प्रदान किया गया है । यहॉ के उपलब्ध एक रेडियो कार्बन (सी–14) तिथि टी0 एफ0 136, 765 बी0 सी0 है । इसके आधार पर इस चरण का प्रारम्भ आठवीं शती ई0 पू0 माना गया है (राय 1997)। यद्यपि इसके प्रथम 'ए चरण से ताम्रपाषाणिक सस्कृति के ब्लैक एड रेड वेयर, ब्लैक स्पिल्ड वेयर और चाल्सिडेनी का एक कोर भी उपलब्ध हुआ है, लेकिन इसी धरातल से लोह सामग्रियॉ मिलने के कारण इसे प्रारम्भिक लौह काल से सम्बद्व किया गया है । फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि इस स्थल पर लौह सस्कृति के पहले ताम्रपाषाणिक सस्कृति का एक धरातल था जिसके वास्तविक काल निर्धारण के लिए यहॉ पर और अधिक उत्खनन कार्य करने की आवश्यकता है । प्रथम ए चरण मे मिलने वाली पुरासामग्री के आधार पर टी0 एन0 राय ने इसे ताम्रपाषाणिक सस्कृति और प्रारम्भिक लौह कालीन सस्कृति के सक्रमण काल से समीकृत किया है (राय 1997 298–300)।

सरायमोहना

यह पुरास्थल वाराणसी शहर के उत्तर–पूर्वी छोर पर वरूणा नदी के बाये तट पर स्थित है । राजघाट के उत्खनन के साथ ही 1960–61 मे इस स्थल की खोज की गयी थी और 1967–68 मे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के ए0 के0 नारायण ने इसका सीमित क्षेत्र मे उत्खनन किया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1967–68 48–49)। इस स्थल पर किये गये उत्खनन से दो सास्कृतिक कालो के प्रमाण उपलब्ध हुए है जिनके बीच मे एक अन्तराल है । प्रथम सास्कृतिक काल को प्रथम ए प्रथम बी और प्रथम सी (प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 एन0बी0पी0डब्लू0 और परवर्ती एन0बी0डब्लू0) चरणो मे विभाजित किया गया है । इन तीनो ही चरणो से प्रहलादपुर और राजघाट की तरह की पात्र–परम्पराये और अन्य सामग्रियॉ उपलब्ध हुई है । यहॉ का द्वितीय सास्कृति काल परवर्ती मध्य काल से सम्बन्धित है ।

कमौली

उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद मे स्थित राजघाट के उत्खनन के समय इस स्थल की भी खोज की गयी थी और 1963—64 मे छोटे पैमाने पर उत्खनन किया गया । सॉचे दो सास्कृतिक कालो के प्रमाण उपलब्ध हुए है— प्रथम सास्कृतिक काल आद्यैतिहासिक सस्कृति से सम्बन्धित है, जिसमे लाल पात्र—परम्परा (रेड वेयर) और चर्ट पर बना एक ब्लेड उपकरण प्राप्त हुआ था। टी0 एन0 राय ने इस स्थल के प्रथम उपचरण को ताम्र—पाषाणिक सस्कृति से समीकृत किया है (राय 1997 *इण्डियन आर्कयोलाजी ए रिव्यू 1963—64*)। कमौली का दूसरा सास्कृतिक काल परवर्ती मध्य काल से सम्बन्धित है ।

मसोनडीह

यह पुरास्थल उत्तर—प्रदेश के गाजीपुर जिले मे गगा—नदी के बाये तट पर स्थित हें । इस स्थल का उत्खनन वाराणसी सस्कृत विश्वविद्यालय के आर0 बी0 नारायण ने 1964—65 से लेकर 1970—71 तक चार वर्षो मे कराया । यहॉ से उपलब्ध सास्कृतिक सामग्रियॉ राजघाट के प्रथम चार सास्कृतिक कालो की ही तरह उपलब्ध हुई है । यहॉ के प्रथम ए' सास्कृतिक काल को प्रहलादपुर और राजघाट के प्राक् एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सास्कृतिक काल से समीकृत किया गया है । प्रथम 'बी' सास्कृतिक काल से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के प्रारम्भिक और परवर्ती चरण प्राप्त हुए है । तृतीय सास्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के बाद का है । यहॉ से भी ब्लैक स्लिप्ड वेयर और ब्लैक एड रेड वेयर की पात्र—परम्पराए और कुछ लघु—पाषाण उपकरण भी उपलब्ध हुए है ।

सोहगौरा

यह पुरास्थल (अक्षाश 26^0 32′ उ0, देशान्तर 80^0 32′ पू0) जैसा कि नवपाषाणिक अधिवास प्रकार के सदर्भ मे उल्लिखित किया जा चुका है कि आमी और राप्ती के सगम पर स्थित सोहगौरा स्थल के उत्खनन से पॉच सास्कृतिक कालो के प्रमाण उपलब्ध हुए है । प्रथम काल से रस्सी की छाप से हाथ से बने

हुए मिट्टी के बर्तन और कुछ अन्य नव–पाषाणिक सामग्रियॉ उपलब्ध हुई है । द्वितीय सास्कृतिक काल मे चाक पर निर्मित चित्रित और सादे ब्लैक स्लिप्ड वेयर, चित्रित और सादे ब्लैक एड रेड वेयर भूरे रग की पात्र परम्पराए और लाल पात्र परम्पराओ के बर्तन उपलब्ध हुए है । कुछ पात्रो को आसजन विधि से और कुछ को पक जाने बाद उत्कीर्णन विधि से अलकृत किया गया है । जैस्पर, अगेट और स्टीएटाइट पर बने मनके और हड्डी के बने बाणाग्र भी उपलब्ध हुए है। इसीलिए इसे ताम्रपाषाणिक सस्कृति से समीकृत किया गया है। तीसरे सास्कृतिक काल मे यद्यपि एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र परम्पराएँ मिलने लगती है लेकिन अन्य पूर्ववर्ती पात्र परम्पराए भी चलती रहती है एन0बी0पी0डब्लू (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) जमाव से युक्त तृतीय सास्कृतिक काल को दो उपचरणो मे विभाजित किया गया है, जिसके परवर्ती चरण मे पकी मिट्टी की ईटो का प्रयोग दिखाई पडता है। इस चरण के धरातल के विभिन्न भागो से धान और गेहूँ के पके दाने और ढले सिक्के हड्डी के बाणाग्र और ताबे तथा लोहे के अन्य उपकरण भी उपलब्ध हुए है। यहॉ के चतुर्थ सास्कृतिक काल मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) नही मिलता । इस धरातल से कुषाण और अयोध्या मुद्राए तथा वलयकूप प्राप्त होते है । पॉचवे सास्कृतिक काल का सम्बन्ध मध्य काल से है ।

नरहन

नरहन पुरास्थल (अक्षाश 26^0 19 उ0, देशान्तर 83^0 24′ पू0) गोरखपुर जनपद के बासगॉव तहसील मे घाघरा नदी के बाये तट पर स्थित है । 1984 से 1989 के बीच इस स्थल का विस्तृत उत्खनन बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रो0 पुरूषोत्तम सिह ने किया था (सिह 1984 120–122, 1994)। नरहन मे दो मुख्य टीले है । प्रथम टीले का दो तिहाई भाग घाघरा नदी की कटान से पूर्णत विनष्ट हो गया है और शेष बचे एक तिहाई भाग पर वर्तमान नरहन गॉव स्थित है। लेकिन गॉव के पश्चिमी दिशा मे लगभग 350 X 250 मीटर का क्षेत्र पुरातात्विक अन्वेषण के लिए उपलब्ध है। प्रथम टीले पर किये गये उत्खनन से प्रथम दो सस्कृति के प्रमाण और द्वितीय टीले के उत्खनन मे बाद की तीन सस्कृतियो के

प्रमाण उपलब्ध हुए है । यहाँ के प्रथम सास्कृतिक काल का जमाव लगभग 1 मीटर के जमाव मे मिलता है जो अन्य किसी भी स्थल की अपेक्षा ताम्रपाषाणिक सस्कृति के सम्बन्ध मे अधिक मोटा है । यहाँ पर ब्लैक एड रेड वेयर (कृष्ण लोहित पात्र परम्परा) पात्र परम्परा लगभग 97 7% है (रेखाचित्र 28) । चित्रित पात्र परम्परा के लिए यह स्थल विशेष उल्लेखनीय है (रेखाचित्र 29 30)। यद्यपि इस सास्कृतिक काल की पात्र परम्परा और अन्य पुरा सामग्रियाँ ताम्रपाषाणिक के मिलने के कारण इस स्थल के उत्खननकर्त्ता पुरूषोत्तम सिह ने इसे नरहन सस्कृति का नाम दिया है। नरहन सस्कृति के लोग बाँस--बल्ली से निर्मित झोपडियो मे निवास करते थे जिसके प्रमाण स्तम्भ गर्त और बाँस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडो के रूप मे मिलते है । दो क्रमिक फर्श और चूल्हे भी उत्खनन मे प्राप्त हुए है । इस धरातल से बहुत से अनाजो के प्रमाण भी उपलब्ध हुए है जिनमे जौ (हर्डियम बुल्डार), गेहूँ (कई प्रजातियो–क्लब व्हीट ब्रेड, व्हीट, डवार्फ व्हीट) और धान दालो मे मटर मूँग चना खेसारी तथा सरसो और बेर के प्रमाण मिलते है। इस धरातल से कटहल के प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं । यद्यपि इस स्थल के प्रथम निवासियो ने बडे पैमाने पर कृषि को अपनाया था लेकिन जली हुई और काटने के निशान से युक्त पशुओ की हड्डियो से लगता है कि माँस भी इनके भोजन का अभिन्न अग था । पशुओ की हड्डियो मे बैल, भेड, बकरी, हिरण और घोडे की पहचान की गयी है । अन्य पुरासामग्रियो मे मिट्टी के बर्तन के टुकडे से बने हुए छिद्र युक्त और बिना छिद्र के डिस्क, हड्डी के बाणाग्र, पकी मिट्टी के बने हुए तकुए और गोले सम्मिलित है । पत्थर और स्टीयटाइट के एक–एक मनके भी प्राप्त हुए है । नरहन का इसके बाद का सास्कृतिक अनुक्रम सोहगौरा की ही तरह है ।

इमलीडीह खुर्द

इमलीडीह खुर्द (सिह पी0 1994 120–122) (अक्षाश 26^0 30 '30' उ0 देशान्तर 83^0 12' 5 ' पू0) नामक पुरास्थल का उत्खनन भी बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरुषोत्तम सिह द्वारा 1992 से 1995 तक किया गया । गोरखपुर जनपद मे घाघरा की सहायक कआनो नदी के बाये तट पर स्थित इस स्थल के उत्खनन से तीन सास्कृतिक कालो के प्रमाण प्राप्त हुए है । प्रथम सास्कृतिक काल
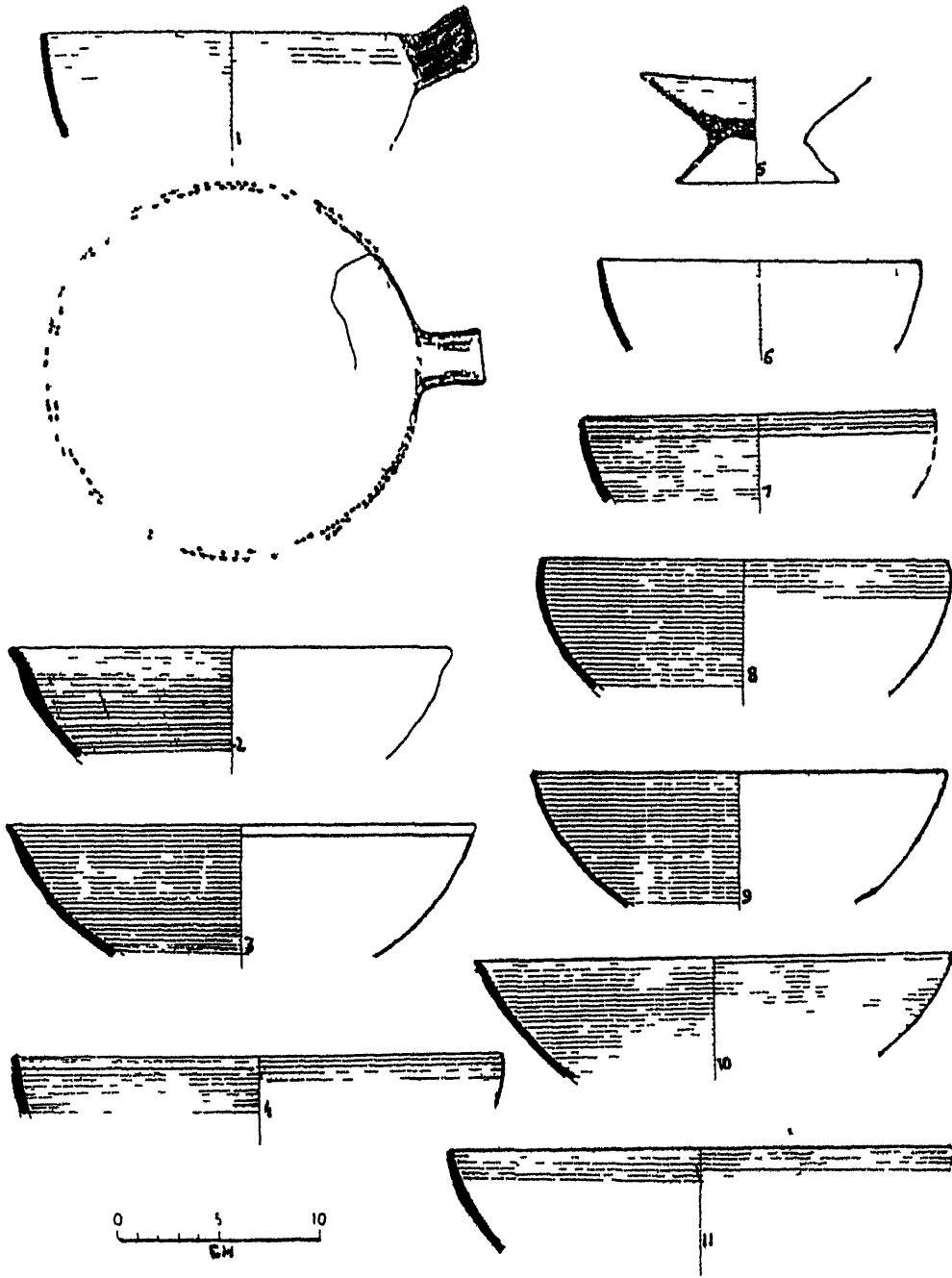
रेखाचित्र 28 नरहन कृष्ण–लोहित परम्परा के पात्र
(पी0 सिह के अनुसार)
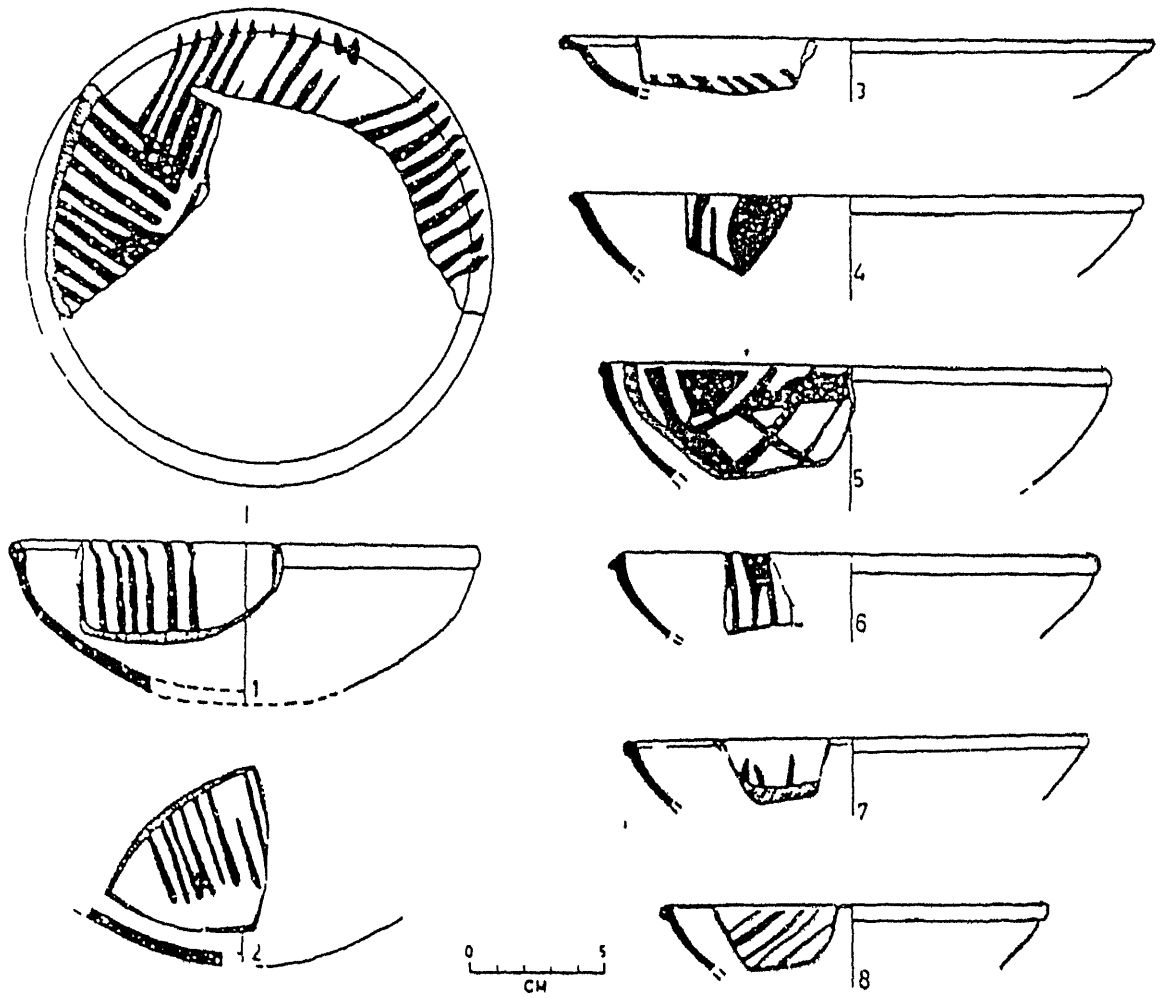
रेखाचित्र 29 नरहन लाल और चित्रित काले पात्र खण्ड
(पी० सिह के अनुसार)
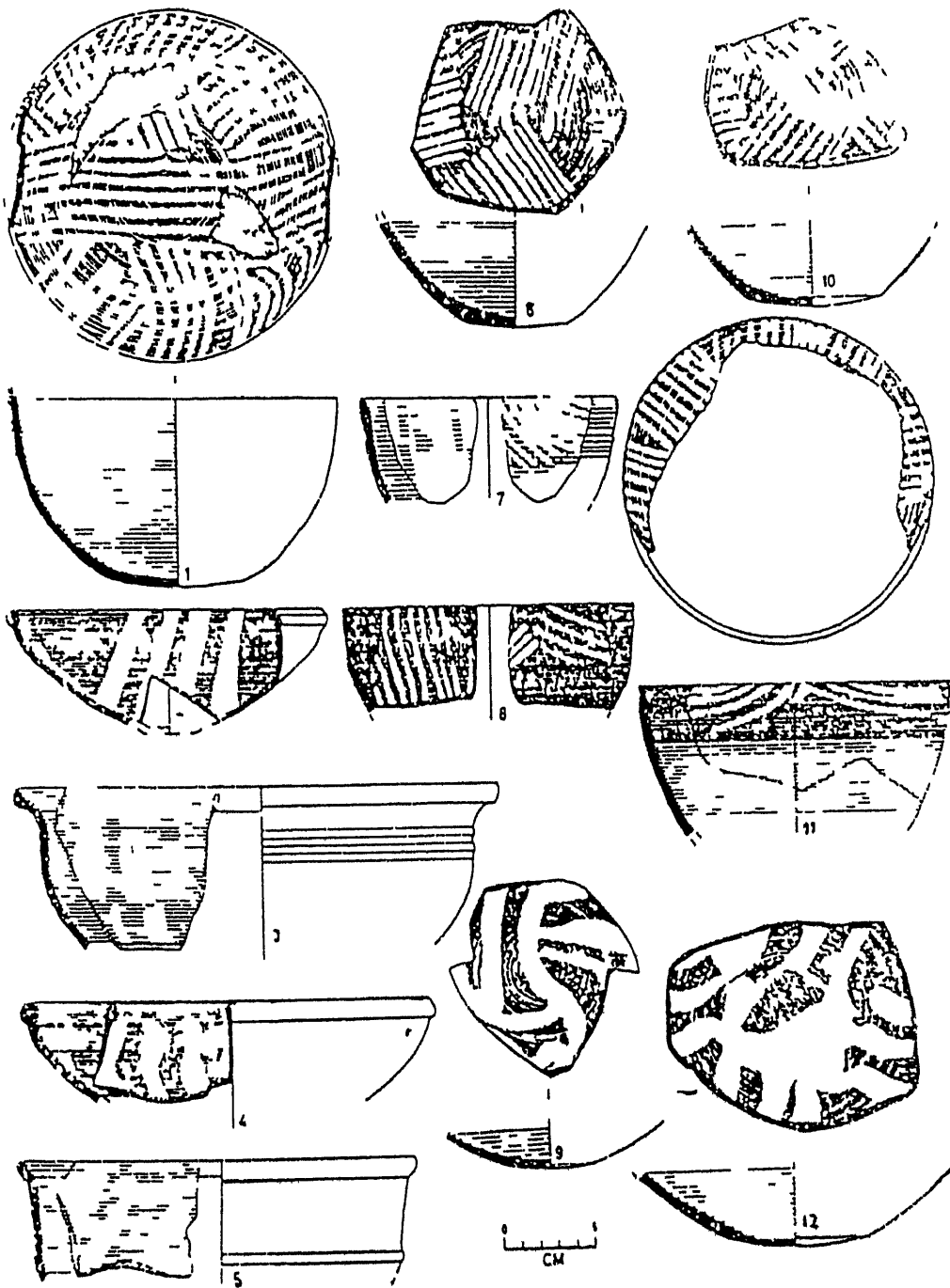
रेखाचित्र 30 नरहन सफेद चित्रित तथा कृष्ण–लोहित पात्र प्रकार
(पी० सिह के अनुसार)

से नवपाषाण कालीन पुरावशेषो के साक्ष्य प्राप्त हुए है। जिनके आधार पर इस सस्कृति को मध्य गगाघाटी के अन्य नवपाषाणिक पुरास्थलो से समीकृत किया जा सकता है। बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे मिट्टी के बने फर्श और चूल्हे प्राप्त हुए है । स्तम्भगर्त का साक्ष्य आवासीय झोपडियो के निर्माण की ओर इगित करता है । कुछ मिट्टी की पतली दीवालो से बनी हुई गोलाकार सरचनाए भी मिली है जिनका प्रयोग अनाज रखने के लिए किया जाता था। अन्य पुरावशेषो मे स्टीयटाइट के लघु मनके, मिट्टी अगेट और फ्यान्स के मनके हड्डी के बाणाग्र और मिट्टी के बर्तनो के टुकडो से बने डिस्क को विशेष रुप से उल्लिखित किया जा सकता है । इस सस्कृति को नवपाषाणिक सस्कृति से सम्बधित करते हुए उत्खननकर्त्ता ने प्राक् नरहन सस्कृति से अभिहित किया है । यहॉ से उपलब्ध पशुओ की बहुसख्यक हड्डियॉ प्राप्त हुई है। इनका व्यवस्थित अध्ययन के पश्चात् पशुओ की पहचान की गयी है । इनमे मुख्य रुप से गाय बैल, भेड, बकरी सुअर हिरण और भेडिया आदि की गणना की जाती है। मछली, घोघे और कछुए के अस्थि अवशेष भी प्राप्त हुए है। जिससे उनकी खाद्य सामाग्री मे जलचरो को सम्मिलित किया जा सकता है । धान, जौ गेहूँ, ज्वार सावा, बाजरा मटर खेसारी मूँग, तिल आदि खाद्यान्नो के प्रमाण प्राप्त हुए है।

इमलीडीह का द्वितीय सास्कृतिक काल ताम्रपाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित है जिसे उत्खननकर्त्ता ने नरहन सस्कृति का नाम दिया हे । इस सास्कृतिक काल के अवशेष नरहन के प्रथम सास्कृतिक काल की ही तरह हैं ।

इमलीडीह का तीसरा सास्कृतिक धरातल अधिक विकसित नही है क्योकि इस स्थल का उपरिवर्ती भाग आधुनिक कृषि कार्यो से प्राय विनष्ट हो गया है। इस धरातल से ब्लैक एड रेड वेयर के पात्र नही मिलते है। लाल–पात्र–परम्परा (रेड वेयर) ब्लैक स्लिप्ड वेयर और कुछ एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–पारम्पराओ के प्रमाण उपलब्ध हुए है । इस स्थल के तृतीय सास्कृतिक काल को नरहन के द्वितीय सास्कृतिक काल के समकक्ष रखा है। तिथिक्रम की दृष्टि से इसके लिए 800 से 400 ई0 पू0 का समय निर्धारित किया गया है ।

भूनाडीह

यह पुरास्थल बलिया से 28 किलोमीटर उत्तर, बलिया सिकन्दरपुर सडक पर जनवन से 2 किलोमीटर पूर्व बहेरा नाले के दाहिने तट पर स्थित है । चार एकड के क्षेत्र मे विस्तृत यह स्थल एक मीटर ऊँचे टीले के रूप मे है । वर्तमान आबादी वाले इस स्थल के पुरावशेष और स्तरीकरण काफी सीमा तक अस्त–व्यस्त है । बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरुषोत्तम सिह ने इस स्थल का उत्खनन किया और दो सस्कृतियो के प्रमाण प्रकाश मे आये । प्रथम सास्कृतिक काल को प्रथम 'ए और प्रथम 'बी दो चरणो मे विभाजित किया गया है । प्रथम 'ए सस्कृति के प्रमाण टीले के पश्चिमी भाग मे दो मीटर X दो मीटर के खन्ती मे किए गये उत्खनन से प्राप्त हुए है । इस चरण की पात्र–परम्परा इमलीडीह और सोहगौरा के प्रथम चरण की ही तरह है । जिसमे रस्सी के छाप वाली लाल पात्र–परम्परा टोटीयुक्त लाल बर्तन और अन्य पात्र प्रकार उपलब्ध हुए है । इस धरातल से झोपडियो के प्रमाण बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडो के रूप मे मिलते है । स्टीयटाइट के लघु मनके और मिट्टी के बर्तनो से बने डिस्क भी प्राप्त हुए है । उत्खाता ने इस सस्कृति को प्राक् नरहन सस्कृति के अर्न्तगत रखा जो नवपाषाणिक सस्कृति के अर्न्तगत परिगणनीय है । प्रथम 'बी चरण से प्राक नरहन अर्थात् नवपाषाणिक और ताम्रपाषाणिक सस्कृति के सक्रमण के प्रमाण उपलब्ध हुए है । इस चरण के सरचनात्मक प्रमाण प्रथम ए की ही तरह है । पात्र परम्परा मे रस्सी की छाप वाले और सादे ब्लैक एड रेड वेयर ब्लैक स्पिल्ड वेयर और रेड वेयर के बर्तन मिलते है । प्रमुख पात्र–प्रकारो मे साधार कटोरे, डिस आन स्टैड आदि हैं । मिट्टी स्टीयटाइट और उपरत्नो के मनके तथा पाटरी डिस्क इस चरण मे भी मिले है ।

द्वितीय सास्कृतिक काल मे भी झोपडियो के अवशेष उपलब्ध हुए है और शेष प्रमाण पूर्ववर्ती चरणो की ही तरह प्राप्त हुए है ।

धुरियापार

यह स्थल गोरखपुर से लगभग 46 किलोमीटर दक्षिण कुँआनो नदी के बाये तट पर पर स्थित है । लगभग 1 5 किलोमीटर के विस्तृत क्षेत्र मे आवास के प्रमाण तीन छोटे गॉव जगदीशपुर, बॉसडीह और धुरियापार मे प्राप्त हुए हैं । नरहन मे उत्खनन करते समय इस स्थल की खोज की गई थी। अप्रैल–मई 1991 मे इस स्थल के सास्कृतिक अवशेष को समझने के लिए 3 X 3 मीटर के वर्ग क्षेत्र मे उत्खनन किया गया था । जिसमे पॉच सास्कृतिक कालो के प्रमाण उपलब्ध हुए थे। प्रथम सास्कृतिक काल मे सफेद रग से रेखीय चित्र युक्त ब्लैक एड रेड वेयर, ब्लैक स्लिप्ड वेयर, ग्रे वेयर और रेड वेयर के बर्तन प्राप्त हुए थे । मिट्टी की गोलियॉ मनके, हड्डी के बाणाग्र और कघी तथा पाटरी डिस्क जैसे उपकरण नरहन सस्कृति (ताम्रपाषाणिक सस्कृति) की तरह है ।

द्वितीय सास्कृतिक काल मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कष्ण मार्जित पात्र परम्परा) और उससे सम्बन्धित अन्य पात्र परम्पराए मिली है । तृतीय सास्कृतिक काल कुषाण और गुप्त काल से सम्बन्धित है । तृतीय सास्कृतिक काल के बाद लगभग 400 वर्षो तक यह स्थल वीरान रहा । चौथा सास्कृतिक काल 900 से 1500 ई0 के मध्य रखा गया है जो मध्य काल से सम्बधित है । अन्त मे ब्रिटिश काल मे पुन यहॉ पर आबादी के प्रमाण मिलते है और यहॉ आज भी आबादी है। (सिह 1996) ।

खैराडीह

यह स्थल बलिया जिले मे बेलथरा रोड (अक्षाश 26^0 10 30" उ0, देशान्तर 85^0 51' 30" पू0) से लगभग 8 किलोमीटर उत्तर–पूर्व दिशा मे घाघरा नदी के दाहिने तट पर स्थित है । बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरुषोत्तम सिह ने इस स्थल का 1980–81 से लेकर 1985–86 के बीच 5 वर्षों तक उत्खनन किया जिससे तीन सास्कृतिक कालो के प्रमाण प्राप्त हुए हैं । प्रथम सास्कृतिक काल से चित्रित और सादे ब्लैक–एड–रेड वेयर, ब्लैड स्लिप्ड वेयर, के बर्तन उपलब्ध हुए है। स्तम्भगर्त तथा बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकड़े और मिट्टी

की दीवाल के अवशेषो से प्रतीत होता है कि प्रथम चरण के लोग मिट्टी से निर्मित घरो और झोपडियो मे निवास करते थे । मिट्टी की दीवाल की ऊँचाई और चौडाई क्रमश 1 06 मीटर और 0 62 मीटर उपलब्ध हुई है । उल्लेखनीय है कि दीवाल अथवा स्तम्भगर्तो के साक्ष्य के आधार पर कहा जा सकता है कि यह पूरे घर का आकार रहा होगा । इस चरण की पात्र–परम्परा चिराद, ताराडीह, सेनुवार नरहन, मॉझी आदि स्थलो के चित्रित और सादे ब्लैक–एड–रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर से साम्य रखते है । इस धरातल से कुछ रस्सी की छाप वाले मिट्टी के बर्तन भी उपलब्ध हुए थे । अन्य पुरासामग्रियो मे पुच्छल और साकेट युक्त हड्डी के बाणाग्र, पशुओ और पक्षियो की हड्डियॉ आदि भी उपलब्ध हुई है । कुछ हड्डियॉ जली हुई है और कुछ पर काटने के निशान बने हुए है । दो छिद्रो से युक्त साकेट युक्त तॉबे का बाणाग्र उपलब्ध हुआ है । इस चरण के लोग कृषि से परिचित थे जिसके प्रमाण धान की भूसी के रुप मे मिट्टी के बर्तनो और जली मिट्टी के टुकडो से प्राप्त होते है । विभिन्न आकार के स्टीयटाइट के डिस्क के आकार के मनके, अगेट, कार्नेलियन, चर्ट और चल्सिडनी के मनके और कुछ मृण्मूर्तियॉ भी उपलब्ध हुई है।

द्वितीय चरण से एन0 बी0 पी0 डब्लू सस्कृति के मुख्यत प्रारम्भिक चरण की पुरासामग्रियॉ उपलब्ध हुई है । इस चरण को प्रारम्भिक और परवर्ती दो चरणो मे विभाजित किया गया है । तृतीय चरण ई0 के प्रारम्भिक शताब्दियो का है, जिसमे लाल पात्र परम्परा के बर्तन और कुषाण शैली मे निर्मित मानव मृण्मूर्तियॉ उपलब्ध हुई है ।

चिराद

चिराद (अक्षाश 25^0, 48′ उ0, देशान्तर 84^0 50′ पू0) बिहार के सारन जिले मे छपरा से 11 किलोमीटर पूर्व घाघरा के तट पर स्थित है। जिसका उत्खनन बी0 पी0 सिन्हा और बी0 एस0 वर्मा ने 1962–63, 63–64 और 64–65 और पुन 1968–69, और 69–70 और 70–71 मे किया था । प्रथम तीन सत्रो मे किये गये उत्खनन से तीन क्रमिक सस्कृतियॉ प्रकाश मे आई थी। 1967–69 मे किये

उत्खनन मे इस स्थल के ऊपरी धरातल से चौथी सस्कृति प्रकाश मे आई जो कल्चुरि राजवश (1045 ई0) और पाल काल से सम्बन्धित है। 1969–70 के उत्खनन से नवपाषाणिक जमाव स्पष्टत प्रकाश मे आये। लेकिन 1970–71 के उत्खनन मे यहॉ की नवपाषाणिक और ताम्रपाषाणिक जमाव से इन सस्कृतियो के बारे मे महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई है । प्रथम सास्कृतिक काल का प्रमाण निम्नतम 3 50 मीटर के जमाव से उपलब्ध हुआ है जिसका सम्बध नवपाषाण काल से है

जैसा कि इसके पहले के अध्याय मे उल्लेख किया गया है कि इस स्थल पर नवपाषाण काल से ही आबादी प्रारम्भ हुई थी । यहॉ के द्वितीय सास्कृतिक काल को दो उपकालो द्वितीय ए और द्वितीय बी मे विभाजित किया गया है, जो ताम्रपाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित है । द्वितीय ए' चरण मे सादे और चित्रित ब्लैक स्लिप्ड वेयर ब्लैक–एण्ड–रेड वेयर तथा बर्निश्ड अथवा सादे लाल पात्र–परम्परा और भूरे पात्र–परम्परा के बर्तन मिलते है । चित्रण अभिप्रायो मे डैस का सम्बन्ध लहरदार और सीधी रेखाओ से है । घडो को कधे के पास चित्रित किया गया है । द्वितीय बी सास्कृतिक काल से लौह उपकरण भी उपलब्ध हुए है। अन्य सास्कृतिक सामग्रियॉ द्वितीय 'ए की ही तरह है । इस चरण से भी (द्वितीय बी) आवासीय झोपडियो के प्रमाण मिले है लेकिन उनका आकार अब बडा हो गया था । तृतीय सास्कृतिक काल एन0 बी0पी0 डब्लू0 सस्कृति से सम्बन्धित है लेकिन इसमे पूर्ववर्ती ब्लैक स्लिप्ड वेयर और कृष्ण लोहित पात्र–परम्परा के बर्तन मिलते है। एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति अध्याय के अर्न्तगत इसका विवेचन अग्रिम पक्तियो मे है ।

मॉझी

बिहार के सारन जिले मे घाघरा नदी के बाये तट पर यह स्थल स्थित है। केन्द्रीय सरकार द्वारा सरक्षित इस स्थल का उत्खनन बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के टी0 एन0 राय ने 1983–84 और 84–85 मे किया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू* 1983–84 15–16 *इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1984–85* 12–13)।

इस उत्खनन से प्राक् बुद्ध काल से लेकर मध्य काल तक के सास्कृतिक अवशेष उपलब्ध हुए है । प्रथम चरण से ब्लैक–एड–रेड वेयर ब्लैक स्लिप्ड वेयर और रेड वेयर के पात्र उपलब्ध हुए है जो ताम्रपाषाणिक पात्र–परम्परा के अनुरूप हैं । द्वितीय सास्कृतिक काल को द्वितीय ए, द्वितीय 'बी और द्वितीय 'सी तीन चरण मे विभाजित किया गया है द्वितीय–ए उपचरण मे प्रारम्भिक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के प्रमाण मिलते हैं जिनमे बडी सख्या मे पूर्णत निर्मित और अर्द्धनिर्मित हड्डी के उपकरण पत्थर के सार्पनर, ताबे की चूडियॉ और अस्पष्ट प्रकार का एक लौह उपकरण सम्मिलित है । द्वितीय 'बी' उपचरण से अधिक अच्छे प्रकार की सामग्रियॉ उपलब्ध हुई है और द्वितीय सी' उपचरण से रूक्ष प्रकार के एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) प्राप्त हुए है । अन्य पुरा सामग्रियो मे आहत सिक्के बडी सख्या मे हड्डी के उपकरण, डिस्क, मृण्मूर्तियॉ, शीशे की चूडियॉ, ताबे और लोहे के उपकरण, घोड़े की एक मृष्मूर्ति और ढक्कनयुक्त एक पाषाण मजूषा सम्मिलित है। तृतीय सास्कृतिक काल का समय शक–कुषाण काल से है, जिसमे पकी ईटो से निर्मित दीवाले प्राप्त हुई है । एक लम्बे अन्तराल के बाद चतुर्थ सास्कृतिक काल का जमाव मिलता है, जिसमे कुछ ग्लेज्डवेयर (काचलित पात्र–परम्परा) के बर्तन प्राप्त हुए है । इस आधार पर इसे मध्य युग से सम्बन्धित किया जा सकता है ।

मानेर

पटना जिले मे स्थित मनेर का उत्खनन पटना विश्वविद्यालय के भगवान सहाय के निर्देशन मे किया गया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1984–85* 11–12)। इस उत्खनन से यहॉ पर तीन सास्कृतिक कालो के प्रमाण प्राप्त हुए हैं । प्रथम सास्कृतिक काल के प्रमाण पाचवे स्तर से उपलब्ध हुए हैं । जिसमे ब्लैक एड रेड वेयर, रेड वेयर तथा कुछ ब्लैक वेयर के पात्र उपलब्ध हुए है । इस चरण से लघु पाषाण उपकरणो का एक कोर, ब्लेड, मिट्टी की गोलियॉ या गोले तथा पत्थर के मनके उपलब्ध हुए है जो ताम्र पाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित हैं। द्वितीय सास्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति से सम्बन्धित है जिसमे लोहे के उपकरण मिट्टी और पत्थर के मनके पकी मिट्टी का

बना हुआ थपुआ, पत्थर की गोलियॉ, सिल–लोढे और मानव और पशु मृण्मूर्तियॉ, तॉबे की चूडियॉ चक्र मापक सामग्री आदि प्राप्त हुए है । तृतीय सस्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के बाद का है जो पाल काल से समीकृत किया गया है ।

ओरियप

बिहार के भागलपुर जिले मे अन्तीचक से दो किलोमीटर दक्षिण–पश्चिम दिशा मे यह स्थल स्थित है । 1966–67 मे बी0 पी0 सिन्हा और आर0 पी0 सिह के द्वारा इसका उत्खनन किया गया जिसके फलस्वरूप चार सास्कृतिक कालो के प्रमाण प्राप्त हुए है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1966–67* 6–7)। प्रथम सास्कृतिक काल मे चित्रित और सादे ब्लैक स्लिप्ड वेयर और रेड वेयर के पात्र उपलब्ध हुए है। इनके साथ हड्डी के बाणाग्र, हड्डी की बनी हुई कटिया ताबे की बनी चूडियॉ और लघु पाषाण उपकरण उपलब्ध हुए है। इस आधार पर इस सास्कृतिक चरण को मध्य गगाघाटी के ताम्रपाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित किया गया है। बिना किसी सास्कृतिक व्यतिक्रम के इस स्थल पर द्वितीय सास्कृतिक काल के प्रमाण मिलते है, जिसमे प्रारम्भिक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृतिक से सम्बन्धित लोहे के उपकरण हड्डी के बाणाग्र और अच्छे प्रकार के एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) ब्लैक स्लिप्ड वेयर ग्रे वेयर, ब्लैक–एड–रेड वेयर और रेड वेयर के पात्र उपलब्ध हुए है । इसके उपरान्त सभवत यह स्थल काफी समय तक वीरान रहा, जिसके बाद पाल काल मे यह पुन आबाद हुआ जिसे तृतीय सास्कृति काल नाम दिया गया है । यहॉ पर चतुर्थ सास्कृतिक काल मध्य युग से सम्बन्धित था ।

चम्पा

यह स्थल भागलपुर से पॉच किलोमीटर पश्चिम मे स्थित है, जिसका उत्खनन पटना विश्वविद्यालय के बी0 पी0 सिन्हा और आर0 पी0 सिन्हा ने 1969–70 और 710–71 71–72 मे किया (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1982–83* 15–16)। बी0 नारायण और ए0 के0 सिह ने इस स्थल पर 1974–75

और 76–77 मे पुन उत्खनन किया । इन उत्खननो से तीन सास्कृतिक कालो के जमाव प्राप्त हुए है । 1974–75 मे किये गये उत्खनन से रूक्ष ब्लैक–एड–रेड वेयर के पात्र निम्न धरातल से उपलब्ध हुए थे जिसे चिराद के ताम्र पाषाणिक सस्कृति के समरूप माना गया है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1974–75* 8–9)। लेकिन अन्य उत्खननो से प्राप्त सास्कृतिक सामग्री को जिन तीन कालो मे विभाजित किया गया है उनमे प्रथम काल है एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के परवर्ती चरण जिसमे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) ब्लैक–एड–रेड वेयर, ब्लैक वेयर, ग्रे वेयर, और रेड वेयर के पात्र लोहे और ताबे के उपकरण मानव और पशु मृण्मूर्तियॉ हड्डी के बाणाग्र, शीशे के मनके, आदि उपलब्ध हुए है । हाथी दॉत की एक नारी मूर्ति, एक चित्रित एन0 बी0 पी0 डब्लू0 पात्र खण्ड उल्लेखनीय है । इस काल से 40 X 25 X 7 सेटीमीटर के आकार की पकी ईटो से बनी हुई एक दीवाल, वलयकूप तथा मिट्टी से निर्मित रक्षा प्राचीर प्राप्त हुई है । टी0 एन0 राय के अनुसार क्योकि यह स्थल एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के मध्यवर्ती क्षेत्र मे आता है और जैन तथा बौद्ध साहित्यो मे बुद्ध और महावीर के समय के छ प्रमुख नगरो मे इसकी गणना की जाती थी, अत इस स्थल की और गहन खोजो से प्राचीन सस्कृति के प्रमाण मिल सकते है (राय 1983 49)। इस स्थल के द्वितीय और तृतीय सास्कृतिक काल क्रमश गुप्त युग और मध्य युग से सम्बन्धित है ।

चेचर–कुतुबपुर

चेचर–कुतुबपुर (अक्षाश 25^0 35 उ0 देशान्तर 85^0 20′ पू0) का उल्लेख नवपाषाणिक सदर्भ मे पहले ही किया जा चुका है। यहॉ का प्रथम 'ए' सास्कृतिक काल नवपाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित है। प्रथम बी' सास्कृतिक काल का सम्बन्ध ताम्रपाषाणिक सस्कृति से है, इस चरण की पात्र परम्परा अन्य ताम्रपाषाणिक पात्र परम्पराओ की ही तरह है । यहॉ के प्रथम–सी सास्कृतिक उपचरण से भी हड्डी के उपकरण और ब्लैक–एड–रेड वेयर उपलब्ध हुए है जिसमे कुछ पात्रो पर तिरछे स्ट्रोक या बिन्दु सफेद रग से चित्रित किये गये हैं । गेरू रग के बने चित्र

इस चरण मे भी मिलते है । इस स्थल से हडप्पन परम्परा का स्टीयटाइट डिस्क आकार के लघु मनके भी उपलब्ध हुए है ।

द्वितीय सास्कृतिक काल से एन0 बी0 पी0 डब्लू0 सस्कृति का प्रारम्भ होता है। इस चरण मे भी पूर्ववर्ती ब्लैक–एण्ड–रेड पात्र–परम्परा चलती रहती है। एक–दो मीटर गहरे और पॉच मीटर चौडे गड्ढे से पकी ईटे और लौह उपकरण तथा बडे पैमाने पर पकी पकी ईटो से निर्मित सरचनाओ के प्रमाण मिलते हैं जिसे कुषाण काल से समीकृत किया गया है ।

सोनपुर

यह स्थल बिहार के गया जिले मे बेला रेलवे स्टेशन से 42 किलोमीटर पश्चिम यमुना नदी के तट पर स्थित है। सर्वप्रथम इस स्थल का उत्खनन 1955–56 मे के0 पी0 जायसवाल शोध सस्थान के विजयकान्त मिश्र द्वारा किया गया । दो वर्ष के उपरान्त इसी सस्थान के बी0 एस0 वर्मा ने 1959–60 से 1961–62 के बीच पुन उत्खनन किया । 1970–71 मे बी0 पी0 सिन्हा और लाला आदित्य नारायण ने इस स्थल पर पुन उत्खनन किया और कई क्रमिक सस्कृतियो के प्रमाण प्राप्त हुए । प्रथम सस्कृति ताम्रपाषाण कालीन सस्कृति से सम्बन्धित है । इस सास्कृतिक काल मे ब्लैक–एड–रेड वेयर ब्लैक स्लिप्ड वेयर और रेड वेयर के पात्र प्राप्त हुए है । ब्लैक–एण्ड–रेड वेयर के पात्र खण्ड पर रेखीय चित्र बनाये गये है । इस धरातल से हड्डी के बाणाग्र और ताबे की पिन प्राप्त हुई है । बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी से झोपडी का अनुमान किया जा सकता है । इसी सास्कृतिक काल मे लघु पाषाण उपकरणो मे कोर, प्वाइन्ट, अर्द्ध चन्द्र और त्रिभुज जैसे उपकरण भी प्राप्त हुए है । ये उपकरण, अगेट, चर्ट और चाल्सिडनी जैसे पत्थरो पर निर्मित हैं। यहॉ के द्वितीय सास्कृतिक काल से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) और लौह उपकरण मिलते हैं ।

ताराडीह

नवपाषाणिक सस्कृति के सदर्भ मे उल्लेख किया जा चुका है कि बिहार राज्य पुरातत्व विभाग के ए0 के0 प्रसाद द्वारा इस स्थल पर किये गये उत्खनन से

नवपाषाण काल से लेकर पाल काल तक के सास्कृतिक अवशेष उपलब्ध हुए है । ताम्रपाषाणिक सस्कृति यहाँ का दूसरा सास्कृतिक काल है । ताम्रपाषाणिक सस्कृति का जमाव लगभग 70 सेटीमीटर आवासीय जमाव मे प्राप्त होते हैं जिसमे ब्लैक–रेड–वेयर ब्लैक स्लिप्ड वेयर और रेड वेयर पात्र परम्परा के बर्तन प्राप्त होते है । मिट्टी को पीटकर बनाये गये फर्श से ऐसा प्रतीत होता है कि इस सस्कृति के लोग बॉस–बल्ली और घास–फूस से बने झोपडियो मे निवास करते थे। इस धरातल से ताबे की एक कटिया और कॉर्नेलियन का एक फलक उपलब्ध हुआ है। यहॉ का तीसरा सास्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति का है। जिसमे पात्र–परम्पराओ के अतिरिक्त अर्द्धरत्नो पर निर्मित मनके उपलब्ध हुए है। चतुर्थ सास्कृतिक काल मे कुषाणयुगीन पात्र परम्पराए प्राप्त हुई है। इस धरातल से भी मिट्टी और उपरत्नो पर बने मनके चूडियो के टुकडे तथा थपुआ प्राप्त हुए हैं। छठे सास्कृतिक काल से पाल युगीन अवशेष उपलब्ध हुए है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1981–82* 10–12, *इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1984–85*)।

सेनुवार

बिहार के रोहतास जिले मे स्थित सेनुवार (अक्षाश 24^0 56 उ0, देशान्तर 83^0 56′ पू0) के उत्खनन से भी नवपाषाणिक काल से लेकर ऐतिहासिक काल तक के अवशेष प्राप्त हुए है । इस स्थल के उत्खनन के प्रथम काल के प्रथम बी′ उपचरण से नवपाषाणिक और ताम्रपाषाणिक सस्कृति के सक्रमण सम्बन्धी प्रमाण उपलब्ध हुए है । यहॉ का द्वितीय सास्कृतिक काल विशुद्ध रूप से ताम्रपाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित है जो 230 सेटीमीटर मोटा है । द्वितीय सास्कृतिक काल के उपरिवर्ती जमाव और तृतीय सास्कृतिक काल के प्रारम्भिक स्तरो– ताम्रपाषाणिक और लौहयुगीन सस्कृति के सक्रमण सम्बन्धी प्रमाण के लिए भी यह स्थल विशेष उल्लेखनीय है। ताम्रपाषाणिक धरातल से कई क्रमिक आवासीय फर्शों के प्रमाण उपलब्ध हुए है। ये फर्श 6 सेटीमीटर से 3 सेटीमीटर तक मोटे है जो मिट्टी को पीटकर बनाये गये है। फर्शों के समकालीन स्तरो से बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे उपलब्ध हुए है । इनमे धान की भूसी मिली हुई है ।

यद्यपि उत्खनन मे घरो का पूरा आकार प्रकाश मे नही आया है लेकिन घरो के प्राप्त कतिपय सकेतो/अवशेषो से ऐसा प्रतीत होता है कि इनकी झोपडियॉ गोलाकार थी । गोलाकार मिट्टी की दीवालो से निर्मित सरचनाओ के भी प्रमाण उपलब्ध हुए है (सिह 1989 83–92)। ताम्रपाषाणिक सास्कृतिक काल से जली मिट्टी से युक्त कुछ गोलाकार अथवा वर्गाकार गर्त उपलब्ध हुए है, जिनसे राख कोयला और मिट्टी के बर्तन प्राप्त होते हैं । इन गर्तों का किस रूप मे प्रयोग होता था यह निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता । यहॉ की ब्लैक–एण्ड–रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड पात्र–परम्परा पर रेखीय चित्र बने हुए है । कुछ रस्सी के छाप वाले बर्तन भी प्राप्त होते है ।

धातु के उपकरणो मे ताबे से बनी चूडियॉ, कान का कुण्डल और लटकन सम्मिलित है। लघुपाषाण उपकरणो मे पुर्नगठित ब्लेड भूथडे ब्लेड स्क्रेपर सम्मिलित है । जिनका निर्माण चल्सिडनी और चर्ट पर किया गया है। अन्य पाषाण उपकरणो मे हथौडे, सिल–लोढे हथगोले आदि सम्मिलित है । आभूषणो मे चूडियॉ अगेट चल्सिडनी और फयास के बने मनके हड्डी के उपकरणो मे छिद्रक बाणाग्र और छेनी प्रमुख है । कुछ बाणाग्र पुच्छल और साकेटयुक्त हैं । उत्खनन मे अनेक अनाज के दाने प्राप्त हुए है । उनके अध्ययन के आलोक मे कहा जा सकता है कि इस सस्कृति के लोग करते थे धान जौ, गेहूँ, ज्वार, मटर मूँग चना सरसो आदि का प्रयोग खाद्यान्न के रूप करते थे। स्पष्टत सेनुवार के ताम्रपाषाणिक मानव की जीविका मुख्यत कृषि और पशुपालन पर निर्भर थी । शिकार इस समय भी जीविकोपार्जन का प्रमुख साधन था । मिट्टी के बर्तन तथा मनको एव अन्य उपकरणो के निर्माण को उद्योग के अन्तर्गत रखा जा सकता है ।

मध्य गगाघाटी मे ताम्रपाषाणिक सस्कृति की चारित्रिक विशेषता सादे और चित्रित ब्लैक–एड–रेड वेयर प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के सदर्भ मे ब्लैक–एड–रेड वेयर पात्र–परम्परा को तीन वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है । प्रथम वर्ग मे ऐसे स्थल सम्मिलित थे जहॉ ताम्र उपकरण, ब्लैक–एड–रेड वेयर के पहले नव पाषाणिक सस्कृति मे विद्यमान है । द्वितीय वर्ग के अर्न्तगत ऐसे स्थल है जहॉ ब्लैक–एड–रेड से युक्त ताम्रपाषाणिक सस्कृति से

ही सस्कृति का प्रारम्भ होता है और उनके साथ लौह उपकरण नही मिलते और तीसरे वर्ग मे ऐसे स्थल जहॉ प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) धरातल से ब्लैक एड रेड वेयर का चरण मिलता है । लेकिन इसके साथ लौह उपकरण भी प्राप्त हुए है । इन तीनो ही वर्ग मे ब्लैक–एड–रेड के उपरान्त एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के प्रमाण मिलते है । प्रथम वर्ग के स्थल क्योकि नवपाषाणिक जमाव के ऊपर हे, इसलिए ऊँचाई पर स्थित थे। उदाहरण के लिए चिराद लहुरादेवा और इमलीडीह खुर्द तृतीय वर्ग के स्थल मुख्य नदियो अथवा सहायक नदियो के किनारे ऐसे क्षेत्रो मे स्थित है जहॉ उर्वरा भूमि उपलब्ध थी ।

ये सभी स्थल नदियो के तट पर स्थित हैं । बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरूषोत्तम सिह द्वारा कुआनो नदी घाटी मे किये गये सर्वेक्षण से लगभग 34 प्राक् एन0 बी0 पी0 डब्लू0 के जमाव वाले स्थल प्रकाश मे आये थे जिसमे से 26 स्थल नदियो के किनारे है और सिर्फ 8 स्थल नदियो से दूर है । इसी तरह के प्रमाण कौशाम्बी के समीपवर्ती क्षेत्रो मे जार्ज एरडसी को प्राप्त हुए है (एरडसी 1985 71)। एरडसी को 1000 से 700 ई0 पू0 के बीच के 16 स्थल प्राप्त हुए थे, जिनमे से सभी नदियो के तट पर ही स्थित है । उल्लेखनीय है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश मे ब्लैक–एड–रेड वेयर (कृष्ण–लोहित पात्र परम्परा) के स्थानो की सख्या एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के स्थलो से अधिक है । उत्खनित स्थलो से ऐसा प्रतीत होता है कि ताम्रपाषाणिक काल मे अधिवास का क्षेत्र पूर्ववर्ती नवपाषाणिक काल की तुलना मे अधिक था और परवर्ती एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति की तुलना मे कम (सिह 1993 160)।

विशिष्टताऍ

उत्खनित स्थलो से प्राप्त पुरासामग्रियो एव समग्र सूचनाओ को समवेत रूप से विश्लेषित करते हुए मध्य गगा घाटी की ताम्रपाषाणिक सस्कृति के विशिष्ट तत्वो का विवेचन निम्नरूप से किया जा सकता है ।

उत्खनन और सर्वेक्षण के परिणाम स्वरूप मध्य गगा घाटी के प्रागैतिहासिक मानचित्र पर ताम्रपाषाणिक सस्कृति का स्वरूप उभरने लगा है । इस सस्कृति की पुरातात्विक सामग्री के अन्तर्गत चाक पर बनी हुई कई पात्र–परम्पराए पत्थर और हड्डियो पर बने हुए उपकरण ताम्र उपकरण तथा लघु ब्लेड उद्योग के लघु पाषाण उपकरण सम्मिलित है। पात्र–परम्पराओ मे लाल, काले लेप वाले तथा काले–और–लाल पात्र परम्पराये हैं जिनमे से अन्तिम दो को चित्रित भी किया गया है । लघु पाषाण उपकरणो मे दन्तुर कटक ब्लेड भी सम्मिलित है । हड्डियो तथा मृगश्रृगो के बने हुए बाणाग्र इस सस्कृति के अभिन्न अग लगते हैं । बाणाग्र दो प्रकार के है– पुच्छल और छिद्र युक्त । अधिकाश बाणाग्रो का अनुभाग गोल है लेकिन कुछ तिकोने अनुभाग वाले बाणाग्र भी प्राप्त हुए हैं । बहुत से बाणाग्र निर्माण की विभिन्न अवस्थाओ मे प्राप्त हुए है । इस सस्कृति के लोग भी बॉस और लकडी की बनी झोपडियो मे निवास करते थे । उपरत्नो ओर मिट्टी के बने मनके इन स्थलो मे बहुतायत मे मिले हैं लेकिन ताम्र उपकरणो की सख्या बहुत कम है। बिहार के ओरियप से एक ताम्र चूडी का उल्लेख किया जा सकता है । मृण्मूर्तियो मे चिराद से उपलब्ध सिर रहित चपटी चिडिया जिसे शरीर पर छिद्र करके सुसज्जित किया गया है । ओरियप से एक आदिम शैली मे बनी नारी मूर्ति तथा प्रहलादपुर से उपलब्ध खिलौना गाडी विशेष उल्लेखनीय हैं ।

कृष्ण–लोहित काले–और–लाल और लाल–तथा–काले लेप की पात्र परम्पराये इस सस्कृति की चारित्रिक विशेषताए मानी जाती हैं । उत्खनित स्थलो मे इस सस्कृति के निचले धरातल मे काले–और–लाल बर्तनो की सख्या अधिक है । चिराद मे कुछ बर्तनो पर क्रीम रग का लेप किया गया है । बर्तन आकारो मे घडे नाद कटोरे और तश्तरियॉ सम्मिलित है । कृष्ण–लोहित पात्र–परम्परा के कुछ बर्तनो के भीतरी सतह पर सफेद या क्रीम रग से चित्रण किया गया है । चित्रण अभिप्रायो मे क्षैतिज अथवा तिरछी रेखाए प्राप्त होती हैं । इन बर्तनो पर चित्रण के प्रमाण सोहगौरा, प्रहलादपुर, राजघाट, नहुष राजा का टीला नरहन इमलीडीह, लहुरादेवा बनवारीघाट तथा गुलरिहवा घाट से प्राप्त हुए है ।

पात्रो के आकार मे विविधता के प्रमाण लाल पात्र परम्परा मे प्राप्त होते है। इन बर्तनो मे कटोरे, आधार वाले कटोरे थालियॉ नाद, तीन पैर वाले तथा छिद्रयुक्त कटोरे और नाद होठदार कटोरे और नाद बडे और मध्यम आकार के घडे तथा साधार तश्तरियॉ उल्लेखनीय है । चिराद की नवपाषाणिक सस्कृति की तरह इस सस्कृति मे भी टोटीदार बर्तन प्राप्त हुए हैं ।

काले लेप वाले पात्र–परम्परा मे बर्तनो के अधिक आकार नही मिलते हैं । कटोरे और थालियॉ ही प्राय इस परम्परा के बर्तन है । सभवत इस पात्र परम्परा के बर्तनो का प्रयोग खाने–पीने के लिये ही किया जाता था । इसी पात्र–परम्परा से परवर्ती काल मे उत्तरी कृष्ण भार्जित पात्र परम्परा का विकास हुआ होगा । काले लेप वाली पात्र परम्परा के बर्तनो को भी सफेद या काले रग से चित्रित किया गया है । चित्रण अभिप्राय के अन्तर्गत तिरछे और टेढी तथा पडी रेखाए ही प्राप्त होती है । चित्रित काले लेप वाले बर्तन चिराद सोनपुर सोहगौरा, प्रहलादपुर, राजघाट, गुलरिहवा घाट तथा पूरे देवजानी से भी प्रतिवेदित किए गए है ।

प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा किये गये हाल के सर्वेक्षण से मध्य गगा घाटी के प्रतापगढ जिले की पट्टी तहसील मे लगभग 30 ताम्रपाषाणिक स्थल प्रकाश मे आये है । अभी तक इनमे एक भी स्थल का उत्खनन नही किया गया है लेकिन इन स्थलो से लाल काले, लेप वाले तथा काले और लाल पात्र–परम्पराओ के मिट्टी के बर्तन, दन्तुर कटक ब्लेड, क्रोड और फलक से युक्त लघु ब्लेड उद्योग के लघु पाषाण उपकरण मिट्टी के टुकडे, ताबे की अगूठी तथा पत्थर के सिल–लोढ़े प्राप्त हुए हैं । इस क्षेत्र के प्रमुख स्थलो मे भॉटी, भेवनी, गगेहटी, कजासराय, गुलानी, मन्दाह–2, पेलखवार, पूरे देवाजानी, सराय जमुआरी तथा शाल्हीपुर–2 का उल्लेख किया जा सकता है । ये स्थल इस क्षेत्र की मध्य पाषाणिक स्थलो की ही तरह धनुषाकार झीलो अथवा इन झीलो से निकलने वाली सई की सहायक नदियो के किनारे स्थित है।

उपलब्ध पात्र–परम्पराओ मे काले एव लाल रग लेप युक्त के पात्र प्राप्त हुए हैं । कभी–कभी लाल पात्र–परम्परा के बर्तनो पर भी लेप किया गया है।

ब्लैक–एड–रेड वेयर (कृष्ण लोहित पात्र परम्परा) के बर्तनो के भीतरी सतह पर काला तथा ऊपरी सतह पर लाल लेप है । काले लेप के कुछ बर्तनो के भीतरी सतह पर सफेद तथा बाहरी सतह पर काले रग से चित्र बनाये गये है । चित्रण अभिप्रायो मे खडी तथा तिरछी मोटी रेखाए सम्मिलित हैं । इन स्थलो से पात्रो के जो आकार उपलब्ध हुए है उनमे कटोरे, आधार वाले कटोरे होठदार कटोरे थालियॉ, नाद, पैर वाले छिद्रयुक्त नाद, बीकर और विभिन्न आकार के घडे उल्लेखनीय है। लाल पात्र–परम्परा के कुछ बर्तनो की बाहरी सतह पर खडी या तिरछी रेखाए उत्कीर्ण करके अलकृत किया गया है और कभी–कभी आसजन विधि से अगुलियॉ दबा कर रस्सी की आकृति का अलकरण भी बनाया गया है। उत्खनन के अभाव मे मध्य गगा घाटी के पश्चिमी क्षेत्र की इस सस्कृति के स्वरूप के बारे मे अधिक विस्तृत ज्ञान नही है लेकिन पात्र प्रकारो चित्रण अभिप्रायो और लघु पाषाण उपकरणो के आधार पर मध्य गगा घाटी के सम्पूर्ण ताम्रपाषाणिक स्थलो से इस सस्कृति का एक ही स्वरूप आभाषित होता है ।

मध्य गगाघाटी की यह सस्कृति पूर्व मे निम्न गगाघाटी और दक्षिण मे विन्ध्य क्षेत्र की ताम्रपाषाणिक सस्कृतियो से कई सन्दर्भों मे जुडी हुई प्रतीत होती है। निचली गगा घाटी की ताम्रपाषाणिक सस्कृति के उत्खनित स्थल पाण्डुराजाढिबि, महिषदल और भरतपुर है । पश्चिमी बगाल के वर्धमान जिले मे स्थित पाण्डुराजाढिबि के उत्खनन (दास गुप्ता 1964) से हस्तनिर्मित भूरे या पीत लाल, काले और लाल, लाल और चमकीले लाल पात्र परम्परा के बर्तन प्राप्त हुए है । काले और सफेद रग से काले और लाल तथा लाल पात्र परम्परा के बर्तनो को चित्रित किया गया है । बर्तन आकारो मे कटोरे नाद थालियॉ छिद्रयुक्त बर्तन तथा लम्बे गले के घडे सम्मिलित है । अन्य सास्कृतिक सामग्रियो के अन्तर्गत ताबे के मनके, चूडियॉ, नहन्नी सुरमा–सलाई, कुल्हाडी, हड्डियो के बाणाग्र, पिन, कघे अर्द्धरत्नो के मनके और दन्तुर कटक ब्लेड से युक्त लघु पाषाण उपकरणो का उल्लेख किया जा सकता है ।

चमकीली लाल पात्र–परम्परा तथ पनारीदार टोटी के बर्तनो के मध्य गगा घाटी के अनुपस्थिति के आधार पर मध्य गगा घाटी और निम्न गगा घाटी की

सस्कृतियो को अलग–अलग मानने की सम्मति प्रस्तुत की गयी है (वर्मा 1969 103–104)। लेकिन कुछ स्थानीय विभेदो को छोडकर दोनो क्षेत्रो मे एक ही सस्कृति का विस्तार मानना अधिक तर्कसगत हे (मिश्र 1970) ।

मध्य गगा घाटी के दक्षिण विन्ध्य क्षेत्र मे ताम्रपाषाणिक सस्कृति के प्रमाण कई स्थलो से प्राप्त हुए है । ककोरिया कोडिहार कोलडिहवा, टोकवा, मघा आदि प्रमुख स्थल उल्लेखनीय है । ककोरिया की ताम्रपाषाणिक सस्कृति के लोग वृहद पाषाण समाधियो के भी निर्माता थे । इस क्षेत्र की पात्र–परम्पराए भी मध्य गगा घाटी की ही तरह हैं और यहॉसे पुच्छल तथा छिद्रयुक्त बाणाग्र भी अत्यधिक सख्या मे प्राप्त हुए है । बर्तनो के आकार भी दोनो क्षेत्रो मे एक ही जैसे है । लघु पाषाण उपकरण जिनमे दन्तुर कटक ब्लेड भी सम्मिलित है भी दोनो ही क्षेत्रो मे प्राप्त होते है इस आधार पर कहा जा सकता है कि मध्य गगा घाटी निम्न गगा घाटी तथा उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र की ताम्रपाषाणिक सस्कृति मूल रूप से एक ही सस्कृति का विस्तार है ।

मध्य गगाघाटी के उत्खनित ताम्रपाषाणिक स्थलो से पर्याप्त कार्बन तिथियॉ प्राप्त हुई है (तालिका 7) । चिराद से उपलब्ध कार्बन तिथियो के आलोक मे इस सस्कृति को 1600 से 800 ई0 पू0 के मध्य रखा जा सकता हे (मण्डल डी0 1972 126)। टी0 एफ0 1028–1540±90 ई0 पू0, टी0 एफ0 444–715± 105 ई0 पू0 के आधार पर यह तिथिक्रम निर्धारित किया गया है। सोहगौरा से भी दो कार्बन तिथियो 330±110 ई0 पू0 और 1230±130 ई0 पू0 प्राप्त हुई है ।

तालिका 7 ताम्रपाषाणिक स्थलो से प्राप्त रेडियो कार्बन तिथियॉ

पुरास्थल	सैम्पल न0	सी–14 तिथि	काल
सेनुवार		1770±110 ई0पू0 1500±110ई0पू0 1660±120ई0पू0 1440±120 ई0पू0	नवपाषाणिक–ताम्रपाषाणिक सक्रमण काल
झूँसी	पी0आर0एल0 2083	1340±90 ई0पू0	काल प्रथम (IA)

	पी0आर0एल0 2081	830±90 ई0पू0	(ताम्रपाषाणिक)
श्रृगवेरपुर	पी0आर0एल0 669	750±134 ई0पू0	काल द्वितीय (IIA) (ताम्रपाषाणिक)
नरहन		1123±110 ई0पू0 1133±110 ई0पू0	काल प्रथम (IA) (ताम्रपाषाणिक)
खैराडीह	बी0एस0आई0एफ0 पी0आर0एल0 1049	1120±90 ई0पू0 1030±160 ई0पू0 940±150 ई0पू0	काल प्रथम (IA) (ताम्रपाषाणिक)
चिराँद	टी0एफ0 445 टी0एफ0 1030 टी0एफ0 1028 टी0एफ0 1029 टी0एफ0 336 टी0एफ0 444 टी0एफ0 334	1665±103ई0पू0 1585±103ई0पू0 1540±93 ई0पू0 1050±88 ई0पू0 770±98 ई0पू0 715±105 ई0पू0 845±125 ई0पू0	काल द्वितीय (IIA) (ताम्रपाषाणिक)
सोनपुर	टी0एफ0 376	635±103 ई0पू0	काल प्रथम (IA) (ताम्रपाषाणिक)
सोहगौरा	पी0आर0एल0 178 पी0आर0एल0 179	1375±113 ई0पू0 1235±134ई0पू0	काल द्वितीय (IIA) (ताम्रपाषाणिक)
मल्हर	बी0एस0 1623 बी0एस0 1614 बी0एस0 1593 बी0एस0 1590	1500±90 ई0पू0 4330±110 ई0पू0 1590±90 ई0पू0 1790±80 ई0पू0	
राजा नल का टीला	बी0एस0 1378 पी0आर0एल0 2047 बी0एस0 1299 बी0एस0 1300 पी0आर0एल0 2049 पी0आर0एल0 2046 पी0आर0एल0 2045	600±110 ई0पू0 940±90 ई0पू0 800±100 ई0पू0 1110±110 ई0पू0 1100±90 ई0पू0 1150±90 ई0पू0 1310±90 ई0पू0	

समीक्षा

उत्खनित स्थलो से उपलब्ध प्रमाणो के आधार पर ताम्रपाषाणिक सस्कृति के स्थलो को प्रारम्भिक और परवर्ती दो वर्गो मे विभाजित किया गया है (मिश्र और गुप्ता 1996 27 मिश्र और मिश्र 2000 14–22, मिश्र 2000 66–85)। परवर्ती चरण के स्थलो मे राजघाट प्रथम ए प्रहलादपुर प्रथम ए मोसिनडीह प्रथम ए', चिराद तृतीय मॉझी प्रथम ताराडीह तृतीय बी' और सेनुवार दो बी को रखा गया है ।

ताम्रपाषाणिक स्थल मध्य गगा घाटी मे छोटी अथवा बडी नदियो के तट पर या धनुषाकार झीलो के किनारे स्थित है । इनके अधिवास स्थलो का विस्तार प्राय छोटे अथवा मध्यम आकार का है। विस्तृत उत्खननो के अभाव म आवास नियोजन सम्बन्धी प्रमाण अपेक्षाकृत कम प्राप्त हुए है लेकिन बास–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे और गोलाकार झोपडियो के फर्शों के प्रमाणो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस काल मे लोग झोपडियो मे ही निवास करते थे, जिनकी दीवालो का निर्माण बॉस और बल्ली से किया जाता था और इसके ऊपर मिट्टी का मोटा लेप लगाया जाता था । स्तम्भगर्त के प्रमाण भी ऐसा ही सकेत देते है। सेनुवार के उत्खनन से मिट्टी की दीवालो से घर बनाने का कुछ सकेत मिलता है। उल्लेखनीय है कि मध्य गगा घाटी के दक्षिणवर्ती विन्ध्य क्षेत्र की ताम्रपाषाणिक सस्कृति के उत्खनित स्थलो ककोरिया और कोलडिहवा से भी मिट्टी के दीवालो के प्रमाण उपलब्ध हुए है (मिश्र 1997)। इन फर्शों पर चूल्हे भी प्राप्त हुए है ।

मध्य गगाघाटी के ताम्रपाषाणिक सस्कृति के पुरास्थल चाक पर बने हुए रेड वेयर, ब्लैक–एण्ड–रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर से युक्त प्राप्त होते हैं । ब्लैक–एण्ड–रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर के पात्रो पर हल्के सफेद, क्रीम, भूरे और कभी–कभी लाल रग के भी बर्तनो के भीतरी और बाहरी सतह पर रेखीय चित्र बनाये गये हैं। लाल पात्र–परम्परा के बर्तनो पर काले रग के चित्रण अभिप्राय मिलते है । इसके अतिरिक्त आसजन विधि से उत्कीर्ण और रस्सी की छाप से बर्तनो को अलकृत किया गया है । सोहगौरा और ताराडीह जैसे स्थलो से बर्तनो के पक जाने के बाद उत्कीर्ण करके अलकरण बनाने के प्रमाण प्राप्त हुए हैं।

विभिन्न प्रकार के बर्तनो के आकार जिनमे छिछले ओर गहरे कटोरे होठयुक्त अथवा साधार कटोरे तश्तरियॉ नाद छोटे अथवा बडे गले के घडे हाडी लोटो के अधार के घडे डिस ऑन स्टैण्ड हैडिल युक्त कडाही आदि उपलब्ध हुए हैं। बर्तनो के विभिन्न प्रकारो के अधार पर ऐसा लगता है कि इनका प्रयोग बडे पैमाने पर किया जाता था । ये बर्तन पूर्ववर्ती तकनीक से बने है और अच्छी तरह से पके हुए है ।

मध्य गगा घाटी मे ताम्रपाषाणिक मानवो ने अपने उपकरणो के निर्माण के लिए ताबे, हड्डी हिरण की सीग और पत्थरो का प्रयोग किया। उल्लेखनीय है कि ताबे का प्रयोग अपेक्षाकृत कम हुआ है क्योकि ताबे को गलाने की भटटी के स्पष्ट प्रमाण कही से नही मिले है। इसलिए ऐसा निश्चय के साथ नही कहा जा सकता है कि ये लोग ताबे के उपकरणो का निर्माण स्वय करते थे अथवा ये उपकरण बाहर से लाये जाते थे। लघुपाषाण उपकरण तथा पत्थर के अन्य उपकरणो के लिए इस क्षेत्र का ताम्रपाषाणिक मानव विन्ध्य क्षेत्र पर निर्भर था। दोनो क्षेत्रो के ताम्रपाषाणिक सस्कृति के अन्य अवयवो से भी पारस्परिक आदान–प्रदान के प्रमाण उपलब्ध हुए है (पाल 1995 1319)। इस सस्कृति का मानव मनके लटकन, चूडियॉ, छल्ले कुण्डल आदि आभूषणो का प्रचुर प्रयोग करता था। चर्ट, चल्सिडनी, कार्नेलियन क्वार्ट्ज और मिट्टी हड्डी सीप, फयास और स्टीयटाइट एव ताबे आदि के बने हुए मनके प्राप्त हुए है। कुछ स्थलो से निरक्षारण अनेक भी प्राप्त हुए हैं। क्योकि लघुपाषाणिक उपकरणो की तरह इन स्थलो पर बने मनके भी निर्माण की विभिन्न अवस्थाओ मे मिलते है इससे कहा जा सकता है कि इनका निर्माण इन्ही स्थलो पर किया गया होगा। कई ताम्रपाषाणिक स्थलो पर आवासीय जमाव बहुत अधिक है (दो मीटर तक) । इससे लगता है कि इन स्थलो पर ताम्रपाषाणिक मानव लम्बे समय तक रहता रहा जो उनके स्थायी अधिवास का प्रमाण है। इन स्थलो से प्राप्त कुछ अस्थि अवशेषो और वानस्पतिक अवशेषो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मध्य गगाघाटी का ताम्रपाषाणिक मानव कृषक और पशुपालक था। लेकिन उसे सभवत मासाहार के लिए जगली पशु पक्षियो का आखेटक और मछली पकडने का कार्य करना पडता था। कृषि द्वारा उत्पादित

अनाजो मे चावल जौ, तीन प्रकार के गेहूँ, मटर, मूँग सरसो तथा अन्य तिलहन सम्मिलित है। कटहल अगूर और तुलसी जैसी वनस्पतियो के प्रमाण प्राप्त होते हैं। पशुओ मे कूबडयुक्त बैल भैस, भेड बकरी कुत्ता और सुअर के अतिरिक्त विभिन्न प्रजातियो के हिरण भी प्राप्त हुए है। मछली कछुए और पक्षियो की हड्डियॉ भी प्राप्त हुई है।

पचम अध्याय

लौह युगीन प्रारम्भिक ऐतिहासिक और एन0 बी0 पी0 डब्लू0 सस्कृति

प्रारम्भिक ऐतिहासिक कालीन सस्कृति का सम्बन्ध मध्य गगा घाटी मे लोहे के प्रथम प्रयोग से है, जो प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 (प्राक् उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड परम्परा) धरातल से कृष्ण–लोहित पात्र–परम्परा (ब्लैक–एड–रेड वेयर) के साथ प्राप्त होती है। इस क्षेत्र की कृष्ण–लोहित पात्र–परम्परा मुख्यत ताम्रपाषाणिक सस्कृति से सम्बन्धित है। यद्यपि इस सस्कृति के परवर्ती चरण से लोहे के प्रमाण मिलने लगते है, लेकिन सभवत लोहे के प्रारम्भिक ज्ञान ने अभी उनकी अर्थव्यवस्था मे कोई बडा परिवर्तन नही किया था। धीरे धीरे इस क्षेत्र मे लोहे के व्यापक प्रचलन ने सास्कृतिक स्वरूप को पूर्णत परिवर्तित करके एक नया आयाम प्रदान किया। यह विकसित लौह युग एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति से सम्बन्धित है। ऐसा प्रतीत होता है कि एन0बी0पी0डब्लू0 सरकृति की प्रमुख पात्र–परम्परा प्राक् एन0बी0पी0डब्लू (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) काल की कृष्ण लेपित पात्र–परम्परा (ब्लैक स्लिप्ड वेयर) से हा विकसित हुई । इस अध्याय मे इस क्षेत्र की लौहयुगीन एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के स्वरूप का विवेचन अभीष्ट है ।

एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) मृदभाण्ड–परम्परा की सस्कृति भारतीय पुरातत्व के इतिहास मे एक अत्यन्त उज्जवल अध्याय का प्रतिनिधित्व करती है। गगा घाटी मे इस पात्र–परम्परा के साथ द्वितीय 'नगरीय क्राति' का इतिहास आरम्भ होता है । लोहे के औजार बनाने की तकनीक के दक्षिणी उत्तर प्रदेश और दक्षिण बिहार के लौह–अयस्क (आयरन ओर्स) से समृद्ध क्षेत्रो मे पहुँच जाने के बाद व्यापक पैमाने पर लौह उपकरणो का निर्माण तथा

प्रयोग सम्भव हुआ। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे लौह तकनीक का प्रभाव परिलक्षित होने लगा था। लौह तकनीक के व्यापक प्रचलन का प्रभाव कृषि कार्य मे ही नही बल्कि घरेलू उद्योगो तथा वास्तु कला पर भी पडा। इस प्रकार एक अत्यन्त जटिल आर्थिक जीवन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई ।

सम्बद्ध मृदभाण्ड एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा के साथ–साथ जन–साधरण द्वारा प्रयुक्त मृदभाण्ड तथा दैनिक जीवन मे प्रयुक्त होने वाली कई प्रकार की पात्र–परम्पराए भी मिलती है । उदाहरण के तौर पर (1) मोटे गढन के अलकृत धूसर मृदभाण्ड (थिक प्लेन ग्रे वेयर) (2) कृष्ण–लेपित मृदभाण्ड (ब्लैक स्लिप्ड वेयर) (3) लाल रग के मृदभाण्ड (रेड वेयर), तथा (4) कृष्ण–लोहित मृदभाण्ड (ब्लैक–एड–रेड वेयर) उल्लेखनीय हैं । बडे–बडे घडे मटके तसले नाद (ट्रफस) आदि बर्तन प्रकार इन पात्र–परम्पराओ मे मुख्य रूप से मिलते है । इन मृदभाण्डो के नये–नये प्रकार लोगो की बढती हुई आवश्यकता को पूरा करते थे। एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) की तुलना मे इन मृदभाण्डो की प्रचुरता इनमे सहज–सुलभ और उपयोगी होने का सकेत करती है। विभिन्न प्रकार के बर्तनो की बढती हुई सख्या से जनसख्या वृद्धि भी परोक्ष रूप से इगित होती है ।

यद्यपि लोहे का प्रचलन प्राक् एन0बी0पी0 और चित्रित धूसर पात्र परम्परा के काल मे लगभग 1000 ई0 पू0 मे ही हो गया था लेकिन एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) काल मे लोहे के व्यापक स्तर पर प्रयोग के सकेत मिलते हैं जिससे लौह–अयस्क को पिघलाने और प्राप्त लोहे को पीटकर उपकरण बनाने की तकनीक मे प्रगति परिलक्षित होती है । चन्दौली जनपद मे स्थित मल्हार (तिवारी और अन्य 1999–2000) और इलाहाबाद मे स्थित झूँसी (मिश्र और अन्य 1999–2000) के उत्खनन से लोहे की और अधिक प्राचीनता क्रमश 1300 ई0पू0 और 1100 ई0पू0 तक चली गयी है (तिवारी 1998–99) । लोहे के उपकरणो के बडे पैमाने पर उपयोग से तत्कालीन लोगो के आर्थिक जीवन मे उल्लेखनीय परिवर्तन हुए । प्रमुख लौह–उपकरणो मे बाण–फलक भाले के शीर्ष, बल्लम शीर्ष, बर्छी, कटार चाकू, कुल्हाडी हँसिया, खुरपी कीले, बसूला, छेनी

कडाही तथा दीपक आदि है । उत्खनन से प्राप्त लौह धातुमल धातु विगलन के सकेत देते है । जुताई के कार्य मे लोहे के बने हुए फालो (आयरन प्लाऊ शेयर) के प्रयोग से गागेय क्षेत्र की चूने से युक्त कडी जलोढक मिट्टी पर कृषि–कार्य अधिक आसान हो गया । लोहे के वर्म (ड्रिल्स), बसूले (एडज्स) छेनियो एव रूखनियो के निर्माण से विभिन्न शिल्प–कार्यो विशेषकर लकडी की वस्तुओ के बनाने मे विशेष प्रगति हुई । लोहे की लोकप्रियता के कारण ताबे का प्रयोग अपेक्षाकृत सीमित होता गया। ताबे का प्रयोग अब सिक्को के निर्माण अजन–शलाकाओ, खिलौनो मुद्रिकाओ तथा मनको आदि के बनाने मे किया जाने लगा । प्राक् मौर्य काल से ही काष्ठ–शिल्प के विकास मे लौह उद्योग ने योगदान दिया और इस काष्ठ कला के अनुकरण पर ही पाषाण शिल्प विकसित हुआ ।

कृषि एव पशुपालन इस काल मे जीविका के प्रमुख साधन थे । काफी विस्तृत भू–भाग मे खेती की जाने लगी थी । चावल, गेहूँ, जौ तथा दलहन आदि जीवन का प्रमुख आधार था । पशुपालन के क्षेत्र मे भी इरी के साथ विकास हुआ। पालतू पशुओ मे गाय–बैल, भैस भेड बकरी घोडे तथा सुअर आदि की गणना की जा सकती है । इन पशुओ की हड्डियॉ विभिन्न पुरास्थलो के उत्खनन से प्राप्त हुई है । समाज का काफी बडा हिस्सा सभवत मासाहारी था। पशुओ की कुछ हड्डियो पर काटने के निशान मिलते है । पशुओ को केवल भारवाहन के लिए ही नही पाला जाता था बल्कि घी, दूध, मॉस के लिए भी उनकी उपयोगिता थी । मछुवारे के जाल को डुबाने के लिए प्रयुक्त मिट्टी की बनी हुई गोलियॉ (टेराकोटा नेट सिकर्स) और मछली फसाने की कटिया (फिश हुक) मछली पकडने का परोक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करती है । जगली पशुओ जैसे हिरण आदि का शिकार भी किया जाता था । प्रारम्भिक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) मे मिलने वाली पुरासामग्रियॉ प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) काल की पुरासामग्रियो से अधिक भिन्न नही हे लेकिन उत्कृष्ट पात्र परम्परा और उद्योगो तथा वाणिज्य क्षेत्र मे विकास के लक्षण दिखाई पडते हैं ।

एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के मध्य चरणो मे आते–आते यह परिवर्तन पुरासामग्रियो मे स्पष्टत परिलक्षित होने लगता

है। इस चरण की एक अन्य प्रमुख विशेषता सिक्को के सर्वप्रथम प्रचलन को माना जा सकता है । आर्थिक जीवन मे जटिलता आ जाने के फलस्वरूप वस्तु--विनिमय मे पेरशानी होने लगी । आर्थिक आवश्यकताओ के बढते दबाव से सिक्को का चलन शुरू हुआ। ताम्र और रजत के बने हुए आहत सिक्के (पन्च मार्क्ड क्वाइन्स) भारत के प्राचीनतम सिक्के माने जाते हैं । ताबे तथा चादी से निर्मित लेख रहित ढली हुई मुद्राओ (अनइन्स्क्राइब्ड कास्ट क्वाइन्स) की गणना आहत मुद्राओ के समकालिक सिक्को के रूप मे की जा सकती है। सिक्को के प्रचलन से एन0बी0पी0डब्लू0 पात्र परम्परा के काल मे व्यापार--वाणिज्य के क्षेत्र मे विशेष उन्नति हुई। व्यापारियो का उल्लेख छठी शताब्दी ई0 पू0 के नगरीय समाज के एक अभिन्न अग के रूप मे तत्कालीन साहित्य मे भी मिलता है ।

भवन निर्माण कला के क्षेत्र मे भी इस काल मे उल्लेखनीय प्रगति हुई । अधिकाश उत्खनन सीमित तथा सूच्याक (इनडेक्स) प्रकार के है इसलिए वास्तु कला के विषय मे प्राप्त जानकारी अपूर्ण एव एकागी है । यद्यपि इस काल मे भी मिट्टी घास--फूस और बॉस--बल्ली के बने हुए कच्चे मकानो का निर्माण होता रहा तथापि भट्ठे मे पकाई गई ईटो का प्रयोग भवनो के निर्माण के लिए अधिकाधिक मात्रा मे होने लगा । इसके प्रमाण हस्तिनापुर (लाल 1954--55) अतरजीखेडा (गौड 1983) मथुरा (जोशी और सिन्हा 1981) कौशाम्बी (शर्मा 1969) राजघाट (नारायन और सिह 1977) उज्जैन तथा बहाल के उत्खननो से मिलते हैं । गढी हुई लकडी से काष्ठ स्थापत्य भी निर्मित हुये । नगरो की सुरक्षा के लिए रक्षा प्राचीर' तथा परिखा के निर्माण के प्रमाण अहिच्छत्र, कौशाम्बी, राजगृह तथा उज्जैन आदि से प्राप्त हुए है । रक्षा--प्राचीरो का निर्माण मिट्टी की बनी हुई मोटी दीवालो (भीटो) के रूप मे किया जाता था । कभी--कभी रक्षा--प्राचीरो की बाहरी सतहो पर पकी हुई ईटे चुन दी जाती थी । इससे रक्षा--प्राचीर और अधिक मजबूत हो जाती है । इस काल के नगरो के कुछ भवनो मे स्वच्छता तथा सफाई की दृष्टि से मृतिका--वलय--कूपो (टेराकोटा रिंग वेल्स) एव सछिद्र घडो को जोडकर सोख्ता गड्ढो (सोकेज पिट्स) का निर्माण किया जाता था । स्वच्छता की ऐसी व्यवस्था कुछ खास घरो मे ही मिलती है । कौशाम्बी मे पकी ईटों की बनी

हुई टॅकी और खुली नालियॉ तथा मिट्टी के पाइपो (पाट्री पाइप ड्रेन्स) की बनी हुई सार्वजानिक नालियॉ इस काल के स्तरो से मिली है (शर्मा 1980)। इस प्रकार के निर्माण कार्य सफाई एव स्वच्छता को विशेष रूप से सदर्भित करते हैं । अनुमान किया जा सकता है कि समसामयिक जीवन मे स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का विशेष महत्व था ।

एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के काल मे मृण्मूर्तियो के निर्माण के क्षेत्र मे पर्याप्त प्रगति हो चुकी थी । पूर्ववर्ती प्राक एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) और चित्रित धूसर पात्र–परम्परा काल की मृण्मूर्तियो की तुलना यदि इस काल के मृण्मूर्तियो से की जाये तो यह भेद अधिक स्पष्ट हो जायेगा (हाथी, घोडे, वृषभ, कुत्ते भेडा, हिरण आदि पशुओ और कच्छप सर्प आदि सरीसृपो एव चिडियो की हस्त–निर्मित मूर्तियॉ है । पशुओ की मृण्मूर्तियो का निर्माण अत्यन्त कुशलता के साथ किया गया है । ऑखो को एक गोले (वृत्त) के अन्दर छेद करके बनाया गया है । पशुओ की मृण्मूर्तियो को छोटे–छोटे गोले (सर्किलेटस) के ठप्पे लगाकर (पन्च) गहरे रेखाकन (डीप इनसाइज्ड लाइन्स) तथा किसी चीज से दबाकर बनायी गयी पत्तियो (इम्प्रेसड लीफ डिजाइन्स) के द्वारा अलकृत किया गया है । अधिकाश मृण्मूर्तियॉ लाल रग की है जिनके ऊपर गेरू के गहरे घोल का लेप (रेड स्लिप्ड) चढाया गया है। धूसर तथा काले रग की पशु–मृण्मूर्तियो के उदाहरण भी झूॅसी राजघाट, मथुरा, एव वैशाली इत्यादि पुरास्थलो से मिले है। यह उल्लेखनीय है कि बक्सर से पीले रग की पडी रेखाओ से अलकृत पशु–मृण्मूर्तियो प्राप्त हुई है ।

पशुओ की मृण्मूर्तियो के अलावा मानव मृण्मूर्तियॉ भी उपलब्ध हुई हैं । प्राय अधिकाश पशु–मृण्मूर्तियॉ हाथ से बनायी हुई मिलती है । मानव–मृण्मूर्तियो के सॉचे मे ढालकर (कास्ट) बनाये गये कतिपय नमूने भी मिले हैं । हस्त–निर्मित मानव मृण्मूर्तियो मे हाथो और पॉवो का निर्माण स्टम्प अथवा डण्डे (स्टप) के रूप मे किया गया है । ऑखो को एक छोटे से वृत्त अथवा केवल रेखाकन के द्वारा और बालो को प्रदर्शित करने के लिए सिर पर गहरी रेखाएँ खीच दी गई हैं तथा नाक बनाने के लिए मिट्टी को चुटकी से दबा दिया गया है । परवर्ती चरण मे बडे–बड़े

कर्णपटल (ईयरलोब्स) और उनमे चक्राकार कर्णफूल गले मे भारी कामदार हारावली आदि का निर्माण आसजन विधि से किया गया है । स्त्री मृण्मूर्तियो के वस्त्रालकरण पर्याप्त तथा लहराते हुए (फ्लोइग) बनाये गये है ।

कुम्रहार के उत्खनन से प्राप्त कतिपय मृण्मूर्तियो को तन्वगी पृथुल नितम्ब और छोटे–छोटे पॉवो वाली बनाया गया है। इस मृण्मूर्ति मुखाकृति मानव (हूयमन फेस) की और शरीर पशु (एनीमल बाडी) का है । डीडढी को चुटकी से दबाकर इस प्रकार बनाया गया है जिससे वह दाढी (बियर्ड) की भॉति प्रतीत हो । इस मृण्मूर्ति के पूरे शरीर को गोलाकार छापे लगाकर सजाया गया है। गर्दन के निचले भाग मे एक छिद्र बना है जिसमे सभवत एक डोरी डालकर इसको आगे–पीछे झुलाया जा सकता है । मृण्मूर्तियो का निर्माण खिलौनो के रूप मे तो होता ही रहा होगा लेकिन इस बात की सम्भावना से इन्कार नही किया जा सकता है कि इनमे से कुछ के निर्माण के पीछे धार्मिक विश्वासो की भी कतिपय भूमिका अवश्य रही होगी ।

मृण्मूर्तियो के अतिरिक्त एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के स्तरो से प्राप्त लेखरहित सिक्के ढालने के सॉचो का भी उल्लेख किया जा सकता है । मिट्टी की बनी हुई राजमुद्राए (सील्स), राजमुद्राक (सीलिग्स), कुम्भकार की थापी (पार्टस डैबर्स) और कुम्भकार के ठप्पे (पार्टस स्टेम्प) भी प्राप्त हुए है ।

एन0बी0पी0डब्लू (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा के लोगो ने अपनी परिष्कृत अभिरूचि का परिचय विभिन्न प्रकार के आभूषणो के निर्माण के माध्यम से दिया है। उदाहरण के लिए विभिन्न पुरास्थलो के उत्खन से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के स्तरो से माणिक्य के मनके और चूडियॉ,कडे तथा अगूठियॉ मिली है । तामडा (चर्ट), पत्थर, गोमेद (चैल्सिडनी) तथा कॉच के बने हुए बेलनाकार, गोलाकार एव त्रिभुजाकार मनके अधिक प्रचलित थे । चूडियॉ बनाने के लिए ताबे का विशेष रूप से उपयोग किया जाता था । इसके अतिरिक्त मिट्टी, कॉच हाथीदॉत, हड्डी आदि के बने हुए मनके, चूड़ियॉ और

अगूठियॉ कलात्मक दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं । प्रसाधन सामग्री मे अजन–शलाकाए ताबे की बनी हुई पिने, हड्डी और हाथीदॉत की बनी हुई कघियॉ, नख–कर्तक (नेल कटर) एव मृण्मय देह–मर्दक या झॉवा (टेराकोटा फ्लेश–रवर्स) आदि की भी गणना अन्य उल्लेखनीय पुरावशेषो मे की जा सकती है । ये सभी पुरासामग्रियॉ नगरीय जीवन का स्पष्ट सकेत करती है ।

एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा के उत्खनित पुरास्थलो से बहुत बडी सख्या मे हड्डी के बने हुए उपकरण प्राप्त हुए हैं। इनको पुराविदो ने बाण–फलक (ऐरो प्वाइटस) अथवा अस्थि निर्मित बेधक (बोन प्वाइट्स) तथा लेखनी (स्टाइल्स) आदि नाम दिये हैं । बाण–फलक का पक्षियो आदि का शिकार करने मे उपयोग होता रहा होगा । स्टाइल्स या लेखनी कहे लेखन के काम मे आती रही होगी । यद्यपि अभिलिखित लेख नही मिले है लेकिन सम्भव है कि परवर्ती काल मे प्राप्त ब्राम्ही लिपि इस युग रो नाशशील समाग्रियो पर लिखी गयी है ।

इस प्रकार हम यह देखते है कि प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल (एन0बी0पी0डब्लू0 काल) मे लोगो के सास्कृतिक जीवन मे पर्याप्त प्रगति हो चुकी थी । जीवन अत्यन्त जटिल हो चुका था । 'नगरीय क्रान्ति के प्रादुर्भाव के फलस्वरूप भौतिक जीवन काफी समृद्ध एव समुन्नत हो गया था ।

मध्य गगाघाटी (पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार) मे एन0बी0पी0 पात्र–परम्परा से सम्बन्धित प्राचीन तिथि वाले पुरास्थल मुख्यत मध्य गगा घाटी मे दिखलायी पड़ते है (रेखाचित्र 31)। अत यह प्रश्न सहज है कि क्या इस पात्र–परम्परा का उद्भव मध्य गगा घाटी मे हुआ ? बीसवी शती के छठे दशक मे किसी पुराविद् को इस बात की जानकारी नही थी कि मध्य गगा घाटी मे एन0बी0पी0डब्लू0 से पहले कोई पात्र–परम्परा रही होगी । हस्तिनापुर (लाल 1951–52) के उत्खनन के बाद मध्य गगा घाटी तथा उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र मे विभिन्न पुरास्थलो पर जो उत्खनन कार्य हुए है, उनसे हमारी पुरातात्विक जानकारी मे वृद्धि हुई है । इरा क्षेत्र मे ताम्रपाषाणिक
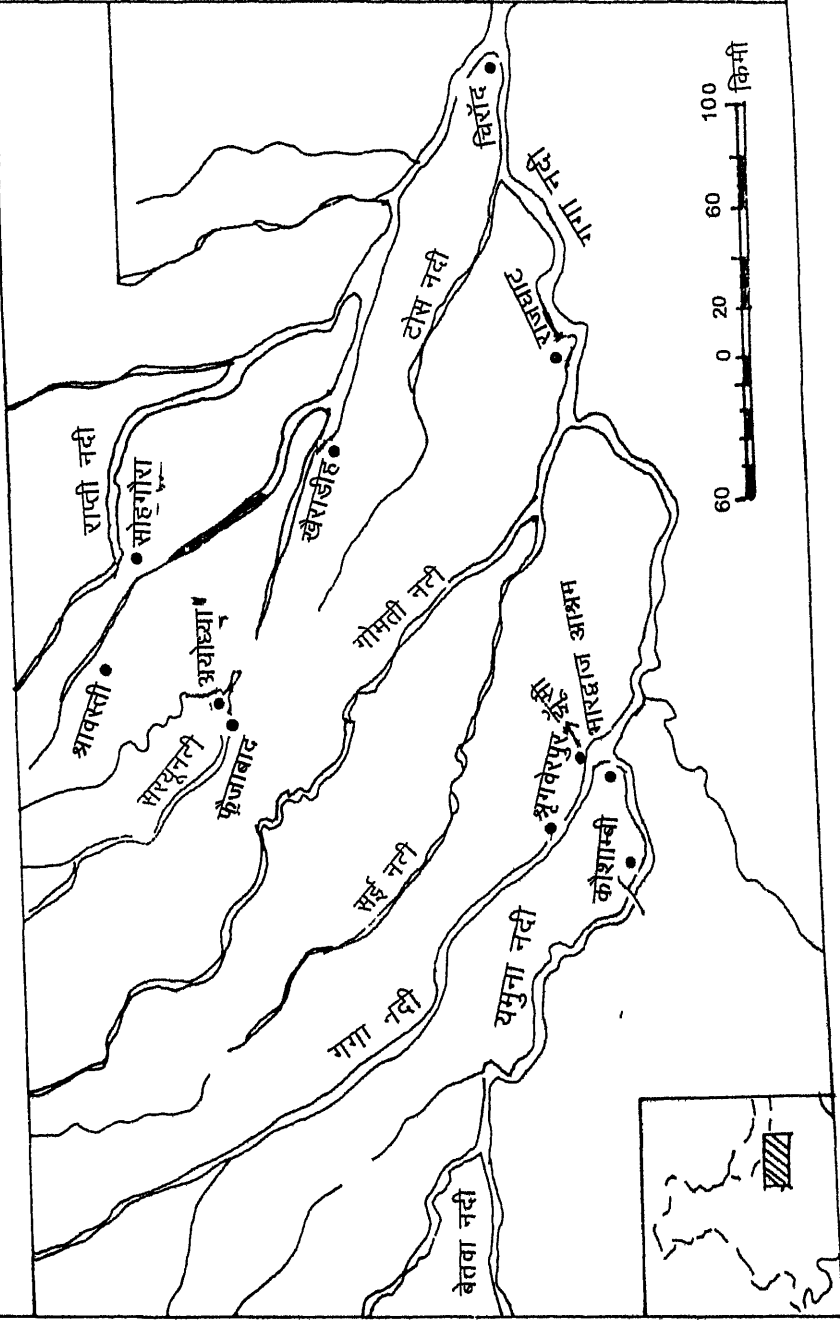
रेखाचित्र 31 मध्य गगाघाटी के प्रमुख ऐतिहासिक उत्खनित स्थल

स्तरो से कृष्ण लेपित मृदभाण्ड मिलते है । ये पात्र एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के पूर्ववर्ती स्तरो से प्राप्त होते हे जो कालान्तर मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के स्तरो मे भी मिल जाते है। इन दोनो पात्र परम्पराओ के पात्र–प्रकारो मे भी साम्य है। उदाहरण के लिए तरह–तरह की थालियाँ और कटोरे दोनों पात्र–परम्पराओ मे एक से है । इस आधार पर इस बात की प्रबल सभावना है कि मध्य गगा घाटी मे ही इस विशिष्ट पात्र परम्परा का उद्भव हुआ और यही से यह कला अन्य क्षेत्र मे विकसित हुई । यही नही इस क्षेत्र के पुरास्थलो पर एन0 बी0 पी पात्र–खण्ड बहुत बडी सख्या मे मिलते है और समीपवर्ती उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र की कृष्ण लेपित पात्र परम्परा से भी सम्बन्धित बहुसख्यक पुरास्थल दिखलायी पडते हैं जहाँ लौह अयस्क उपलब्ध थे जिनका लौह तकनीक के विकास मे अत्यधिक योगदान था ।

उत्तरी कृष्ण परिमार्जित मृदभाण्डो से सम्बन्धित अनेक पुरास्थल अभी तक खोज निकाले गये हैं और इनमे से कुछ पुरास्थलो पर उत्खनन भी हुआ है । ऐसे पुरास्थलो मे उत्तर–प्रदेश के बहराइच जिले मे स्थित श्रावस्ती के टीले का उत्खनन उल्लेखनीय है । यहाँ पर के0 के0 सिन्हा के नेतृत्व मे उत्खनन हुआ है । सिन्हा का मत है कि एन0बी0पी0डब्लू (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के वास्तविक महत्व को उसके सही पुरातात्विक परिप्रेक्ष्य मे रखकर ही आका जा सकता है । एन0बी0पी0डब्लू0 दो सर्वथा भिन्न सन्दर्भो मे मिलती है प्रथम आरम्भिक तथा द्वितीय परवर्ती सन्दर्भ मे । इस आधार पर एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) का तिथिक्रम निर्धारित किया जा सकता है। एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा का प्रारम्भिक चरण कौशाम्बी, राजघाट (वाराणसी), श्रावस्ती, वैशाली तथा राजगिरि अयोध्या, श्रृगवेरपुर, झूँसी, अगियापीर आदि स्थलो मे प्राप्त होता है । इसका परवर्ती स्वरूप चरसद्दा रोपड, हस्तिनापुर, उज्जैन और नवादीटोली मे मिलता है । आरम्भिक पुरास्थलो मे इसकी तिथिक्रम 700 ई0पू0 तक जाता है जबकि सामान्य तिथिक्रम 500–300 ई0पू0 के मध्य निर्धारित किया जा सकता है । परवर्ती श्रेणी के पुरास्थलो जैसे रोपड़, हस्तिनापुर, कुम्रहार तथा उज्जैन मे इसका प्रचलन लगभग 350 ई0पू0 के पहले नहीं हुआ ।

पुरातात्विक साक्ष्यो के आधार पर एन0बी0पी0 पात्र–परम्परा का जो तिथिक्रम प्रस्तावित किया गया है, उससे पुराविद् सहमत नहीं हैं । इनमे से डी0 एच0 गार्डेन तथा आर0 ई0 एम0 व्हीलर के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । डी0 एच0 गार्डेन के अनुसार उपलब्ध पुरातात्विक साक्ष्यो के परिप्रेक्ष्य मे एन0बी0पी0डब्लू0 को 400 ई0 पू0 से पहले कदापि नहीं रखा जा सकता है । इसके व्यापक प्रचलन का काल चौथी नही बल्कि दूसरी शताब्दी ई0 पू0 प्रतीत होता है । व्हीलर की सम्मति है कि एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा के प्रचलन का काल पॉचवी से दूसरी शताब्दी ई0 पू0 के मध्य माना जा सकता है । व्हीलर ने पाकिस्तान स्थित चरसद्दा और उदयग्राम से प्राप्त पुरातात्विक प्रमाणो के आधार पर 'उत्तर–पश्चिम के परिधीय क्षेत्र मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के प्रचलन का समय 320–150 ई0 पू0 के बीच तथा गगा के मैदान मे स्थित केन्द्रीय क्षेत्र के पुरास्थलो पर इस तिथि से कुछ शताब्दियो पहले इसके प्रचलन की सम्भावना व्यक्त की है ।

भारत, पाकिस्तान तथा नेपाल से कुल मिलाकर लगभग दो सौ से अधिक एन0 पी0 पात्र–परम्परा से सम्बद्ध पुरास्थल प्रकाश मे आ चुके है जिनमे से लगभग आधे से अधिक पुरास्थल तो केवल गागेय क्षेत्र मे ही स्थित है । इनमे से कई पुरास्थलो पर समय–समय पर उत्खनन कार्य भी हुए है । उत्खनित पुरास्थलो मे से लगभग एक दर्जन से अधिक पुरास्थलो के एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) स्तरो की रेडियो कार्बन तिथियॉ ज्ञात है ऐसे पुरास्थलो मे रोपड, हस्तिनापुर, राजघाट (वाराणसी), कुम्रहार राजगिरि, बेसनगर उज्जैन तथा कायथा आदि प्रमुख है । रेडियो कार्बन तिथियो के आधार पर एन0बी0पी0 मृदभाण्ड परम्परा के तिथिक्रम पर नये सिरे से विचार किया जाने लगा है। जिन पुरास्थलो से अपेक्षाकृत प्राचीन रेडियो कार्बन तिथियाँ उपलब्ध हुई हैं। वे हैं अतरजीखेडा, मथुरा, अयोध्या, कौशाम्बी, राजघाट और उज्जैन, झूँसी आदि।

रेडियो कार्बन तिथियो के आधार पर यह ज्ञात होता है कि छठीं शताब्दी ई0 पू0 के मध्य तक यह पात्र–परम्परा अस्तित्व मे आ चुकी थी । इलाहाबाद जिले की सोराव तहसील मे स्थित श्रृगवेरपुर के पुरास्थल से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी

कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा के सम्बन्ध मे एक ताप–सदीप्तक (उष्मा दीप्ति) तिथि को 800 ई0 पू0 मे रखने का आग्रह किया गया है। भारतीय पुरातत्व मे ऊष्मा–दीप्ति के आधार पर निर्धारित तिथियाँ बहुत कम है। अन्य देशो के सन्दर्भ मे भी अभी तक इस तरह की तिथि–प्रणाली प्रयोग के स्तर पर ही है । अत श्रृगवेरपुर की ऊष्मा–दीप्ति तिथि को अन्तिम रूप से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) की प्राचीन तिथि के रूप मे नही स्वीकार किया जा सकता है । अभी तक मथुरा से प्राप्त रेडियो कार्बन तिथि अपनी तरह की अकेली तिथि थी। लेकिन झूँसी आदि स्थलो से भी अब प्राचीन तिथियाँ मिलने लगी हैं अत मध्य गगाघाटी मे जहाँ इस सस्कृति का अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियो के कारण उद्भव हुआ । इसके प्रारम्भ होने की तिथि को 700 ई0 पू0 के कुछ पहले रखा जा सकता है। जब तक कतिपय अन्य पुरास्थलो से भी एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) के स्तरो से छठी शताब्दी ई0 पू0 के पहले की तिथियाँ न मिल जाये तब तक ये तिथियाँ विवाद की परिधि से परे नही मानी जा सकती है ।

यह पात्र–परम्परा छठी शताब्दी ई0 पू0 के पहले अस्तित्व मे आ चुकी थी। यह पात्र–परम्परा कब तक चलती रही ?यह भी कुछ सीमा तक विवादास्पद है । यद्यपि इस बात के सकेत मिलते है कि द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 के पहले ही यह पात्र–परम्परा अपनी लोकप्रियता क्रमश खोती जा रही थी, उस समय तक इसका प्रचलन बहुत सीमित हो गया था । इस बात की सम्भावना से इन्कार नही किया जा सकता है कि मध्य गगा घाटी मे कुछ ऐसे क्षेत्र रहे होगे जहाँ यह पात्र–परम्परा बाद की शताब्दियो मे भी चलती रही उदाहरण के लिए चन्दौली जिले की चकिया तहसील मे स्थित हेतिमपुर नामक स्थान से इस पात्र–परम्परा की रेडियो कार्बन तिथि प्रथम शताब्दी ई0 पू0 ज्ञात है लेकिन यह एकाकी तिथि है जिसे स्वीकार करने मे पुराविदो को किचित सकोच होना स्वाभाविक है । इस बात की सम्भावना फिर भी बनी रह जाती है कि यह पात्र–परम्परा प्रथम शताब्दी ई0 पू0 तक कुछ क्षेत्रो मे चलती रही हो ।

मध्य गगा घाटी के प्रारम्भिक इतिहास से सम्बन्धित एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के पुरास्थल अधिकाशत कई सास्कृतिक जमावो से युक्त है । जिन स्थलो से इस सस्कृति के पहले के (नवपाषाणिक अथवा ताम्रपाषाणिक) जमाव भी मिलते हे उनका विवरण पूर्ववर्ती अध्यायो मे दिया जा चुका है, लेकिन कुछ स्थलो का सक्षिप्त विवरण अग्रिम पक्तियो मे है। इनमे चिराद चेचर–कुतुबपुर ताराडीह सेनुआर सोहगौरा इमलीडीह भूनाडीह लहुरादेवा, धुरियापार झूँसी कौशाम्बी श्रृगवेरपुर, खैराडीह मॉझी मनेर, ओरियप, चम्पा सोनपुर राजघाट प्रहलादपुर सरायमोहना, कमौली, मसोनडीह और नरहन इत्यादि उल्लेखनीय हैं ।

कौशाम्बी

कौशाम्बी (अक्षाश 25^0 20′ 30′ उ0 देशान्तर 81^0 23 12′ पू0) के ध्वसावशेष उत्तर–प्रदेश के कौशाम्बी जनपद के मझनपुर तहसील के 'कोसम इनाम' और कोसम खिराज नामक गॉवो के बीच स्थित है । यह पुरास्थल इलाहाबाद शहर से दक्षिण–पश्चिम दिशा मे लगभग 52 किलोमीटर की दूरी पर यमुना नदी के बाये किनारे स्थित है । कौशाम्बी को भारतीय पुरातत्व के मानचित्र पर रखने का श्रेय अलेक्जेण्डर कनिघम को है, जिन्होने 1861 ईस्वी मे यहॉ की यात्रा की थी। अपने सर्वेक्षण के आधार पर वे इस नतीजे पर पहुँचे थे कि कोसम ही प्राचीन कौशाम्बी था ।

कौशाम्बी मे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की ओर से सन् 1936–37 मे एन0 जी0 मजूमदार ने उत्खनन कार्य प्रारम्भ किया था । इलाहाबाद विश्वविद्यालय की ओर से स्वर्गीय जी0 आर0 शर्मा ने सन् 1949 से लेकर 1964–65 तक यहॉ पर उत्खनन कराया था ।

कौशाम्बी के टीले मे मानव–आवास के चिन्ह लगभग 6 45 किलोमीटर की परिधि मे फेले हुए है । कौशाम्बी का टीला एक विशाल रक्षा–प्राचीर (परकोटे) से घिरा हुआ था जो आयताकार रूप मे फैली हुई है । इस परकोटे का आधार यमुना

नदी है । जिनसे रक्षा–प्राचीर अर्द्ध–वृत्त बनाती है । कौशाम्बी मे अभी तक चार विभिन्न क्षेत्रो मे उत्खनन हुए है

1– अशोक–स्तम्भ क्षेत्र

2– घोषिताराम विहार क्षेत्र

3– पूर्वी प्रवेश–द्वार के पास रक्षा–प्राचीर,

4– राजप्रासाद क्षेत्र ।

अशोक–स्तम्भ क्षेत्र कौशाम्बी टीले के मध्यवर्ती भाग मे जहॉ पर भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की ओर से एन0 जी0 मजूमदार ने उत्खनन कराया था, वहॉ पर अशोक का लेख–रहित एक पाषाण स्तम्भ मलबे मे दबा हुआ मिला था । उसको उसी स्थान पर खडा कर दिया गया है । सन् 1949 तथा 1950 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने भी इसी क्षेत्र मे उत्खनन कार्य कराया था । इस क्षेत्र मे तीन सस्कृतियो के साक्ष्य प्राप्त हुए है

1– चित्रित धूसर पात्र–परम्परा

2– उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्परा

3– उत्तर–एन0 बी0 पी0 पात्र–परम्परा

चित्रित धूसर सस्कृति के साक्ष्य छोटे से क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं । प्राप्त पात्र खण्डो की सख्या भी बहुत सीमित है । उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्रा (एन0 बी0 वेयर) से सम्बन्धित निर्माण के आठ स्तर (स्ट्रक्चरल पीरियड्स) इस क्षेत्र से प्रकाश मे आये है, जिनमे से प्रथम पॉच मे भवन–निर्माण कार्य मे मिट्टी तथा कच्ची ईटो के प्रयोग के साक्ष्य मिले हे । ऊपरी तीन निर्माण स्तरो से जो साक्ष्य प्राप्त हुए है उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि कालान्तर मे भवनो का निर्माण पकी हुई ईटो से होने लगा था। एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) काल के प्राचीन मार्गों (रोडस), गलियो (लेन्स), नालियो तथा रिहायसी भवनो के विषय मे उल्लेखनीय जानकारी इस क्षेत्र के उत्खनन से प्राप्त हुई हैं इस क्षेत्र मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) पात्र–परम्परा के बाद

भी लोग निवास करते रह जो मुख्यत लाल रग की पात्र–परम्परा का उपयोग करते थे । तृतीय काल की सस्कृति के काल–क्रम का निर्धारण कौशाम्बी से प्राप्त मित्र शासको के सिक्के करते है। जिन्हे पुरालिपि एव मुद्राशास्त्रीय साक्ष्यो के आधार पर द्वितीय शताब्दी ई0पू0 मे रखने का आग्रह किया गया है। शक–पार्थियन तकनीक पर बनी मिट्टी की मूर्तियॉ तथा कुषाणो के सिक्के आदि तृतीय काल के ऊपरी स्तरो से मिले हैं। सभवत इस क्षेत्र मे आवास की निरन्तरता गुप्त काल तक चलती रही । इस क्षेत्र के उत्खनन से न केवल मिट्टी के बर्तनो के विषय मे अपितु मिट्टी की मूर्तियॉ, सिक्को तथा अभिलेखो के सन्दर्भ मे महत्वपूर्ण सूचनाए मिली है ।

घोषिताराम विहार क्षेत्र कौशाम्बी के टीले क पूर्वी भाग मे घोषिताराम विहार के ध्वशावशेष विद्यमान है । प्राचीन बौद्ध साहित्य मे उल्लेख अनेक स्थानो पर किया गया है। प्राचीन बौद्ध साहित्य मे इसका उल्लिखित परम्परा के अनुसार एक बार जब गौतम बुद्ध श्रावस्ती मे वर्षावास कर रहे थे तब कौशाम्बी के घोषित नामक सेठ ने अपने दो अन्य सेठ मित्रो कुक्कुट तथा पवरिया के साथ जाकर गौतम बुद्ध के दर्शन किये और उनको कौशाम्बी आने के लिए आमत्रित किया था। घोषित सेठ के आमत्रण पर तथागत कौशाम्बी आये थे। घोषित सेठ ने गौतम बुद्ध तथा भिक्षुओ को ठहराने के लिए जिस विहार का निर्माण कराया था । वह निर्माता के नाम पर घोषिताराम के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

घोषिताराम विहार का उत्खनन इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने सन् 1951 से 1956 के बीच मे कराया था । घोषिताराम के उत्खनन के फलस्वरूप एक विहार प्रकाश मे आया है जिसमे निर्माण के सत्रह स्तर (स्ट्रक्चरल पीरियड्स) प्रकाश मे आये है । घोषिताराम के क्षेत्र मे सम्पन्न हुए उत्खनन से पता चलता है कि कौशाम्बी के इस हिस्से मे मानव के आवास की परम्परा उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्परा के प्रचलन के साथ प्रारम्भ हो गई थी क्योकि इस क्षेत्र के सबसे निचले स्तरो से इस पात्र–परम्परा के पात्र खण्ड उपलब्ध हुए हैं ।

विहार के सन्दर्भ मे उत्खनन से महत्वपूर्ण सूचनाए प्राप्त हुई हैं । इसका निर्माण छठवी शताब्दी ई0 पू0 के उत्तरार्द्ध मे सम्पन्न हुआ था । निर्माण के विभिन्न

स्तरो को देखकर यह पता चलता है कि इसका पुर्निमाण विभिन्न समयो मे होता रहा । उत्खनन के फलस्वरूप जो विहार प्रकाश मे आया है वह विहार एव चैत्य के मिले–जुले रूप मे था । उसका प्रमुख प्रवेश–द्वार पश्चिम की ओर था । विहार के प्रवेश–द्वार के बगल मे हारीति एव कुबेर का एक चैत्यगृह प्रकाश मे आया है जिसमे हारीति गजलक्ष्मी और कुबेर की मिट्टी की विशालकाय मूर्तियॉ स्थापित थी। विहार के बीच मे एक आगन था जिसके उत्तरी एव पूर्वी भागो मे भिक्षु–भिक्षुणियो के रहने के लिए छोटे–छोटे कक्ष (कोठरियॉ) बने हुए थे जिनके आगे बरामदे थे । पश्चिम हिस्सा खुले मैदान के रूप मे था जहॉ भिक्षु इकटठा होते थे । विहार के प्रागण मे एक बहुत बडा वर्गाकार स्तूप था । इसका आकार 24 70 X 24 70 मीटर था । इसके अतिरिक्त एक अण्डाकार स्तूप था । तीन छोटे–छोटे स्तूपो के अवशेष भी प्राप्त हुए है ।

घोषिताराम विहार के उत्खनन से प्रस्तर की प्रतिमाऍ, मिट्टी की बहुसख्यक मूर्तियॉ, सिक्के अभिलेख तथा मुहरे मिली है। यहॉ की प्रस्तर प्रतिमाओ के अध्ययन से यह पता चलता है कि द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 मे जिस समय भरहुत, सॉची, तथा बोधगया मे अमर कलाकृतियो का सृजन हो रहा था कौशाम्बी का तक्षकार (मूर्तिकार) शान्त नही बैठा हुआ था। घोषितराम विहार से प्रस्तर की ऐसी कलाकृतियॉ मिली है जिन पर बुद्ध का प्रतीको के माध्यम से अकन किया गया है। यहॉ से स्तूप की प्रस्तर वेदिका के अनेक खण्डित अश मिले हैं जिनमे से कुछ पर द्वितीय प्रथम शताब्दी ई0 पू0 की लिपि मे लघु आकार के अभिलेख भी अकित है । कौशाम्बी के घोषिताराम विहार से कुषाण काल की लेखयुक्त कतिपय ऐसी प्रतिमाए मिली है जिनका निर्माण तो मथुरा मे हुआ था लेकिन बौद्ध धर्म का एक प्रसिद्ध केन्द्र होने के कारण जिनकी स्थापना भिक्षुणी बुधमित्रा ने कौशाम्बी मे करायी थी । गुप्त काल मे जिस तरह मथुरा और सारनाथ मे मूर्तिकला की अलग–अलग शैलियॉ थी उसी तरह सभवत कौशाम्बी गुप्त काल मे एक कला केन्द्र था। यहॉ से प्रथम शताब्दी से लेकर पॉचवी शताब्दी तक की प्रस्तर–मूर्तियॉ मिली हैं ।

घोषिताराम से मृण्मूर्तियॉ भी बडी सख्या मे मिली है । इनमे मौर्य शुग तथा शक–पार्थियन कालो की मिट्टी की मूर्तियॉ अधिक सख्या मे मिली है ।

शक–पार्थियन मृण्मूर्तियो मे तिकोनी शिरावेश–भूषा से युक्त मातृदेवी तथा मृदग वादक आदि की मिट्टी की मूर्तियॉ उल्लेखनीय है। ये ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे गागेय क्षेत्र मे व्याप्त विदेशी प्रभाव का दिग्दर्शन कराती है । गजलक्ष्मी तथा हारीति की आदमकद मृण्मूर्तियॉ आकार–प्रकार एव भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से अनुपम है ।

कौशाम्बी के घोषिताराम के उत्खनन से प्राप्त रजत एव ताम्र आहत मुद्राए (सिक्के) तथा लेख रहित ढले हुए सिक्के पॉचवी–चौथी शताब्दी ईसवी पूर्व मे प्रचलन मे आये । इनके अलावा कौशाम्बी के स्थानीय सिक्के कुषाण तथा मघ राजाओ के सिक्के उल्लेखनीय है । प्राचीन भारतीय इतिहास के अर्थिक तथा अन्य पक्षो पर इनसे प्रकाश पडता है । मणि–माणिक्य मिट्टी तथा हड्डी के बने हुए मनके बहुत बडी सख्या मे मिले है जो तत्कालीन लोगो के सोदर्य–बोध के साथ–साथ निर्माता शिल्पियो के हस्तलाघव के मूक साक्षी हैं ।

घोषिताराम से जो अनेक छोटे–छोटे अभिलेख मिले है उनमे से नन्दिशा का अभिलेख, आयागपट्ट, शतदल प्रदीपलेख विहार की मुद्रा (सील) विशेष महत्वपूर्ण है । आयागपट्ट अभिलेख के अनुसार भदन्तधर के शिष्य भिक्षु फगल ने घोषिताराम मे सभी बुद्धो की पूजा के लिए शिला स्थापित करायी थी (भयतस धरस अतेवासिस भिक्खुख फगलस, बुधावा से घोषितारामे सब बुधाना पुजाये शिला कारापिता)। घोषिताराम विहार चूँकि सभी साक्ष्यो के अनुसार कौशाम्बी मे ही था इसलिए आयागपट्ट पर उल्लिखित अभिलेख से कोशाम्बी के समीकरण के सन्दर्भ मे अब कोई विवाद नही रहा । यहॉ से मघ राजवश के महाराज भद्रमघ के कई अभिलेख भी मिले है ।

घोषिताराम से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्य यह इगित करते हैं कि छठवी शताब्दी ईसवी के प्रथम दशक मे यहॉ पर हूण आक्रमण हुआ । हूणो की लूट–पाट एव आगजनी का शिकार घोषिताराम बौद्ध विहार भी हुआ । घोषिताराम के उत्खनन से मिट्टी की दो मुहरे (सील) मिली है । इनमे से एक पर तोरमाण नाम प्रति–मुद्राकित (काउन्टर स्टक) है तथा दूसरी पर हूणराज उत्कीर्ण है । तोरमाण

का मध्य प्रदेश के सागर जिले मे स्थित एरण नामक स्थान से एक अभिलेख मिला है जिसकी तिथि 510 ईसवी निर्धारित की गयी है । इस आधार पर घोषिताराम पर आक्रमण का समय सन् 510 से 515 ईसवीं के बीच अनुमानित किया जा सकता है।

कौशाम्बी की रक्षा–प्राचीर कौशाम्बी मे तीसरा उत्खनित क्षेत्र पूर्वी प्रवेश–द्वार के पास स्थित है । यहॉ पर उत्खनन कार्य सन 1957–59 ईसवी के बीच मे कौशाम्बी की रक्षा–प्रणाली के इतिहास के अध्ययन तथा मूल रक्षा–प्राचीर (परकोटे) और बाद के परिवर्तन–परिवर्द्धन की प्रकृति एव प्राचीनता का पता लगाने के उद्देश्य से किया गया था । पूर्वी प्रवेश–द्वार के समीपवर्ती क्षेत्र मे हुए उत्खनन से रक्षा–प्राचीर के अतिरिक्त सास्कृतिक जमाव के सन्दर्भ मे भी नवीन साक्ष्य उपलब्ध हुए हैं । कौशाम्बी के तीन ओर एक रक्षा–प्राचीर (परकोटा) थी जिसकी ऊँचाई आस–पास के सममतल मैदान से 9 से 10 मीटर के बीच मे मिलती है । रक्षा–प्राचीर मे उत्तर–पश्चिम तथा उत्तर–पूर्व मे बने हुए बुर्जो (टावर्स) की ऊँचाई 21 35 मीटर तक है । परकोटे के तीन ओर गहरी खाई थी। परकोटे मे पूर्व, उत्तर तथा पश्चिम दिशाओ मे कुल मिलाकर ग्यारह द्वार थे जिनमे से पॉच मुख्य द्वार थे तथा छ गौण द्वार (सब्सीडियरी गेट्स) थे । उत्तर दिशा मे एक तथा पूर्व और पश्चिम दिशाओ मे दो–दो मुख्य द्वार थे । कौशाम्बी मे इस क्षेत्र मे जिन चार सस्कृतियो के साक्ष्य मिले है उनका काल–क्रम पुरातात्विक आधार पर निर्धारित किया गया है । इस काल–क्रम के अनुसार कौशाम्बी मे रक्षा–प्राचीर या किलेबन्दी का प्रारम्भ लगभग 1023 ई0पू0 मे हुआ । प्रथम खाई (मोट) तथा उसकी समकालिक सडक का निर्माण लगभग 885 ई0 पू0 मे, द्वितीय रक्षा–प्राचीर लगभग 535 ई0 पू0 मे और रक्षक कक्षो की व्यवस्था की शुरूआत 325 ई0 पू0 मे हुई थी। तृतीय रक्षा–प्राचीर 185 ई0 पू0 मे चतुर्थ 45 ई0 पू0 में निर्मित हुई थी । पॉचवी रक्षा–प्राचीर का निर्माण लगभग 165 ईसवी मे और विनाश लगभग 515 ईसवी मे हुआ था । तृतीय रक्षा–प्राचीर का निर्माण मित्र राजवश के शासन–काल में हुआ था और पाचवी रक्षा–प्राचीर का निर्माण मघ राजवश के शासनकाल मे हुआ था। इस सन्दर्भ मे यह उल्लेखनीय है कि कौशाम्बी की विभिन्न सस्कृतियो के

कालानुक्रम (क्रोनोलाजी) के सम्बन्ध मे अनेक पुराविदो ने तरह–तरह की शकाएँ उठायी है। इसी तरह रक्षा–प्राचीर के निर्माण तथा उनके काल–क्रम से भी असहमति व्यक्त की गई है ।

प्रथम और द्वितीय सास्कृतिक काल का विवरण पिछले अध्याय मे प्रसगवश दिया गया है। कौशाम्बी के उत्खनन कार्य के सचालक स्वर्गीय जी0 आर0 शर्मा के अनुसार लेख–रहित ढले हुए सिक्को का सर्वप्रथम प्रचलन नवी शताब्दी ई0 पू0 (885–815 ई0 पू0) मे हो गया था। आहत सिक्को का चलन उसके बाद मे हुआ परन्तु इन निष्कर्षों से अधिकाश विद्वान सहमत नही है । कौशाम्बी के लेख–रहित ढले हुए ताबे के सिक्को का समय कतिपय विद्वान तीसरी शताब्दी ई0 पू0 मानते है।

तृतीय सास्कृतिक काल– उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्परा से सम्बन्धित है। इससे आठ निर्माण–काल (9 से 16 तक) सम्बद्ध है। उत्तरी कृष्ण–मार्जित (ओपदार) मृदभाण्ड परम्परा इस पुरास्थल की वैभवपूर्ण स्थिति की सूचना देती है । इस सस्कृति का कालानुक्रम 605 ई0 पू0 के मध्य निर्धारित किया गया है ।

चतुर्थ सास्कृतिक काल मे सत्रहवे से लेकर पच्चीसवे निर्माण–काल (नौ) तक आते है। इस काल मे उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्परा का पूर्ण अभाव मिलता है। लाल रग की पात्र–परम्परा (रेड वेयर) इस काल की प्रमुख मृदभाण्ड परम्परा है। थाली, कटोरे, घडे कलश मटके कडाही, तसले तथा ढक्कन आदि प्रमुख पात्र–प्रकार है । इसका कालानुक्रम 45 ई0 पू0 से लेकर 85 ईसवी के बीच निर्धारित किया गया है ।

राजप्रसाद क्षेत्र कौशाम्बी का चतुर्थ उत्खनन यमुना नदी से लगे हुए टीले के दक्षिणी–पश्चिमी भाग मे सन् 1960 ईसवी मे सम्पन्न हुआ । इस उत्खनित क्षेत्र को 'राजप्रसाद क्षेत्र' के नाम से अभिहित किया गया है । यद्यपि इस बात का कोई अभिलेखिक साक्ष्य नही मिला है कि यहॉ पर राजपरिवार रहता रहा होगा लेकिन इसकी विशालता तथा निर्माण मे पत्थरो के प्रयोग को देखकर यह अनुमान लगाया

गया है कि इसका निर्माण किसी विशिष्ट व्यक्ति के रहने के लिए किया गया होगा और इस तरह इस के राजप्रसाद होने की सभावना व्यक्त की गई है ।

सम्पूर्ण राजप्रसाद क्षेत्र मे ऐसा कहा जाता है कि प्रस्तर के छोटे–छोटे टुकडे, प्लस्तर के अश तथा उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्परा और उसके साथ सम्बद्ध अन्य पात्र–परम्पराओ के पात्र–खण्ड बिखरे पडे थे । यहाँ पर दो छोटे किन्तु ऊँचे टीले स्थित थे जो 75 X 45 मीटर के क्षेत्र मे फैले हुए थे । प्रस्तर–निर्मित इस राजप्रसाद की चहारदीवारी के उत्तरी तथा दक्षिणी पार्श्व समानान्तर है किनतु पूर्वी तथा पश्चिमी दिशाओ की दीवाले वक्ररेखीय (कर्बिलिनियर) है। इस तरह इसका आकार वृत्तायतकार (बेरल शेप्ड) है। उत्तर–पूर्वी उत्तर–पश्चिमी तथा दक्षिण–पूर्वी पार्श्वों पर गोलाकार तीन बुर्ज (टावर्स) है। राजमहल के तीन ओर गहरी और 4 6 मीटर चौडी सूखी परिखा या खाई (ड्राई ड्रिच) थी जिसके साक्ष्य उत्तरी परकोटे की उत्तर दिशा मे सीमित क्षेत्र से मिले हैं ।

उत्खनन से दीवालो के जो साक्ष्य मिले है वे राजमहल की निर्माण–सम्बन्धी वास्तुकला के विकास मे चार अवस्थाओ का सकेत करते हैं जिनको दस उपकालो मे विभाजित किया गया है। प्रारम्भिक काल मे राजमहल की दीवाल के निर्माण मे अनगढ पत्थरो का उपयोग किया गया था। इसका समय आठवी से छठवी शताब्दी ई0 पू0 के बीच मे माना गया है। द्वितीय काल मे भली–भॉति गढे हुए 60 X 53 X 20 सेटीमीटर आकार के पत्थरो का उपयोग राजमहल के दरवाजो के निर्माण के लिए किया गया था। दीवालो की चिनाई मे प्रयुक्त बाहरी पत्थर गढे हुए थे किन्तु भीतरी भाग मे हर तरह के रोडे भर दिये गये थे। इसका कालक्रम छठवी शताब्दी ई0 पू0 से द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 के बीच मे निर्धारित किया गया है ।

तृतीय काल मे दीवालो का निर्माण ईटो से किया गया तथा दीवाल के अन्दर के भाग मे पत्थर के टुकडे जोडे गये थे । इसका समय द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 से प्रथम शताब्दी ईसवी के बीच मे माना गया है। चतुर्थ काल मे बडे पैमाने पर निर्माण कार्य हुआ। इस काल मे दीवालो को बनाने के लिए ईटो तथा पत्थरो का

मिला–जुला प्रयोग किया गया था। पाषाण–खण्डो के गढने की ओर कोई ध्यान नही दिया गया । बल्कि अनगढ पत्थरो का ही प्रयाग किया गया था। साबूत ईटो का अभाव मिलता है। टूटी–फूटी ईटो (ब्रिक–बैटस) का प्रयोग दीवाल के निर्माण मे मिलता है। निर्माण–सामग्री की कमजोरी को दूर करने के लिए मोटा प्लस्तर किया गया था। इस काल से मेहराब (आर्च) के प्रमाण मिले है। आमतौर पर यह समझा जाता था कि निर्माण की इस तकनीक का प्रयोग भारत मे अरबो के आगमन से प्रारम्भ हुआ और वह समय आठवी शताब्दी ईसवी (712 ईसवी) समझा जाता था लेकिन कौशाम्बी के राजमहल क्षेत्र के उत्खनन से उपलब्ध साक्ष्य यह इगित करते है कि प्रथम तथा द्वितीय शताब्दी ईसवी मे कुषाण काल मे भारत मे इस तरह के मेहराब बनने लगे थे । चतुर्थ काल का कालानुक्रम प्रथम शताब्दी के मध्य निर्धारित किया गया है। अनेक पुराविद् राजमहल के कालक्रम से सहमत नही है। उनके अनुसार राजमहल प्राचीन नही है (लाल 1979–80 88–95)। वे इसको मध्यकाल मे रखने के पक्ष मे है।

कौशाम्बी के उत्खनन से दोआब के निचले क्षेत्र मे मानव के आवास के साक्ष्य बारहवीं शताब्दी ई0 पू0 के सन्दर्भ मे मिलते हैं। यहॉ पर आबादी कम से कम छठवी शताब्दी ईसवी तक चलती रही। कौशाम्बी से रक्षा–प्राचीर के साक्ष्य मिले है जिस पर बने बुर्ज और कगूरे तत्कालीन वास्तुकला के वैशिष्ट्य से परिपूर्ण है। प्रस्तर तथा मिट्टी की मूर्तियॉ, सिक्के अभिलेख, मुहरे लोहे के बाणाग्र (ऐरो हेड्स) तथा अन्य लौह उपकरण एव मनके यहॉ से प्राप्त उल्लेखनीय पुरावशेष हैं। कौशाम्बी प्राचीन काल मे राजनीतिक तथा सास्कृतिक गतिविधियो का प्रमुख केन्द्र थी। उत्खनन से प्राप्त साक्ष्य साहित्यिक परम्परा की आशिक रूप से पुष्टि करते है।

श्रृगवेरपुर

श्रृगवेरपुर (अक्षाश 25^0 26 10 ' उ0, देशान्तर 81^0 54 30 ' पू0) नामक पुरास्थल इलाहाबाद जिले की सोराव तहसील मे इलाहाबाद–उन्नाव मार्ग पर उत्तर–पश्चिम दिशा मे लगभग 36 किलोमीटर की दूरी पर गगा के बाये तट पर

स्थित है। यहॉ पर लगभग 10 मीटर ऊँचा एक प्राचीन टीला है जिसके काफी बडे भाग को गगा नदी ने अपने प्रवाह मार्ग मे आत्मसात कर लिया है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार वनवास के लिए अयोध्या से प्रयाग की ओर जाते समय राम ने सीता और लक्ष्मण के साथ यहॉ पर एक रात व्यतीत किया था। दूसरे दिन निषाद राज ने उन्हे गगा पार कराया और वे भारद्वाज के आश्रम मे पहुँचे।

इस पुरास्थल का उत्खनन शिमला उच्च अध्ययन सस्थान और भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के सयुक्त तत्वाधान मे बी0 बी0 लाल और के0 एन0 दीक्षित के निर्देशन मे दिसम्बर सन 1977 से 1982 तक हुआ।

श्रृगवेरपुर के उत्खनन के फलस्वरूप जो पुरावशेष तथा पुरानिधियॉ मिली है उनको सात विभिन्न सास्कृतिक कालो मे विभाजित किया गया है । यहॉ के अधिकाश सास्कृतिक कालो के बीच मे सातत्य देखने को मिलता है।

श्रृगवेरपुर का तृतीय सास्कृतिक काल (700–250 ई0 पू0) उत्तरी काली परिमार्जित मृदभाण्ड परम्परा से सम्बन्धित है। द्वितीय एव तृतीय कालो के मध्य अन्तराल के नही अपितु सातत्य के साक्ष्य मिले है ।

इस काल के पुरावशेषो मे मृदभाण्डो के अतिरिक्त ताबे के तीन बडे कलश एक कछुल नारी मृण्मूर्तियॉ माणिक्य मिट्टी स्वर्ण के मनके पशु मूर्तियॉ ताबे और लोहे के उपकरण तथा आहत एव लेख–रहित ढले हुए सिक्के विशेष उल्लेखनीय हे। भवन निर्माण मे इस काल के अन्तिम चरण मे पकी हुई ईटो का उपयोग होने लगा था। स्वच्छता तथा सफाई के लिए लोग निजी घरो मे मृत्तिका वलय कूपो तथा सोख्ता गडढो का उपयोग करते थे।

पुरातात्विक आधार पर 600 ई0 पू0 से 300 ई0 पू0 के मध्य उत्तरी काली चमकीली पात्र–परम्परा का कालक्रम निर्धारित किया गया है । श्रृगवेरपुर के उत्तरी काली चमकीली पात्र परम्परा के स्तर से एकत्र किये गये एक नमूने की ऊष्मा दीप्ति तिथि 700 ई0 पू0 निर्धारित की गई है। यह नमूना मध्यवर्ती स्तर से एकत्र किया गया था। इसके आधार पर तृतीय काल के प्रारम्भ की तिथि 700 ई0 पू0 निर्धारित की गयी है। यह उल्लेखनीय है कि भारत के विभिन्न पुरास्थलो के सन्दर्भ

मे उष्मा दीप्ति तिथियो की सख्या बहुत अधिक नही है। अन्य देशो के सन्दर्भ मे भी अभी तक तिथि निर्धारण की यह प्रणाली प्रयोग के स्तर पर ही है । अत इस तिथि पर निश्चयता की मुहर नही लगी है। लेकिन उल्लेखनीय है कि अब कुछ स्थलो से इतनी प्राचीन कार्बन तिथियॉ भी मिल रहीं हैं।

चतुर्थ काल (250 ई0 पू0 – 200 ई0) को दो उपकालो मे विभाजित किया गया है। लाल रग के मिट्टी के बर्तन, शुग कालीन मृण्मूर्तियॉ तथा अयोध्या के शासको के सिक्के मिले है। श्रृगवेरपुर के मुख्य टीले के उत्तर–पूर्व मे पकी ईटो से निर्मित आयताकार तालाब के साक्ष्य मिले है। यह तालाब उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग 200 मीटर लम्बा है। उत्तर मे जल के लिए प्रवेश–द्वार और दक्षिण मे निकास–द्वार बना हुआ था। यह तालाब अपने किस्म का अद्वितीय उदाहरण है जिसमे नगर निवासियो के लिए पेयजल को साफ करने के लिए बहुत सुन्दर व्यवस्था थी। कुषाण काल मे यहॉ के भवन पकी हुई ईटो के बनाये जाते थे। कुल मिलाकर इस सास्कृतिक काल मे आर्थिक समृद्धि का सकेत मिलता है।

पचम काल (600–1300 ई0) का समय प्राप्त पुरावशेषो के आधार पर छठवी शताब्दी से तेरहवी शताब्दी ईसवी के बीच मे निर्धारित किया गया है। इस काल के एक मृदभाण्ड मे कतिपय आभूषण और गाहडवाल राजवश के शासक गोविन्द चन्द्र (1114–1154 ई0) के द्वारा चलाये गये चॉदी के तेरह सिक्के मिले है। श्रृगवेरपुर का पुरास्थल तेरहवी शताब्दी ईसवी के पश्चात् लगभग चार सौ वर्षो तक वीरान रहा। यहॉ पर अन्तिम बार सत्रहवी–अट्ठारहवी शताब्दी ईसवी मे पुन लोग आकर बसे। इस बात की पुष्टि यहॉ से प्राप्त पुरावशेषो से होती है।

प्रथम शताब्दी ईसवी के कुषाण कालीन पक्के तालाब को श्रृगवेरपुर के उत्खनन की विशिष्ट उपलब्धि माना जा सकता है ।

झूँसी

झूँसी की (अक्षाश 25^0 26′ 10″ उ0, देशान्तर 81^0 54 30″ पू0) पहचान प्रतिष्ठानपुर से की गई है । इस स्थल की भौगोलिक स्थिति, परिवेश तथा पुरातात्विक अनुसधानो के विषय मे पूर्ववर्ती अध्यायों मे चर्चा की गयी है । यहॉ के

उत्खनन से एन0 बी0 पी0 डब्लू0 सस्कृति का सम्बन्ध तृतीय सस्कृति काल से है । समग्र रूप से दृष्टिपात करने पर इस सस्कृति का जमाव 5 84 मीटर मिला है जिसमे इस सस्कृति से सम्बन्धित मृदभाण्ड जो विशिष्ट पात्र परम्परा का प्रतिनिधित्व करते है प्राप्त हुए है । इनमे एन0 बी0 पी0 डब्लू0 पात्र परम्परा कृष्ण लेपित पात्र परम्परा लाल रग के बर्तन और अकस्मिक रूप कृष्ण लोहित पात्र परम्परा के बर्तन मिलते है । अधिकाश बर्तन चाक निर्मित है एव चित्रण अभिप्राय इनके ऊपर मिलता है । झोपडी आवासीय उपयोग के लिए मिलती है । फर्श एव पकी हुई ईटो का प्रयोग इसके मध्य चरण से उद्घाटित हुए है । वलय कूप इस काल की महत्वपूर्ण विशेषता है । ताम्रउपकरण हड्डी के उपकरण बाणाग्र उपरत्नो और मिट्टी पर बने मनके विशेष रूप से सास्कृतिक काल मे प्राप्त होते है । पशुओ की हड्डियॉ प्रभूत मात्रा मे प्राप्त हुई है जिसमे भेड, बकरी सुअर, भैंसे इत्यादि सम्मिलित है । इस धरातल के मध्य चरण से एक जला हुआ 10–20 सेमी मोटा जमाव प्राप्त हुआ है जिससे भयकर अग्निकाड का साक्ष्य प्रस्तुत होता है । अनाज के जले हुए दाने प्रभूत मात्रा प्राप्त हुए हैं । अनाजो मे गेहूँ, जौ, सरसो, धान इत्यादि उल्लेखनीय है । उपलब्ध साक्ष्यो से यह प्रमाणित होता है कि इस सस्कृति के लोग विभिन्न प्रजाति के पशुपालते थे । और विभिन्न प्रकार की फसलो की खेती करते थे खरीफ और रबी दोनो प्रकार की फसले उगायी जाती थी । पकी हुई ईटो का प्रयोग इस सस्कृति के मध्य चरण से प्राप्त होने लगता है । अन्य पुरासामग्रियो मे आहत और लेखरहित ढली हुई ताम्र मुद्राए कुछ प्रतीको से युक्त मिट्टी की मुहरे और मुहरो की छाप पशु मृण्मूर्तियो लोहे के उपकरण पुच्छल युक्त हड्डी के बाणाग्र उपरत्नो के मनके और कटने के निशान से युक्त पशुओ की हड्डियॉ सम्मिलित हैं । झूँसी का उत्खनन एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति के समय मे पकी ईटो से निर्मित सरचनाओ की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है (मिश्रा एव अन्य 1997, पाल और अन्य 2002, वर्मा 2002)।

भीटा

इलाहाबाद से लगभग 20 किलोमीटर दक्षिण मे यमुना नदी के दाहिने तट पर भीटा नामक स्थल पर कई प्राचीन टीले विद्यमान है । इस स्थल का 1909–10 और 1911–12 मे सर जान मार्शल ने उत्खनन किया था और इसकी रिपोर्ट भी प्रकाशित की थी (मार्शल 1911 127) । लेकिन उस समय तक भारतीय पुरातत्व मे उत्खनन की विधि विकसित नही थी और स्तरीकरण को उतना महत्व नही दिया जाता था । इसलिए जान मार्शल ने इस स्थल की पहचान प्राचीन सैन्य शिविर और व्यापारिक नगर के रूप मे की थी । इस स्थल के उत्खनन से प्राक मौर्य काल से लेकर गुप्त युग तक के पॉच सास्कृतिक कालो के अवशेष प्राप्त हुए थे । उपलब्ध पुरातात्विक सामग्रियो मे एन0 बी0 पी0 वेयर के बर्तन आहत और ढले हुए सिक्के आहत ढले हुए जनपदो और कुषाणो की मुद्राए, मृण्मूर्तियॉ तथा कुषाण एव गुप्त काल की धार्मिक एव व्यापारिक मुहरे उपलब्ध हुई थी (शर्मा 1953 186)।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण लखनऊ सर्किल द्वारा इस स्थल का पुन उत्खनन प्रारम्भ हुआ है जिससे इस स्थल के स्तरीकरण और सास्कृतिक विकास पर प्रकाश पडने की सम्भावना है ।

श्रावस्ती

लखनऊ से 160 किलोमीटर उत्तर–पूर्व दिशा मे एक छोटा सा गॉव है, जो आधुनिक बौद्ध तीर्थ स्थलो मे बोधगया और सारनाथ के उपरान्त तीसरा महत्वपूर्ण केन्द्र है। इस स्थल को सहेत–महेत नाम से जाना जाता है । गोडा और बहराइच जनपदो की सीमा पर स्थित इस समय इस नाम से एक नये जनपद का निर्माण भी हुआ है । इस स्थल का उत्खनन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा 1959 मे डॉ0 के0 के0 सिन्हा ने किया था जिसकी रिर्पोट बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा 1967 मे प्रकाशित की गई (सिन्हा 1967)। उत्खनन के परिणाम स्वरूप तीन सास्कृतिक काल के प्रमाण उपलब्ध हुए है। प्रथम सास्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति से सम्बन्धित है । इस धरातल से कुछ पी0जी0डब्लू0 (चित्रित धूसर पात्र–परम्परा) के पात्र खण्ड प्राप्त हुए हैं, लेकिन ये

हस्तिनापुर के पी0 जी0 डब्लू0 से भिन्न है । इस सास्कृतिक काल को 600 से 300 ई0 पू0 के मध्य रखा गया है । पात्र–परम्पराओ के अतिरिक्त शीशे और उपरत्नो के मनके पशुओ की मृण्मूर्तियॉ टेराकोटा डिस्क आदि उपलब्ध हुए है । इस धरातल से न तो कोई सिक्के मिले है न ही ईटो के भवन और सरचनाए ही । उत्खनन कर्त्ता के अनुसार यह अनुपलब्धता सीमित उत्खनन क्षेत्र के कारण हो सकती है।

द्वितीय सास्कृतिक काल के प्रारम्भ और प्रथम सास्कृतिक काल के अन्त मे समय का कोई स्पष्ट अन्तराल नही दिखाई पडता । लेकिन दोनो सास्कृतियो के भौतिक अवशेषो मे पर्याप्त परिवर्तन दिखायी पडता है । सभवत द्वितीय सास्कृतिक काल के लोगो की आवश्यकताए बढ गई थी और उनका वाह्य केन्द्रो से सम्पर्क बढ गया था। इस काल की पात्र–परम्परा मुख्यत दैनिक उपयोग की है । इस चरण से प्राप्त हुई स्थानीय स्तर पर बने उपरत्नो के मनके शीशे के मनके उपलब्ध हुए है। इसी चरण मे नगर को मिट्टी की रक्षा प्राचीर से सुरक्षित किया गया था । इसके ऊपर पकी मिट्टी की ईटे लगाई गई थी ।

इस रक्षा प्राचीर का निर्माण कौटिल्य के अर्थशास्त्र मे वर्णित रक्षा प्राचीर के अनुरूप दिखाई पडता है । घरो का निर्माण पकी ईटो से किया गया है । मुहरे, सिक्के (लेख रहित ढली हुई मुद्राए आहत मुद्राए) और अयोध्या की स्थानीय मुद्राए उपलब्ध हुई है। ईसा की प्रारम्भिक शताब्दी मे इस चरण का अन्त हो जाता है और इसके बाद सिर्फ धार्मिक केन्द्र के रूप मे ही इसकी पहचान/मान्यता सुरक्षित दिखायी पडती थी ।

तृतीय सास्कृतिक काल के प्रमाण सीमित क्षेत्र मे उपलब्ध हुए हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि नगर के रूप मे यह स्थल वीरान हो गया था लेकिन प्राचीन अवशेषो के ऊपर कुछ क्षेत्रो मे लोग रहते थे । तृतीय सास्कृतिक काल को चतुर्थ पॉचवी शताब्दी ईसवी मे रखा गया है । फाह्यान जब पॉचवी शताब्दी ईसवी के प्रारम्भ मे यहॉ आया तब यह स्थल वीरान एव आवास रहित था ।

नन्दिग्राम

अयोध्या से 16 किलोमीटर दक्षिण मे नन्दिग्राम और उसके समीप के क्षेत्रो मे कुछ उत्खनन किये गये थे (लाल 1989 4–5)। तमसा नदी के तट पर स्थित नन्दिग्राम वाल्मीकि रामायण के अनुसार वह स्थान था जहॉ से भरत ने राम के वनवास के समय शासन किया था । यहॉ के उत्खनन से अयोध्या की ही तरह की प्राचीनता का प्रमाण प्रस्तुत करने वाली पुरासामग्रियॉ उपलब्ध हुई है । यद्यपि आजकल नन्दिग्राम तमसा के उत्तरी तट पर स्थित है लेकिन इसके दक्षिणी तट पर स्थित राहेट टीले के उत्खनन से महत्वपूर्ण पुरावशेष उपलब्ध हुए है (वर्मा 2000) ।

अयोध्या

अयोध्या मे प्राचीन ध्वसावशेष लगभग 4–5 किलोमीटर की परिधि मे फैले हुए है जो समीपवर्ती धरातल से लगभग 10 मीटर ऊॅचा है । इलाहाबाद विश्वविद्यालय के श्री विजय शकर ने 1961–62 मे अयोध्या के कई टीलो का सर्वेक्षण किया था और यहॉ की पुरातात्विक सम्पन्नता का सकेत दिया था । उन्हे सरयू नदी के तट पर 7 60 मीटर मोटे नदी के अनुभाग से एन0 बी0 पी0 पात्र–परम्परा के बर्तन उपलब्ध हुए है । रिंगवेल और सोकेज जार भी यहॉ पर विद्यमान थे (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1961–62* 53)। इस स्थल की प्राचीन्ता तथा सास्कृतिक अनुक्रम के निर्धारण के लिए 1969–70 मे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के ए0 के0 नारायण ने टी0 एन0 राय और पुरूषोत्तम सिह की सहायता से उत्खनन किया था । सरयू नदी द्वारा काटे गये इसके प्राचीन अभुभागो मे दीर्घकालीन आवास के प्रमाण मिलते है जो अयोध्या के प्राचीन स्थल के उत्तर भाग मे आवासीय प्रमाण प्रस्तुत करते है । बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरातात्विक दल ने यहॉ 3 स्थलो पर उत्खनन कार्य किया था– जैन घाट के समीप लक्ष्मण टेकरी और नल टीला (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1969–70* 40–41)। प्रथम दो स्थलो के उत्खनन मे तीन सास्कृतिक कालो का अनुक्रम प्राप्त हुआ था । यहॉ प्रथम और द्वितीय काल मे सात्यता थी और तृतीय काल के पहले समय का एक अन्तराल था । तीसरे स्थल, जो अपेक्षाकृत निचले धरातल पर है के उत्खनन मे केवल प्रथम सास्कृतिक काल के प्रमाण उपलब्ध हुए थे। प्रथम

सास्कृतिक काल मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) मोटे ग्रे वेयर और इसकी समकालीन रेड वेयर के पात्र–खण्ड प्राप्त हुए हैं । इस काल की अन्य पुरासामग्रियो मे पकी हुई मिट्टी का चक्र गोलियाँ पहिये हड्डी के बने हुए बाणाग्र तथा ताबे, क्रिस्टल शीशे और मिट्टी को बने हुए मनके उल्लेखनीय है । इस सास्कृतिक काल के परवर्ती धरातल से भूरे रग की मानव–मृण्मूर्तियाँ, कई पशु मृण्मूर्तियाँ और दो अयोध्या के सिक्के उपलब्ध हुए है । इस उत्खनन मे कुछ लौह उपकरण भी प्राप्त हुए है । उल्लेखनीय है कि अयोध्या नगर की कुछ ताम्र मुद्राए जिन पर प्रथम शताब्दी ई0 पू0 की ब्राह्मी लिपि मे अजुघे' लिखा है 1970–71 मे भी मिली थी (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1970–71* 63)। इस पुरातात्विक दल ने कुबेर टीले का भी गहन सर्वेक्षण किया था जिसकी पहचान–कनिघम ने बौद्ध स्तूप से की थी । यहाँ 39 X 23 X 6 सेटीमीटर के आकार के ईटो से निर्मित प्राचीन स्मारक के कई स्तर प्राप्त हुए थे ।

'आर्कियोलाजी ऑफ दी रामायण साइटस प्रोजेक्ट के अन्तर्गत सेन्टर आफ एडवान्स्ड स्टडी शिमला के बी0 बी0 लाल ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के के0 वी0 सौन्दरराजन तथा के0 एन0 दीक्षित के साथ सम्मिलित रूप से रामकथा से सम्बन्धित अयोध्या के 14 स्थलो का 1975–76, 1976–77 तथा 1979–80 ई0 मे उत्खनन किया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1976–77* 52–53)।

अयोध्या नगर के प्राचीन क्षेत्रो के दो प्रमुख स्थलो का उत्खनन कार्य 1976–77 मे किया था – पहला राम जन्म भूमि टीला का और दूसरा हनुमानगढी के पश्चिम मे स्थित खुले हुए क्षेत्र मे (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1979–80.* 76–77)। इसके अतिरिक्त सीता की रसोई–स्थल पर भी कुछ उत्खनन हुआ । उत्खनन मे स्थल की प्राचीनता निर्धारण मे कतिपय महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश मे आये। यहाँ पर सर्वप्रथम मानव आवासीय जमाव एन0बी0पी0 पात्र–परम्परा एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति का था जिसमे कई रगो के साथ धुधले काले रेग से चित्रित रेखीय चित्रो से युक्त धूसर रग के पात्र खण्ड भी उपलब्ध हुए है । अयोध्या मे बी0 बी0 लाल द्वारा किये गये उत्खनन मे निचले धरातल से पी0 जी0 डब्लू पात्र–परम्परा के जो पात्र–खण्ड उपलब्ध हुए हैं

उनका फैब्रिक (अनुभाग) मोटा है और उन पर धुँधले रेखीय चित्र बने हैं । ऐसे पात्र खण्ड कौशाम्बी के उत्खनन से भी उपलब्ध हुए है क्योकि ये पात्र–खण्ड विशिष्ट (टिपिकल) चित्रित धूसर पात्र खण्डो से भिन्न है । इसलिए इन्हे पुरातत्वविद् चित्रित धूसर पात्र परम्परा की सस्कृति के स्थलो के अन्तर्गत नही रखते। (अग्रवाल डी0 पी0 1984)। उल्लेखनीय है कि श्रावस्ती, पिपरहवा, कौशाम्बी आदि पुरास्थलो के नमूने चित्रित धूसर पात्र–परम्परा की सस्कृति के परवर्ती चरण का प्रतिनिधित्व करते है । मथुरा श्रावस्ती कौशाम्बी आदि स्थलो से प्राप्त तिथियो के आलोक मे उत्खनन कर्ताओ ने जन्मभूमि के इस आवासीय जमाव की तिथि सातवी शताब्दी ई0 पू0 निर्धारित की है । यह टीला तृतीय शताब्दी ई0 तक आबाद रहा जैसा कि कई निर्माणात्मक चरणो से प्रतीत होता है । प्रारम्भिक चरणो मे लकडी घास–फूस और मिट्टी के घरो का निर्माण किया जाता था लेकिन बाद मे पकी ईटो का प्रयोग किया जाने लगा । जन्म भूमि क्षेत्र के उत्खनन मे ईटो से निर्मित एक विशाल दीवाल के प्रमाण उपलब्ध हुए हैं जिसकी पहचान रक्षा–प्राचीर से की जा सकती है । इस विशाल दीवाल के ठीक नीचे कच्ची मिट्टी की ईटो से निर्मित एक सरचना उपलब्ध हुई है । इस चरण के ऊपरी धरातल मे जिसे सभवत तृतीय शताब्दी ई0 पू0 से प्रथम शताब्दी ई0 पू0 के मध्य के रक्षा–प्राचीर के परवर्ती चरण से सम्बन्धित किया जा सकता है । पकी मिट्टी के रिंग वेल प्राप्त हुए है । ऐसा प्रतीत होता है कि रक्षा–प्राचीर एक गहरी खाई से युक्त थी जो आशिक रूप से प्राकृतिक मिट्टी मे खोदी गई थी । इसी तरह हनुमानगढी के पास के उत्खनन मे भी एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) और परवर्ती कालो की सरचनाये ढॉचे कई प्रकार के रिंग वेल जिसमे परवर्ती एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) काल मे मिलने वाले वेज आकार के ईटो से निर्मित कुए भी सम्मिलित है प्राप्त हुए है । अयोध्या के प्राचीन टीलो के अधिकाश भाग सभवत नदी द्वारा बहा दिये गये हैं । एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) जामव के ऊपर यहॉ गहरे लाल रग का जला हुआ स्तर है । इस प्रमाण के आधार पर शुग की द्वितीय राजधानी अयोध्या मे पतजलि द्वारा उल्लिखित इण्डो–यूनानी आक्रमण का सकेत मिलता है । इसी अग्निकाड के कारण अयोध्या

मे एक युग का अन्त हुआ और एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति नष्ट हुई (शर्मा 1980)।

इस उत्खनन मे बहुत सी महत्वपूर्ण पुरासामग्रियॉ उपलब्ध हुई थी । इसमे लगभग आधा दर्जन मुहरे 70 सिक्के और एक सौ से अधिक मृण्मूर्तियॉ उल्लेखनीय है । इसमे राजा वासुदेव की मिट्टी की मुहर विशेष उल्लेखनीय है । इस राजा के द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 के अयोध्या के सिक्के भी उपलब्ध हुए है । इसी काल से सम्बन्धित मूलदेव और एक भूरे रग की कायोत्सर्ग मुद्रा मे मानव मृण्मूर्ति (जो जैन केवलिन की प्रतीत होती है) उपलब्ध हुई है । चतुर्थ शताब्दी ई0 पू0 के धरातल से उपलब्ध यह मृण्मूर्ति सभवत सम्पूर्ण भारतवर्ष मे अपने प्रकार की सबसे प्राचीन नमूना है । पकी मिट्टी के बनी हुई बडे आकार की धार्मिक मृण्मूर्तियॉ प्रथम शताब्दी ई0 के धरातल से हनुमानगढी से अधिक सख्या मे उपलब्ध हुई है जो अहिच्छत्र के उत्खनन से प्राप्त बी0 एस0 अग्रवाल द्वारा वर्णित तथाकथित विदेशी प्रकार की मृण्मूर्तियो की तरह है ।

प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की महत्वपूर्ण खोजो मे प्रथम द्वितीय शताब्दी ईसवी के धरातल से उपलब्ध राउलेटेड वेयर के पात्र–खण्डो का उल्लेख किया जा सकता है जो ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे अयोध्या मे बडे पैमाने पर व्यापार एव वाणिज्य का सकेत करते है । यह व्यापार जलमार्ग से होता था । सरयू नदी का गगा से छपरा मे सगम होता है । गगा नदी के मार्ग से अध्योध्या का सम्बन्ध पूर्वी भारत के ताम्रलिप्ति जैसे नगरो से था (देश पाण्डे 1969) । हाल के समय तक सरयू और गगा नदियो द्वारा बडी आकार की नावो से व्यापार होता था । राउलेटेड वेयर की खोज से देश के अर्न्तवर्ती भागो से व्यापार एव वाणिज्य का प्रमाण उपलब्ध हुआ है ।

इस उत्खनन मे यहॉ गुप्तकाल के आवासीय जमाव प्राप्त हुए हैं । प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल के जमावो के बाद यहॉ के आवासीय जमाव मे एक अन्तराल दिखाई पडता है । ग्यारहवी शताब्दी ई0 के आस–पास यह स्थल फिर से

आबाद हुआ । ईटो और चूने से निर्मित मध्यकाल की एक फर्श इस धरातल से प्राप्त हुई है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1976–77* 52–53)।

1979–80 ई0 मे अयोध्या मे आर्कियोलाजी ऑफ दी रामायण साइटस प्रोजेक्ट के अन्तर्गत सेन्टर आफ एडवान्स स्टडी शिमला के प्रो0 बी0 बी0 लाल एव पुरातत्व सर्वेक्षण के के0 एन0 दीक्षित के सयुक्त तत्वाधान मे उत्खनन कार्य पुन प्रारम्भ किया गया । इस वर्ष के उत्खनन का मुख्य उद्देश्य इस तथ्य का पता लगाना था कि क्या एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) काल के पहले का कोई आवासीय जमाव अयोध्या मे है या नही ?

इस उत्खनन से यह पता चला कि यहॉ का प्राचीनतम काल सातवी शताब्दी ई0 पू0 के प्रारम्भ मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) के प्रथम चरण से सम्बन्धित किया जा सकता है और यह क्षेत्र पी0जी0डब्लू0 के विस्तार क्षेत्र के बाहर था । प्रारम्भिक चरण मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) पात्र–परम्परा के बर्तन पतले अनुभाग वाले अच्छी तरक पके हुए चमकदार पालिश से युक्त और काले ब्लैक स्टील ग्रे इण्डिगो सिल्वरी, सुनहरे आदि विभिन्न रगो के है । कुछ बर्तनो के प्रकार ऐसे है जो इसी चरण मे मिलते है। एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) के साथ मिलने वाली पात्र–परम्परा के प्रकारो मे प्रथम चरण से मध्यवर्ती और परवर्ती चरणो मे परिवर्तन दिखायी पडता है । मृण्मूर्तियो मे विकास के चिन्ह परिलक्षित होते हैं । ये अधिक सख्या मे उपलब्ध हुए है । उल्लेखनीय अन्य पुरासामग्रियो मे जैस्पर अगेट, चल्सिडनी के बने हुए और लगभग सभी धरातलो से मिलने वाले विभिन्न प्रकार के वाट अथवा बेलनाकार टुकडे और राक क्रिस्टल और दूसरे उपरत्नो वाले पत्थर पर पक्षियो और पशुओ के आकार मे बने हुए लटकनो का उल्लेख किया जा सकता है। एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) काल मे ही पकी ईटो के मकानो से युक्त नगर नियोजन, पकी मिट्टी के रिंग वेल आदि उपलब्ध हुए हैं लेकिन ये इस सस्कृति के प्रथम चरण से सम्बन्धित नही है ।

लगभग द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) काल के अन्त के बाद अयोध्या लगातार शुग कुषाण और गुप्त युग से मध्यकाल तक आबाद रहा । शुग काल की पकी ईटो की बनी हुई एक दीवल प्रकाश मे आयी है । इसी प्रकार गुप्त कालीन एक मकान के प्रमाण भी उपलब्ध हुए है । इस स्थल से उपलब्ध गुप्तकालीन मिट्टी के बर्तन श्रृगवेरपुर और भरद्वाज आश्रम से उपलब्ध बर्तनो के सदृश है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1979–80 76–77*)।

गनवरिया/पिपरहवा

बस्ती जनपद मे स्थित गनवरिया और पिपरहवा स्थलो का उत्खनन 1970–71 से 1976–77 तक भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के के0 एम0 श्रीवास्तव ने किया था (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1970–71 से 1976–77*)। पिपरहवा जहॉ एक बडा बौद्ध तीर्थ स्थल है के उत्खनन से 'कपिलवस्त' से अकित मुहरे उपलब्ध हुई है जिसके आधार पर इसकी पहचान शाक्य राजधानी कपिलवस्तु के रूप मे की गयी है । लगभग सात मीटर मोटे यहॉ के आवासीय जमाव को चार सास्कृतिक कालो मे विभाजित किया गया है–प्रथम सास्कृतिक काल जिसे आठवी शताब्दी ई0 पू0 से छठी शताब्दी ई0 पू0 के बीच रखा गया है से कुछ धूसर पात्र–परम्परा (ग्रे वेयर), कृष्ण लेपित पात्र–परम्परा (ब्लैक स्लिप्ड वेयर) और लाल पात्र–परम्परा (रेड वेयर) के पात्र प्राप्त हुए हैं । इस काल के आवासो का निर्माण मिट्टी से किया गया है । उत्खनन मे मिट्टी शीशे और उपरत्नो के मनके तथा कुछ शीशे की चूडियॉ भी प्राप्त हुई थी । कोई अन्य पाषाण उपकरण नही मिला था, लेकिन लोहे और ताबे की सामग्रियॉ प्राप्त हुई थीं । पहली बार यहॉ से लोहे का फाल प्राप्त हुआ। द्वितीय सास्कृतिक काल जिसे छठी शताब्दी ई0 पू0 से द्वितीय शताब्दी ई0 पू0 के मध्य रखा गया है, से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के प्रमाण मिले हैं । बडे पैमाने पर सरचनात्मक क्रिया कलापो के प्रमाण उपलब्ध होते है । इस काल के परवर्ती चरणो से कई कमरो और बरामदो से युक्त बडे और छोटे घर प्राप्त हुए हैं । पशु और मानव मृण्मूर्तियो के अतिरिक्त मिट्टी के मनके, चूडियॉ, थपुआ, गाडी का पहिया और खिलौना गाडी

आदि प्राप्त हुए है । उपरत्नो और शीशे के मनके इस चरण से भी प्राप्त होते हैं । इसके परवर्ती चरण से सिक्के भी उपलब्ध हुए है । तृतीय सास्कृतिक काल से शुग कालीन और चतुर्थ सास्कृतिक काल से कुषाण युग के अवशेष प्राप्त हुए है (श्रीवास्तव 1986)।

लखनेश्वरडीह

उत्तर–प्रदेश के बलिया जनपद मे स्थित इस (अक्षाश देशान्तर) स्थल का सीमित क्षेत्र मे एम0 एम0 नागर द्वारा 1956–57 मे उत्खनन किया गया था । जिससे पत्थर और पकी मिट्टी की सामग्रियॉ तथा एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) के पात्र खण्ड प्रतिवेदित किये गये है । क्योकि प्रकाशित विवरणो मे अधिक जानकारी उपलब्ध नही है, इसलिए इस स्थल को लोह काल के किस चरण से सम्बद्ध किया जाये यह निश्चित नही है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1956–57* 29)।

सूसीपार

बलिया जनपद मे स्थित सूसीपार स्थल का भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के बी0 आर0 मणि ने अभी हाल मे पुरातात्विक अन्वेषण प्रारम्भ किया । यहॉ से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) और पूर्व एन0बी0पी0डब्लू (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) के पात्र–खण्ड प्राप्त हुए हैं । विस्तृत रिपोर्ट के प्रकाशन के अभाव मे सम्पूर्ण जानकारी दे पाना सभव नही है ।

बक्सर

चरितर वन के नाम से स्थानीय रूप मे विख्यात बक्सर (अक्षाश 25^0 35 उ0 देशान्तर 84^0 1 पू0) बिहार के शाहाबाद जनपद मे स्थित है । इस स्थल का उत्खनन 1963–64 और 65–66 (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1963–64* 8 *इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1965–66* 11) मे लाला आदित्य नारायण ने बी0 पी0 सिन्हा के निर्देशन मे किया था । यहॉ के प्रथम सास्कृति काल से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) ब्लैक–एण्ड–रेड वेयर, रेड वेयर, लौह उपकरण, हड्डी के बाणाग्र, सुरमा लगाने की सलाई, आहत सिक्के, नारी

और पशु मृण्मूर्तियॉ तथा उपरत्नो पर बने मनके प्राप्त हुए है । अधिकाश मृण्मूर्तियॉ आदिम शैली मे प्राप्त होती है। द्वितीय सास्कृतिक काल मे ईसा की प्रारम्भिक शताब्दी से सम्बन्धित पुरासामग्रियॉ उपलब्ध हुई है जिनमे कुषाण शैली मे निर्मित मृण्मूर्तियॉ मिट्टी के बर्तन सम्मिलित है। कई, मुहरे मनके लोहे के उपकरण और एक बडी दीवाल भी प्राप्त हुई थी। द्वितीय सास्कृतिक काल के उपरान्त यह स्थल काफी समय तक वीरान रहा। मध्य युग मे यहॉ पुन अधिवास के प्रमाण तृतीय सास्कृतिक काल से मिलते है जिनमे जहॉगीर और शाहजहॉ के कुछ चॉदी के सिक्के और काचलित पात्र–परम्परा के बर्तन सम्मिलित हैं ।

उपलब्ध विवरणो से स्पष्ट है कि यह स्थल परवर्ती एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) चरण से सम्बन्धित है लेकिन 1963–64 के उत्खननो (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1963–68*) से कुछ प्राचीन धरातल का भी सकेत मिलता है ।

पाटलिपुत्र

प्राचीन पाटलिपुत्र पटना (अक्षाश 25^0 37 उ0 देशान्तर 85^0 10′ पूर्व) की वास्तविक पहचान के सम्बन्ध मे पटना के कई स्थलो का उत्खनन किया गया । अलेक्जेण्डर कनिघम ने 1880 के आस–पास यहॉ के कुछ टीलो पर उत्खनन किया लेकिन इससे कुछ खास उपलब्धि नही हुई (वाडेल 1892 1903, अल्टेकर और मिश्र 1959) । वाडेल ने बुलन्दी बाग छोटी पहाडी तापी मण्डी और कुम्रहार के उत्तर पूर्व मे महराजकुण्ड तथा रामपुर बहादुरपुर और पृथ्वीपुर मे उत्खनन किये। कुछ स्थलो पर उन्हे लकडी की शहतीरो और लकडी की अन्य सामग्रियॉ उपलब्ध हुई थी । तिथिक्रम की दृष्टि से महत्वपूर्ण एक अशोक स्तम्भ का टुकडा भी उपलब्ध हुआ था । पी0 सी0 मुखर्जी (मुखर्जी 1898) ने लहानीपुर मे किये गये छोटे उत्खनन से आहत सिक्के और चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के सिक्के प्राप्त किये। 1912–13 मे बी0 बी0 स्पूनर (आर्कियोलजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिर्पोट 1912–13 53) ने बुलन्दीबाग और कुम्रहार का उत्खनन किया । बुलन्दीबाग के उत्खनन मे लकडी की शहतारे, लेखरहित और ढली हुई मुद्राए, मानव मृण्मूर्तियॉ

और एक रथ का पहिया प्राप्त हुआ। कुम्रहार मे मौर्य युगीन स्तम्भ युक्त हाल कुषाण और गुप्त कालीन आहत सिक्के प्राप्त हुए हैं । 1926–27 मे बुलन्दीबाग का पुन उत्खनन किया गया था जिसमे लकडी और ईटो के अवशेष प्राप्त हुए लेकिन इन उत्खननो से मौर्य युग के पहले के कोई भी अवशेष उपलब्ध नहीं हुए। अत 1955–56 मे (सिन्हा और नारायन 1955–56) के0 पी0 जायसवाल शोध सस्थान की ओर से अनन्त सदाशिव अल्तेकर के नेतृत्व मे बी0 के0 मिश्र ने उत्खनन कार्य प्रारम्भ किया। उत्खनन से प्राप्त सास्कृतिक जमाव को पॉच सास्कृतिक कालो मे विभाजित किया गया। प्रथम चार सास्कृतिक कालो मे क्रमबद्धता है जो 600 ई0 पू0 से लेकर 600 ई0 के मध्य रखे गये है। पॉचवा सास्कृतिक काल 1600 ई0 के प्रारम्भ का है।

प्रथम सास्कृतिक काल से 600 ई0 पू0 से लेकर 150 ई0 पू0 के बीच के अवशेष प्राप्त हुए है जिसे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति का नाम दिया गया है । द्वितीय सास्कृतिक काल 150 ई0 पू0 100 ई0 के बीच का है जिसमे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) अवनति के प्रमाण दिखाई पडते है। तृतीय सास्कृतिक काल 100 ई0 से 300 ई0 के बीच का है इसमे मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) का प्रयोग पूर्णत समाप्त हो जाता है। प्रकाशित विवरणो के आधार पर इस स्थल के एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के दो चरणो की पहचान की जा सकती है। यहॉ का प्रथम सास्कृतिक काल प्रारम्भिक प्राक सरचनात्मक चरण के एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति से सम्बन्धित है और द्वितीय सास्कृतिक काल परवर्ती एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति का है। पाटलिपुत्र के ही अन्तर्गत ककणबाग मे भी पुरातत्वविदो ने उत्खनन कार्य किये थे। यहॉ सीवर लाइन खोदते समय मौर्य युगीन मृण्मूर्तियॉ एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) और कुछ काष्ठ स्तम्भो के अवशेष उपलब्ध हुए थे (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1970–71* 62–64)। अतएव विस्तृत उत्खनन न हो पाने के कारण इसे भी

एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) और परवर्ती एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति से सम्बद्ध किया गया ।

बैशाली

वैशाली बसाढ (अक्षाश 25° 58 उ0, देशान्तर 80° 11 पूर्व) को उत्तरी बिहार मे पूर्व के मुजफ्फरपुर जिले के बसाढ गॉव से समीकृत किया गया है । अब वैशाली नाम से एक नया जिला बन गया है। रामायण और महाभारत ग्रन्थो मे भारत के प्राचीन नगरो मे इसकी गणना की गई है। लिच्छवियो की राजधानी महावीर का जन्म स्थान और अशोक स्तम्भ की यहॉ पर उपलब्धि के कारण यह स्थल पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। बुद्ध की मृत्यु के 150 वर्ष बाद द्वितीय बौद्ध सगीति का आयोजन भी यहॉ पर हुआ था। 1903–04 मे ही टी0 ब्लाच (*आर्कलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिर्पोट 1903–04* 81) ने और 1913–14 मे बी0 बी0 स्पूनर (*आर्कलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिर्पोट 1913–14 98*) ने इस स्थल का उत्खनन, किया और बाद मे 1950 मे वैशाली सघ द्वारा इस स्थल पर एक छोटे स्तर का उत्खनन किया गया था (कृष्णदेव और मिश्र 1961)। 1957–58 और 1961–62 के बीच के0 पी0 जायसवाल शोध सस्थान द्वारा उत्खनन कार्य किया गया (सिन्हा और राय 1969)। यहॉ पर जिन क्षेत्रो मे उत्खनन कार्य किया उनमे प्राचीन तालाब स्तूप राजा विशाल का गढ धीमेन का तल्ला, चक्रनदास गिरिया और लालपुरा प्रमुख है। लालपुरा से यहॉ के प्रमुख सास्कृतिक जमाव प्राप्त हुए है जिसे 500 ई0 पू0 से लेकर 500 ई0 तक के चार सास्कृतिक कालो मे विभाजित किया गया है।

प्रथम सास्कृतिक काल प्रथम ए और प्रथम बी दो उपचरणो मे विभाजित है। प्रथम ए उपकरण मे ब्लैक–एड–रेड वेयर रेड वेयर एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा), हड्डी के बाणाग्र, लोहे के उपकरण आदि प्राप्त हुए हैं। कई धूसर पात्र (ग्रे वेयर) भी उपलब्ध हुए है। जिनमे से कुछ पर काले रग के चित्र बनाये गये है । इस चरण से किसी भी सरचना के प्रमाण नहीं मिलते। प्रथम बी उपचरण 300 से 150 ई0 पू0 के मध्य रखा गया है जिसमे एन0बी0पी0डब्लू0

(उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) और ग्रे वेयर चलती रहती है तथा पकी ईटो की बनी दीवालो और उपरत्नो के मनके नाग की मृण्मूर्तियॉ मिलती है।

द्वितीय सास्कृतिक काल जिसे 150 से 100 ई0 के मध्य रखा गया है मे एन0 बी0 पी0 डब्लू0, आहत और ढली हुई मुद्राए पूजार्थक फलक आदि उपलब्ध हुए है। तृतीय और चतुर्थ सास्कृतिक काल जो क्रमश 200 से 300 ई0 और 300 से 500 ई0 के मध्य के हैं मे पकी ईटो से बनी सरचनाए मिट्टी की मुहरे और गुप्त काल की प्रतिमाए प्राप्त हुई है। वैशाली के उत्खननो मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के प्रारम्भिक और परवर्ती दोनो चरणो के प्रमाण प्राप्त होते है (सिन्हा 1969)।

चिराद

चिराद नामक पुरास्थल (अक्षाश 25^{0} 48 उ0, देशान्तर 84^{0} 50 पू0) के प्रकाश मे आने एव उसके उत्खनन का विस्तृत विवरण पूर्ववर्ती अध्यायो मे प्रस्तुत किया जा चुका है। इसका प्रथम सास्कृतिक काल नवपाषाण कालीन सस्कृति से सम्बन्धित तथा द्वितीय सास्कृतिक काल ताम्रपाषाण युगीन सस्कृति से। प्रस्तुत अध्याय मे केवल तृतीय सास्कृतिक काल का सम्बन्ध सन्दर्भगत है अत यहॉ केवल उसी का उल्लेख समीचीन है। चिराद का तृतीय सास्कृतिक काल एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा) सस्कृति से सम्बन्धित है। लेकिन पूर्ववर्ती ब्लैक स्लिप्ड वेयर और कृष्ण, लोहित पात्र–परम्परा के बर्तन इस चरण मे भी मिलते है। अन्य पुरासामग्रियो मे नवपाषाणिक कुल्हाडियॉ शूर्मा लगाने की सलाई, पत्थर की गोलियॉ सिल–लोढे, मिट्टी की खिलौना–गाडी, पशुओ और मानवो की मृष्मूर्तियॅा लोहे के चाकू, हड्डी का बाणाग्र और कुछ आहत और ढले हुए ताम्र मुद्राए सम्मिलत हैं। इस चरण के ऊपरी धरातल से पकी ईटो से निर्मित दीवाल भी उपलब्ध हुई हैं। इन ईटो का आकार 46 X 25 X8 मीटर है । एक निवास गर्त मे दफनाया हुआ एक पशु ककाल भी उपलब्ध हुआ था। मिट्टी का एक मुखौटा भी इस धरातल से उपलब्ध हुआ है। चतुर्थ सास्कृतिक काल ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो से सम्बन्धित है।

राजगिरि

पटना से लगभग 100 किलोमीटर दक्षिण–पूर्व स्थित राजगिरि (25^0 1 उ0 अक्षाश, $85^0$30 पू0 देशान्तर) का उल्लेख महाभारत मे भी मिलता है । यह मगध की राजधानी थी तथा बिम्बिसार और अजातशत्रु के समय मे महत्मा बुद्ध यहॉ कई बार आये थे । इस स्थल का उत्खनन अमलानन्द घोष ने 1950 मे किया था और इसके सास्कृतिक जमाव को चार सास्कृतिक कालो मे विभाजित किया (घोष 1950 86)।

प्रथम सास्कृतिक काल को पॉचवी शताब्दी ई0 पू0 के पहले माना गया है। द्वितीय सास्कृतिक काल से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के प्रमाण मिलने लगते है । यहॉ से दाह सस्कार के बाद शवाधान के प्रमाण मिलते है । तृतीय और चतुर्थ सास्कृतिक कालो को प्रथम शती ई0 पू0 से प्रथम शती ई0 के बीच रखा गया है ।

1953–54 मे डी0 आर0 पाटिल ने यहॉ पुन उत्खनन किया जिससे बौद्ध विहार और अन्य प्रमाण उपलब्ध हुए । 1961–62 और 1962–63 मे रघुवीर सिह ने यहॉ पर पुन उत्खनन किया । जिससे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) के प्रमाण उपलब्ध हुए। इन उत्खननो से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के प्रारम्भिक और परवर्ती दोनो चरणो के प्रमाण उपलब्ध हुए है ।

अफसढ

बिहार के नेवादा जनपद मे स्थित अफसढ का उत्खनन 1973–74 से लेकर 1983–84 के बीच पी0 सी0 प्रसाद द्वारा किया गया । यहॉ के सास्कृतिक जमाव दो चरणो मे विभक्त किये गये है । प्रथम मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) ब्लैक वेयर, ब्लैक–एड–रेड वेयर और एक लोहे के उपकरण, हाथी दॉत और मृण्मूर्तियॉ प्राप्त हुई हैं । द्वितीय चरण से परवर्ती गुप्त काल के शिवमदिर के अवशेष मिले है। अफसढ को एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के परवर्ती चरण के अन्तर्गत रखा गया है ।

चन्दहाडीह

उत्तरी बिहार के मुजफ्फरपुर जिले मे स्थित चन्दाडीह स्थल का उत्खनन 1977–78 मे किया गया। उत्खनन से प्राप्त महत्वपूर्ण सामग्रियो मे एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) और ग्रेवेयर के पात्र एव इस सस्कृति के अवशेष प्राप्त हुए हैं (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1977–78* 15)।

कटरागढ

बिहार के मुजफ्फरपुर जिले मे स्थित कटरागढ स्थल का उत्खनन 1975–76 से लेकर 1979–80 तक किया गया। जिसके परिणाम स्वरूप एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) काले रग से चित्रित धूसर पात्र (ग्रे वेयर और रेड वेयर) प्राप्त हुए है। परवर्ती सास्कृतिक जमाव से शुग कुषाण और पाल काल के अवशेष उपलब्ध हुए है। इस स्थल के उत्खनन के विस्तृत विवरण अभी प्रकाशित नही हुए है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1975–76* 15 से 1979–80)।

बलिराजगढ

उत्तरी बिहार के दरभगा से 80 किलोमीटर उत्तर–पूर्व स्थित (अक्षाश 26^0 31 उ0 देशान्तर 86^0 7 पू0) स्थल पर 1962–63 मे रघुवीर सिह और एस0 मुखर्जी द्वारा किये गये उत्खनन से रक्षा प्राचीर के नीचे के जमाव से एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) के पात्र खण्ड उपलब्ध हुए है। यहॉ की रक्षा प्राचीर के तीन चरणो के प्रमाण उपलब्ध हुए है, जिसका निर्माण द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व मे किया गया था और जो पाल युग तक उपयोग मे आई। अन्य पुरा सामग्रियो मे सिक्के, हड्डी की सामग्रियॉ और कुछ शुगकालीन मृण्मूर्तियो सम्मिलित है (*इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1962–63* से *इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू 1974–75*)।

उक्त महत्वपूर्ण उत्खनित के स्थलो के विवरण से स्पष्ट है कि अधिकतर उत्खनन उर्ध्वाधर विधि से किया गया है जिससे स्थलो का सास्कृतिक अनुक्रम और स्तरीकरण ही स्पष्ट हुआ है । इन सस्कृतियो के अन्य पक्षो पर बहुत कम

प्रकाश पडा है । गगा घाटी के अधिकाश पुरास्थल ऊँचे टीले के रूप मे मिलते हैं जिन पर यदि बडे क्षेत्र मे उत्खनन किया भी जाये तो निचले धरातल पर पहुँचते पहुँचते उत्खनन का क्षेत्र सीमित हो जाता है । फिर भी उपलब्ध अवशेषो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मध्य गगा घाटी मे प्रारम्भिक ऐतिहासिक युग की एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के स्थल पूर्ववर्ती सास्कृतिक जमाव के ऊपर मिलते है । ऐसे स्थल बहुत कम है जहॉ एन बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कति के ब्लैक–एड–रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर के साथ मिलने लगते है । लेकिन लोहे के व्यापक प्रचलन से यक्त एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के प्राराम्भिक चरण से जो सास्कृतिक अवशेष उपलब्ध हुए उनके आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय समाज प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल मे भी सभवत प्राचीन परम्पराओ का पूर्णरूप से परित्याग नहीं कर सका था ।

मकानो का निर्माण एन0बी0पी0डंब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के प्रारम्भिक चरण मे बॉस–बल्ली और घास–फूस की झोपडियो से अथवा मिट्टी की दीवारो से किया जाता था । एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के परवर्ती चरण मे ही नगरीकरण के स्पष्ट प्रमाण मिलते है। आवास स्थल की विकसित प्रक्रिया मे मध्य और जिसमे पकी ईटो के मकान मुद्राए आदि से युक्त परवर्ती स्थल बडी नदियो के तट पर स्थित हैं । सहायक नदियो पर जो स्थल हैं भी उनका आकार छोटा है । जैसा कि आर0 एस0 शर्मा ने उल्लिखित किया है कि गगा घाटी मे कई स्थलो पर निवास का प्रारम्भ एन0 बी0 पी0 डब्लू0 काल से ही होता है । इस युग मे इन स्थलो पर निवास क्षेत्र मे भी वृद्धि हुई । उदाहरण के लिए, प्रहलादपुर, खैराडीह और गनवरिया (शर्मा 1983 100) आदि स्थलो पर पहले आवास स्थल टीले के सीमित क्षेत्र मे था, लेकिन एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के समय यह क्षेत्र बढ गया । उदाहरण के लिए इसी तरह के प्रमाण एन0बी0पी0डब्लू0 (उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र–परम्परा) सस्कृति के समय मे ऊपरी गगा घाटी के अतरजीखेडा (गौड 1983 243) तथा कानपुर (लाल 1984 174) मे किये गये उत्खननो से प्राप्त हुए है । जार्ज एरडसी ने मध्य गगा

घाटी मे कौशाम्बी और समीपवर्ती क्षेत्रो मे पुरातात्विक अन्वेषण किया और इनको भी इसी तरह के प्रमाण उपलब्ध हुए (एरडसी जार्ज 1985 71 1988)। इस सस्कृति के स्थलो के विस्तरण मे स्पष्ट परिवर्तन दिखाई पडता है । इस समय पूर्ववर्ती काल की अपेक्षा नदियो से दूर भीतरी भागो मे भी इनका विस्तार दिखलाई पडता है। उदाहरण के लिए सुल्तानपुर जनपद मे बहुत से स्थल तालाबो और झीलो के किनारे प्राप्त हुए है (कुमार 1989 192—197 1990) जबकि गोमती जो अपेक्षाकृत इस क्षेत्र की बडी नदी है के तट पर इस सस्कृति के महत्वपूर्ण स्थल नही प्राप्त हुए है । इसका कारण सभवत इस नदी की भयकर बाढ अथवा इसका बार—बार अपना प्रवाह मार्ग परिवर्तित करना हो सकता है । इस युग मे एक स्थल की दूसरे से दूरी भी कम हो जाती है । कहा जा सकता है कि एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के आवास स्थलो के विस्तार और स्थलो की सख्या मे वृद्धि सभवत आर्थिक सम्पन्नता के कारण मानव जनसख्या मे वृद्धि का सकेत करता है।

उपर्युक्त सभी सस्कृतियो का पुरातत्व ने जो स्वरूप प्रस्तुत किया है वह प्रारम्भ मे आदिम कबीलो की आखेटक और सग्रहक अर्थव्यवस्था की सस्कृति है, जिसके पुनर्निमाण मे वर्तमान काल की जनजातियो की जीवन शैली बहुत सहायक है। यद्यपि गगा के मैदान मे इतनी तीब्रगति से सास्कृतिक विकास हुआ कि अधिकाश जनजातियॉ पिछले कुछ दशको मे ही अपने सास्कृतिक स्वरूप मे परिवर्तन कर चुकी है। यह नवपाषाणिक ताम्रपाषाणिक और प्रारम्भिक ऐतिहासिक सस्कृतियो का जीवन मे देखा जा सकता है । आधुनिक काल मे प्रचलित विभिन्न ग्रामीण उद्योग कृषि शिल्प आदि आज भी प्राचीन काल की तकनीक पर आधारित है।

षठम् अध्याय

उपसहार

भारतवर्ष का प्रत्येक अचल सास्कृतिक विरासत एव परम्पराओ से समृद्ध है। इन सास्कृतिक परम्पराओ के मूर्त अवशेष यत्र–तत्र सर्वत्र विस्तीर्ण हैं। साहित्य, मनीषियो इतिहासकारो एव पुराविदो द्वारा नित्यप्रति अन्वेषण के परिणाम–स्वरूप नवीन सामग्री निरन्तर उद्घाटित हो रही है । इससे पुरातात्विक साक्ष्यो की सख्या मे निरन्तर अभिवृद्धि हो रही है । इन सामग्रियो के व्यवस्थित अध्ययन से महत्वपूर्ण एव अभीष्ट निष्कर्षों को असानी से प्राप्त किया जा सकता है । ऐसी स्थिति मे उपेक्षित एव अप्रकाशित पुरास्थलो की खोज अभिलेखो प्रतिमाओ तथा अन्य पुरासामग्रियो का विवरण और प्रकाशन एव उनके सापेक्षिक महत्व का प्रतिपादन अपरिहार्य हो गया है ।

गगा का मैदान उत्तर मे हिमालय और दक्षिण मे विन्ध्य पर्वत श्रृखला के मध्य मे स्थित है । गगा के मैदान को तीन प्रमुख भागो मे बाटा जा सकता है

(1) ऊपरी गागेय मैदान या गगा–यमुना–दोआब जो मोटे तौर पर पूर्व मे इलाहाबाद तक फैला हुआ है ।

(2) मध्य गागेय मैदान जो मोटे तौर पर पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार के राजमहल पहाडियो तक फैला है ।

(3) निम्न गागेय मैदान जो पश्चिम बगाल और डेल्टा तक है ।

मध्यपाषाण काल मे सम्पूर्ण मध्य गागेय मैदान का भूभाग सस्कृतियो के उद्भव और विकास की गाथा से परिपूर्ण है । इसके पश्चिमी क्षेत्र मे विगत चार दशको मे हुये पुरातात्विक अन्वेषणो ने इस क्षेत्र को न केवल भारत के अपितु, विश्व के पुरातात्विक मानचित्र पर प्रतिष्ठित कर दिया है ।

मध्य गागेय मैदान मे दक्षिण के विन्ध्य क्षेत्र से मानव का प्रब्रजन सर्वप्रथम प्रातिनूतन काल के अत मे हुआ । इस प्रथम सस्कृति को अनुपुरापाषाण सस्कृति का नाम दिया गया है जो उच्चपुरापाषाण और मध्यपाषाण के सक्रमण को द्योतित करती है ।

उस समय गगा का मैदान आज जैसा नही था, अभी निर्माणाधीन था। उसमे झीले थी और उस क्षेत्र मे वे जानवर थे जो अब उस क्षेत्र मे नही मिलते जैसे हाथी, गैडे दरियाई घोडे, आदि । यह क्षेत्र लोगो को पसन्द आया होगा तभी उन्होने इस क्षेत्र मे रहने का फैसला किया होगा। लेकिन उनके सामने एक समस्या थी, वे अब भी उपकरण पत्थर के ही बनाते थे यह सुविदित है कि गगाघाटी मे पत्थर नही थे। उपकरणो के निर्माण की दिशा मे एक नया प्रयोग प्रारम्भ हुआ और अब हड्डियो के भी उपकरण बडी सख्या मे बनने लगे। प्रतापगढ जनपद के सदर एव पटटी इलाहाबाद जनपद मे करछना फूलपुर हडिया एव सोराव तहसीलो के भू–भागो मे अनेक स्थलो से मध्यपाषाण युग से जुडे लघु पाषाण उपकरण एव अन्य पुरासामग्रियॉ प्राप्त हुई हैं। गगाघाटी के इस क्षेत्र मे वैसे तो मानव के प्रवेश की कहानी उच्च पुरापाषाण काल के परवर्ती चरण मे लगभग 15 हजार ई0 पू0 के आस–पास ही प्रारम्भ हो गयी थी लेकिन मध्य पाषाण काल तक आते–आते यह प्रक्रिया प्रबल होती दिखायी देती है। प्रारम्भ मे सभवत विन्ध्य क्षेत्र से गगा घाटी की ओर मनुष्य का आना और कुछ महीनो के बाद विन्ध्य क्षेत्र की ओर पुन लौट जाना ऋृतुनिष्ठ प्रब्रजन रहा होगा। लेकिन धीरे–धीरे तत्कालीन मानव ने गगा घाटी मे ही रहने का निर्णय ले लिया। इस तरह प्रारम्भ हुआ उनकी अस्थायी बस्तियो का सिलसिला, कब्रो की कहानी आदि। प्रतापगढ जनपद मे स्थित सरायनाहर राय महदहा एव दमदमा के साक्ष्य इस सदर्भ मे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

मध्य गगा घाटी मे प्रथम मानव सस्कृति के प्रमाण प्रातिनूतन काल के अन्त और नूतनकाल के प्रारम्भ के अनुपुरापाषाण (इपीपैलियोलिथिक) सस्कृति से सम्बन्धित हैं जो स्पष्टत विन्ध्य क्षेत्र से आकर गगा के मैदान को अपना उपनिवेश बनाने वाली प्रथम सस्कृति है। एक बार इन दोनो मैदानी और पठारी क्षेत्रो का जो पारस्परिक सास्कृतिक सम्पर्क प्रारम्भ हुआ वह निरन्तर बना रहा और दोनो क्षेत्रो

की सस्कृतियो के पारस्परिक आदान–प्रदान मे वस्तुत भारतीय सस्कृति को पुष्ट आधार प्रदान किया।

प्रातिनूतन काल के अन्त मे जलवायु मे हुए परिवर्तन के कारण विन्ध्य क्षेत्र के मानव को गगा के मैदान मे आने के लिए बाध्य होना पडा। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भ मे यह आगमन अल्पकालिक और ॠतुनिष्ठ था। उपकरण निर्माण के लिए पत्थर लेकर विन्ध्य क्षेत्र का मानव मैदान मे आता था यही उपकरण निर्माण करता और शिकार तथा सग्रह मे उनका प्रयोग करता और कुछ दिनो के बाद पुन वापस चला जाता। यही कारण है कि अनुपुरापाषाण काल के सभी स्थलो (इलाहाबाद मे अहिरी और कुढा, वाराणसी मे गढवा और प्रतापगढ मे सुलेमान कुढा साल्हीपुर एव मन्दाह) पर दीर्घकालिक आवास के प्रमाण नही प्राप्त होते हैं। जैविक अवशेष भी ऐसे स्थलो से कम मिले है। चिकनी कडी मिट्टी मे ऐसे स्थलो पर चर्ट पर ही उपकरण मिलते हैं। इस सस्कृति के स्थलो को शिविर स्थल के अन्तर्गत रखा गया है जो यायावर मानव के अल्पकालिक आवास क्षेत्र थे। उत्खनन के अभाव मे यह नही कहा जा सकता है कि ये झोपडी जैसे घर बनाते थे या नही। लेकिन विन्ध्य क्षेत्र मे जैसा कि चोपानीमाण्डो के उत्खनन से पता चलता है कि एक दूसरे के सन्निकट गोलाकार झोपाडियॉ इस सस्कृति के लोग बनाते थे (मिश्र और अन्य 1980)।

नूतन काल मे उपयुक्त जलवायु का आविर्भाव हुआ। प्राकृतिक सम्पदा मे सम्पन्नता आई। तकनीकी विकास के कारण लघु पाषाण उपकरणो का धनुष–बाण के लिए प्रयोग और भोजन मे वन्य अन्न का प्रयोग सिल–लोढे से पीसकर खाद्यान्नो का भोजन मे उपयोग आदि कारणो से मध्य पाषाण काल मे मानव जीवन अपेक्षाकृत बेहतर हुआ और जनसख्या मे तीव्र वृद्धि हुई। अब गगा के मैदान के जिस क्षेत्र की पाषाण युगीन मानव ने खोज की थी, उसकी प्राकृतिक सम्पन्नता के कारण इस क्षेत्र को भी बडे पैमाने पर आबाद किया गया, जिसके प्रमाण लगभग 200 से अधिक मध्यपाषाणिक स्थलो के रूप मे मिलते हैं। ये स्थल यहाँ की प्राचीन धनुषाकार झीलो अथवा इन झीलो से निकलने वाली नदियो के तट पर स्थित हैं। उल्लेखनीय है कि अधिवासो के निर्माण के लिए मध्य पाषाण काल से ही ऐसे भू

भागो का चयन किया गया जो कुछ ऊँचाई पर स्थित थे जहॉ बाढ का पानी आसानी से नही पहुँचता था। स्थल चयन की यह परम्परा हमे परवर्ती ऐतिहासिक काल तक निरन्तर दिखाई पडती है। मध्य पाषाणिक मानव अपने आवासो का निर्माण गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपडियो के रूप मे करता था। सरायनाहर राय महदहा और दमदमा नामक मध्य पाषाणिक स्थलो के उत्खननो से प्रमाणित होता है कि कुछ ऐसे स्थल है जहॉ इस सस्कृति के लोग स्थायी रूप से निवास करने लगे थे। यद्यपि उनकी अर्थव्यवस्था आखेट और सग्रह पर ही आधारित थी। जगलो और घास के मैदानो मे प्रचुर मात्रा मे विभिन्न प्रजाति के हिरण बारहसिहा, सुअर और खरगोश जैसे शाकाहारी जानवर थे। इन स्थलो के उत्खनन से हाथी गैडे और भैसे जैसे बडे जानवरो के प्रमाण भी मिले है। नदियो और झीलो मे मछली कछुए, और घोघे तथा विभिन्न प्रजाति के पक्षी पाये जाते थे जिनके अवशेष उपर्युक्त स्थलो की खुदाइयो से प्राप्त हुए है। इस तरह की खाद्य सामग्री की प्रचुरता ने ही सभवत मध्यपाषाणिक मानव को स्थायी आवास के लिए प्रेरित किया। झोपडियो के स्तम्भगर्त सरायनाहर राय से मिले है लेकिन बास–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे इनके फर्शों पर नहीं उपलब्ध हुए है।

स्तम्भगर्त के प्रमाण केवल सरायनाहर राय के सामुदायिक झोपडी के फर्श और चोपनीमाण्डो के फर्शो से प्राप्त हुए हैं। ये फर्श कई परतो मे प्राप्त होती है और कभी–कभी ये फर्श जले हुए रूप मे मिलते है। लगता है कि इन्ही फर्शों के ऊपर आग जलाई जाती थी। फर्श के भीतर और बाहर अनेक सख्या मे गोलाकार गर्त चूल्हे प्राप्त हुए है जिनका प्रयोग खाद्य सामग्री को पकाने के लिए विशेषत पशुओ का मॉस भूनने के लिए किया जाता था। फर्शो और गर्त चूल्हो के सन्निकट ही मध्यपाषाणिक मानव शवाधान प्रक्रिया करता था। आवास क्षेत्र के अन्दर ही शवाधान बनाने के पीछे मृतक के प्रति उसके स्नेह और आदर का बोध होता है। सभवत उसके मन मे अपने मृतको के मृत्योपरान्त जीवन की कोई परिकल्पना रही होगी। पूर्व और पश्चिम अथवा पश्चिम–पूर्व दिशा मे विस्तीर्ण शवाधान सभवत सूर्य के प्रति उसके विचारो का प्रतिनिधित्व करता है। मध्यपाषाणिक अधिवास प्रक्रिया से सम्बन्धित विभिन्न पुरावशेषो के अध्ययन के द्वारा मध्यपाषाणिक सस्कृति के विविध

पक्षो पर प्रकाश पडा है जिसे मध्यपाषाणिक पुरातत्व के रूप मे विभिन्न भारतीय और विदेशी विद्वानो ने महत्ता प्रदान की है।

गगा घाटी की मध्यपाषाणिक सस्कृतियो के विस्तार क्षेत्र मे ताम्रपाषाणिक सस्कृति के प्रमाण हमे मिले है। लेकिन अभी तक नवपाषाणिक सस्कृति का एक भी प्राथमिक स्थल इस क्षेत्र से नही प्राप्त हुआ है। मध्यपाषाणिक सस्कृति इस क्षेत्र मे कृषि और पशुपालक नवपाषाणिक सस्कृति के रूप मे क्यो विकसित नही हुई? यह भी गगाघाटी के पुरातत्व का अहम अनुत्तरित प्रश्न है। हो सकता है कि अभी तक नवपाषाणिक स्थल की खोज होना बाकी है जो परवर्ती जमावो के नीचे दबे है या यह भी हो सकता है कि जनसख्या के दबाव के कारण मनुष्य द्वारा अथवा नदियो की बाढ विभीषिका से ऐसे स्थल विनष्ट हो गये हो। लेकिन मध्य गगा घाटी के पूर्वी भाग मे (पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार मे) नवपाषाणिक सस्कृति के प्रमाण प्राप्त हुये हैं। पुरातात्विक प्रमाण ऐसा सकेत देते है कि जिस प्रकार मध्य गगाघाटी के पश्चिमी भाग की मध्यपाषाणिक सस्कृति को विन्ध्य क्षेत्र की मध्यपाषाणिक सस्कृति ने जन्म दिया उसी प्रकार पूर्वी क्षेत्र की नवपाषाणिक सस्कृति को भी विन्ध्य क्षेत्र की नवपाषाणिक सस्कृति ने अकुरित और पल्लवित किया। नवपाषाण काल मे ऐसे भू-भागो को आवास के लिए चुना गया जहॉ बिना किसी प्रयास के कृषि के लिए उपयुक्त उर्वरा भूमि उपलब्ध थी। मध्य गगाघाटी के लगभग सभी नवपाषाणिक स्थल एक बार आबाद हो जाने बाद फिर वीरान नही हुए। इसलिए निम्नतम धरातल पर स्थित नवपाषाणिक सस्कृति के जमाव बडे पैमाने पर उत्खनित नही किये जा सके फिर भी अधिवास सम्बन्धी जो प्रमाण उपलब्ध हुए है उससे प्रतीत होता है कि गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपडियॉ बनायी जाती थी। लकडी के स्तम्भ गत्तो पर निर्मित इन झोपडियो के चारो ओर बॉस-बल्ली अथवा घास-फूस की दीवाल बनायी जाती थी जिस पर गीली मिट्टी का मोटा लेप लगाया जाता था। महगडा के उत्खनन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक घर मे दो या दो से अधिक झोपडियॉ थी जिनका अलग-अलग कार्यो के लिए प्रयोग होता था। कुछ का उपयोग आवास अथवा रसोई के रूप मे और कुछ का उपकरण निर्माण के लिए अथवा कुटीर उद्योगो के लिए किया जाता था। कडी मिट्टी को

पीटकर बनाये गये उसके फर्शों पर प्राप्त विभिन्न प्रकार की सामग्रियो के विश्लेषण से इस प्रकार के निष्कर्ष निकाले गये है। यद्यपि परवर्ती काल मे कृषि द्वारा उत्पादित बहुत से अनाजो के प्रमाण नवपाषाणिक धरातल से मिले है और कई प्रकार के पालतू पशुओ की हड्डियॉ प्राप्त हुई है। लेकिन समीपवर्ती जगलो से वन्य पशुओ और वनस्पतियो का सग्रह तथा जलाशयो का मछली इत्यादि के लिए प्रयोग किया जाता था। आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के आविर्भाव के बावजूद पूर्ववर्ती आखेटक–सग्रहक अर्थव्यवस्था का पूर्णत परित्याग नही किया जा सका था।

ताम्रपाषाणिक सस्कृति काल मे सास्कृतिक स्वरूप नवपाषाणिक सस्कृति से अधिक भिन्न नही था। यद्यपि तकनीकी विकास के बहुत से लक्षण – चाक पर बने हुए बर्तनो अथवा ताबे पर बने हुए उपकरणो के रूप मे देखे जा सकते है लेकिन इनकी अर्थव्यवस्था मे कोई परिवर्तन नही दिखाई पडता। चित्रित पात्र–परम्पराओ, बिन्दुओ से अलकृत हड्डी के पुच्छल और साकेट (छिद्र) युक्त बाणाग्र तथा मृण्मूर्तियो और मनके उनके कलात्मक पक्ष पर प्रकाश डालते है। लेकिन इनके घर/आवास अधिकाशत गोलाकार झोपडियो के रूप मे मिलते हैं। मिट्टी की दीवालो से बने हुए घर ताम्रपाषाणिक सस्कृति के सदर्भ मे कुछ स्थलो से प्राप्त हुए है। इमलीडीह और चिराद जैसे स्थलो के उत्खनन से बहुत से चौडे मुँह वाले चूल्हे प्राप्त हुए है।

यद्यपि चित्रित और सादी, ब्लैक एड रेड वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर पात्र–परम्परा से युक्त ताम्रपाषाणिक सस्कृति के अन्तिम चरण मे इस क्षेत्र के मानव का लोहे से परिचय हो गया था, जिसके प्रमाण प्राक् एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के कई स्थलो से भी प्राप्त हुए है। लेकिन लोहे के इस ज्ञान से भी प्रारम्भ मे उनकी अर्थव्यवस्था मे कोई बडा परिवर्तन नहीं हो सका। इनकी सास्कृतिक परम्परा में कोई बडा परिवर्तन एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के प्रारम्भिक चरण में भी नहीं दिखाई पडता। इसका कारण सभवत भारतीय परम्पराबद्धता ही रही होगी। एन0बी0पी0डब्लू0 सस्कृति के मध्य और परवर्ती चरण से हमे पहली बार सास्कृतिक प्रक्रिया मे क्रान्तिकारी परिवर्तन के प्रमाण मिलते है, जब पकी ईटो से निर्मित

मकान वलय कूप, आहत और ढली हुई लेख रहित मुद्राए अथवा अन्य सामग्रियॉ उपलब्ध होती है।

मध्य गगा का मैदान जलवायु की दृष्टि से बहुत विषम क्षेत्र है। ग्रीष्म ऋृतु मे सहनशक्ति से अधिक गर्मी शीत ऋृतु मे कडाके की ठण्ड और वर्षा ऋृतु मे नदियो मे विभीषिका उत्पन्न कर देने वाला बाढ का यह क्षेत्र अपने मे विशिष्ट है। लेकिन इसके बावजूद भूमि की उर्वरता और जैविक सम्पदा की सम्पन्नता के कारण ही यह क्षेत्र मध्यपाषाणिक काल से लेकर आधुनिक काल तक निरन्तर सास्कृतिक विकास मे सलग्न रहा। जैसा कि चिराद के उत्खनन से प्रतीत होता है कि यहॉ के स्थलो पर बार–बार प्राकृतिक आपदा के प्रमाण मिलते है लेकिन मनुष्य ने इन स्थलो का परित्याग नही किया अपितु उसने हर आपदा के बाद नये मार्ग पर चलने का सहज प्रयास किया। इसीलिए सास्कृतिक परम्पराओ के मूल स्वरूप मे सास्कृतिक परिवर्तन के साथ बडा बदलाव नही दिखलाई पडता है। विन्ध्य की मध्यपाषाण सस्कृति ने वहॉ की नवपाषाणिक सस्कृति को जन्म दिया और विन्ध्य की नवपाषाण सस्कृति से गागेय मैदान की सस्कृति अभिन्न रूप से जुडी है। नवपाषाण और ताम्रपाषाण काल मे मध्य गागेय मैदान को जो सास्कृतिक रूप मिला वह कमोवेश आज भी जारी है लेकिन अधिशेष उत्पादन और प्राकृतिक सम्पदा की सम्पन्नता से आर्थिक व्यवस्था मे परिवर्तन इसी युग से प्रारम्भ हो गया था जिसकी परिणति धार्मिक और कलात्मक विकास मे हुई और इस क्षेत्र मे नगरक्राति हुई।

मानव समाज के विकास मे विशेषत भारतीय सन्दर्भ मे जहॉ पर सम्पूर्ण जीवनचक्र मानसूनी वर्षा पर निर्भर करता है, उपयुक्त परिवेश पर निर्भर है । मौर्य युगीन भारत मे बिना दृढ कृषि आधार के सम्पन्न नही हो सकता और इस सन्दर्भ मे उपयुक्त परिवेश ने महत्वपूर्ण योगदान दिया था जिससे मौर्यकाल के इतिहास को हम अत्यधिक गौरवमय इतिहास के रुप मे देखते है जबकि भारतीय प्रतिभा का सर्वोत्तम विकास हुआ और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे उल्लेखनीय प्रगति हुई (धावलिकर 2000–2001 84)।

स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र (मध्य गागेय मैदान) मे किये गये पुरातात्विक अनुसधानो के फलस्वरूप प्रागैतिहासिक सस्कृतियो से लेकर ऐतिहासिक काल तक की सस्कृतियो का अविछिन्न क्रम प्रकाश मे आया है। एक सस्कृति का विकास कैसे दूसरी सस्कृति मे हुआ इसके भी प्रमाण भूतात्विक और पुरातात्विक अध्ययनो से प्राप्त हुए है । विन्ध्य क्षेत्र (दक्षिणी मिर्जापुर दक्षिणी इलाहाबाद) ने गागेय क्षेत्र (प्रतापगढ कौशाम्बी और उत्तरी इलाहबाद) की सस्कृतियो के उद्भव और विकास के मूल स्रोत के रूप मे काम किया है। इसलिए पुरातात्विक और ऐतिहासिक दृष्टि से इस क्षेत्र का अद्वितीय महत्व है। लेकिन इस क्षेत्र के पुरातत्व मे अभी भी कई पक्ष धुँधले है जैसे पाषाण--युगीन सस्कृतियो के अधिवास परम्परा का सम्पूर्ण ज्ञान अभी तक नही हुआ है। प्रारम्भिक नूतन काल का सम्पूर्ण ज्ञान अभी तक नही हुआ। आखेटक और सग्रहक अर्थव्यवस्था वाली मध्यपाषाणिक सस्कृति किस प्रक्रिया से कृषि एव पशुपालक प्रधान नवपाषाणिक सस्कृति के रूप मे परिवर्तित हुई? नवपाषाणिक सस्कृति ने ताम्रपाषाणिक सस्कृति को किस प्रक्रिया से विकसित किया और ताम्रपाषाणिक सस्कृति कैसे प्रारम्भिक लौह युगीन ऐतिहासिक सस्कृति के रूप मे विकसित हुई। इस दृष्टि से नवीन वैज्ञानिक विधियो के आलोक मे अनुसधान अपेक्षित है। सभव है मध्य गागेय मैदान मे भी विकसित सास्कृतिक परम्पराओ की प्राचीनता सिन्धु और अन्य नदी घाटियो की तरह और पहले चली जाय। इन विभिन्न सास्कृतिक कालो मे पठारी पहाडी क्षेत्र तथा मैदानी क्षेत्र एक दूसरे से निरन्तर सास्कृतिक सम्पर्क मे रहे। इस सास्कृतिक सम्पर्क का दोनो क्षेत्रो की सस्कृतियो के विकास मे महत्वपूर्ण योगदान था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अग्रवाल डी0 पी0 1984, आर्क्यला*जी आफ इण्डिया,* नई दिल्ली, ~~पृ0 253~~ ।

अग्रवाल डी0 पी0 और शीला कुसुमगर 1974, *प्रीहिस्टारिक क्रोनोलाजी एण्ड रेडियो कार्बन डेटिंग इन इण्डिया* नई दिल्ली ।

अल्टेकर ए0 एस0 और वी0 मिश्रा 1959 *रिपोर्ट आन कुम्रहार एक्सकैवेसन्स (पटना 1951–55)* पटना ।

असारी शाहिदा 2001, *प्रिहिस्टारिका सेटेलमेट पैटर्न आफ साऊथ–सेन्ट्रल गगा वैली एन इथनो आर्क्यलाजिकल पर्सपेक्टिव,* पी0एच0डी0 उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध दक्कन कालेज पोस्ट ग्रेजुएट रिसर्च इन्स्टीट्यूट पुणे ।

आर्कलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिपोर्ट 1903–04 81 ।

आर्कलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिपोर्ट 1909–10 40 ।

आर्कलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिपोर्ट 1913–14 98 ।

आलूर के0 आर0 1980, फानल रिमेस फ्राम दी विन्ध्याज एण्ड दि गगा वैली जी0 आर0 शर्मा वी0 डी0 मिश्र डी0 मण्डल, बी0 बी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल कृत *विगनिग्स आफ एग्रीकल्चर,* मे, इलाहाबाद डिपार्टमेन्ट ऑफ एन्शियन्ट हिस्ट्री, कल्चर एण्ड आर्कियोलॉजी, यूनिवर्सिटी ऑफ इलाहाबाद, पृष्ठ 201–227 ।

आलूर के0 आर0 1990 *स्टडीज इन इण्डियन आर्कियोलॉजी एण्ड पैलियन्थोलॉजी,* धारवाड श्रीहरि प्रकाशन ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू (आई०ए०आर०) 1956-57, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1959-60, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1960-61, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1961-62, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1962-63, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1963-64, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1967-68, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1968-69, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1971-72, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1972-73, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1973-74, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1974-75, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1975-76, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1977-78, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1978-79, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1980-81, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1981-82, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1982-83, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1983-84, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1984-85, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1985-86, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1986-87, नई दिल्ली ।

इण्डियन आर्क्यालाजी ए रिव्यू 1997-98, नई दिल्ली ।

एर्थार्ड एस और के0 ए0 आर0 केनेडी 1965, *एक्सकैवेशन एट लघनाज, 1944–63, भाग III द ह्यूमन रिमेन्स पूना दक्कन कालेज ।*

एरडसी, जार्ज 1985, सैटेलमेट आर्क्यालाजी आफ दि कौशाम्बी रीजन, *मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट,* अक 9, पृष्ठ 66-79 ।

एरडसी जार्ज 1988, *आर्बनाइजेशन इन अर्ली हिस्टारिक इण्डिया,* आक्सफोर्ड बी0 ए0 आर0 ।

क्रुक, एस0 एफ0 और आर0 एफ0 हाइजर, 1968, रिलेशनसिप्स एमन्ग हाउसेज, सेटेलमेट एरियाज एण्ड पापुलेशन इन एबोरिजन्स, कैलिफोर्निया के0 सी0 चाग द्वारा सम्पादित *सेटेलमेट आर्क्यालाजी* कैलिफोर्निया, पृ0 79-116 ।

क्रुक, डब्लू0 1896, दि ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स आफ दि नार्थ–वेस्टर्न प्राविसेज एण्ड अवध अक 1-5, कलकत्ता ।

कनिघम, ए0 1872, *आर्क्यालजिकल सर्वे आफ इण्डिया,* अक XI, शिमला ।

कनिघम, ए0 1875-76 और 1877-78, *आर्क्यालजिकल रिपोर्ट,* वाल्यूम II, दिल्ली।

का, आर0 एन0 1979, द नियोलिथिक कल्चर ऑफ कश्मीर, *एसेज इन इण्डियन प्रोटोहिस्ट्री* (सम्पादक डी0 पी0 अग्रवाल एव डी0 के0 चक्रबर्ती) पृ0 219–228 ।

काजले, एम0 डी0, 1990 सम इनटील आबजरवेशन आन पेलियोबोटेनिकल एवीहेन्स फार मीसोलिथिम प्लाण्ट इकोनामी फाम एक्सकैवेशन एट दमदमा, प्रतापगढ, उत्तर प्रदेश, *इन एडेप्टेशन एण्ड अदर एसेस* (एन0 सी0 घोष एण्ड एस0 चक्रवर्ती सम्पादक), पृ0 98–102, शान्तिनिकेतन विश्व–भारती ।

काजले एम0 डी0 1996 प्लान्ट रिसोरसेस एण्ड डाइट एमग द मीसोलिथिक हण्टरस एण्ड फोरेजरस *बायोआर्कियोलाजी आफ मीसोलिथिक इण्डिया ऐन इन्टीग्रेटेड अप्रोच* कोलोकियम XXXIII, द इण्टरनेशनल यूनियन ऑफ प्रीहिस्टोरिक एण्ड प्रोटोहिस्टोरिक साइनसेज (जी0 ई0 अफनास अव, एस0 वाल्यूम जे0 आर0 लुकास एण्ड एम0 तोसी सम्पादक) पृ0 251–253 फोर्ली ए0 बी0 ए0 सी0 ओ0 एडीजोनी ।

कुमार रबीन्द्र 1989, *आर्क्यलाजी आफ मिडिल गोमती बेसिन विद स्पेशल रिफरेन्स टू सुल्तानपुर डिस्ट्रिक्ट,* पी0 एच0 डी0 उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, वाराणसी बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय ।

कुमार रबीन्द्र, 1990, डिस्पर्सल आफ सेटेलमेट इन द मिडिल गोमती बेसिन, एन आर्क्यालाजिक इन्वेस्टीगेशन, *इण्डोपेसिफिक प्री–हिस्ट्री,* पृष्ठ 192-197, फोर्ली एवी0ए0सी0ओ0 एडिजिओनी।

केनेडी, के0 ए0 आर0 1996, स्केल्टल एडाप्टेसन्स आफ मेसोलिथिक हण्टर–फोरेजर्स आफ नार्थ इण्डिया महदहा एण्ड सरायनाहर राय कम्पेयर्ड, *बायोआर्कियोलाजी आफ मीसोलिथिक इण्डिया' ऐन इन्टीग्रेटेड अप्रोच,* कोलोकियम XXXIII, द इण्टरनेशनल यूनियन' ऑफ प्रीहिस्टोरिक एण्ड

प्रोटोहिस्टोरिक साइनसेज (जी0 ई0 अफनास अव एस0 वाल्यूम जे0 आर0 लुकास एण्ड एम0 तोसी सम्पादक), पृष्ठ 291–331 फोर्ली ए0 बी0 ए0सी0ओ0 एडीजोनी ।

केनेडी, के0 ए0 आर0, 2000 *गॉड–एप्स, एण्ड फासिल–मेन पैलियो एन्थ्रोपोलोजी आफ साउथ एशिया* अन्न अरबोर द यूनीवर्सिटी ऑफ मिसीगन प्रेस ।

केनेडी, के0 ए0 आर0, और ए0 ए0 एलगार्ट 1998, *साउथ एशिया इण्डिया एण्ड श्रीलका होमिनिड रिमेन्श एन अपडेट,* आर0 ओरबन और पी0 सेमल (सम्पादक), ब्रुसेल्स एन्थ्रोपोलोज ऐट प्रीहिस्टरी इन्टीट्यूट रायल डेस साइन्सेज नेचुरेलेस डबेलिजिक ।

केनेडी, के0 ए0 आर0, एन0 सी0 लोवेल और सी0 वी0 बरो 1986, *मेसोलिथिक ह्यूमन रिमेस फाम द गैगेटिक प्लेन सरायनाहर राय* साउथ एशिया प्रोग्राम आकेजनल पेपर्स एण्ड थीसिस, इथाका कारनेल यूनिवर्सिटी ।

केनेडी के0 ए0 आर0, सी0 बी0 बरो और एन0 सी0 लोवेल, 1986a, मेसोलिथिक ह्यूमन रिमेस फाम द गगेटिक प्लेन सराय नाहर राय, *पुरातत्व,* अक 15, पृष्ठ 1-55 ।

केनेडी के0 ए0 आर0 जे0 आर0 लुकास आर0 एफ0 पेस्टर, टी0 एल0 जान्स्टन एन0 सी0 लोवेल जे0 एन0 पाल, बी0ई0 हेम्फिल और सी0 बी0 बरो 1992, *ह्यूमन स्केल्टल रिमेस फाम महदहा ए गगेटिक मेसोलिथिक साइट* साउथ एशिया प्रोग्राम आकेजनल पेपर्स एण्ड थीसिस न0 11, साउथ एशिया प्रोग्राम इथाका कारनेल यूनिवर्सिटी, ।

केनेडी के0 ए0 आर0 और सी0 वी0 बरो 1992, मार्फोमेट्रिक एनालिसिस के0 ए0 आर0 केनेडी आदि द्वारा लिखित *ह्यूमन स्केल्टन रिमेस फाम महदहा ए*

गगेटिक मेसोलिथिक साइट मे कोरनेल यूनिवर्सिटी साऊथ एशिया प्रोग्राम आकेजनल पेपर्स एण्ड थेसिस 11 पृष्ठ 61-138।

कृष्णदेव और वी0 मिश्र 1961 *वैशाली एक्सकैशन 1950,* वैशाली ।

गुप्ता पी0 (सम्पादक) 1965 *पटना म्यूजिम कैटलाग ऑफ एन्टीक्यूटीज,* पटना ।

गौड, आर0 सी0 1983, *इक्सकैवेसस एट अतरजीखेडा अर्ली सिविलिजेसन ऑफ दि अपर गगा बेसिन* दिल्ली मोतीलाल बनारसी दास ।

घोष, ए0 1950 राजगीर *एशियेन्ट इण्डिया,* न0–7, पृ0 86 ।

चक्रवर्ती एम0 व मुखर्जी डी0, 1971 *इण्डियन ट्राइब्स,* कलकत्ता ।

चतुर्वेदी, एस0 एन0, और प्रेम सागर 1997, अर्ली पाटरी फ्राम सोहगौरा *इण्डियन प्रीहिस्ट्री 1980* सम्पादक वी0 डी0 मिश्रा एव जे एन0 पाल पृ0 300–302 इलाहाबाद प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

चतुर्वेदी, एस0 एन 1980 एक्सकैवेशस एट सठियॉव– फाजिलनगर, डिस्ट्रिक्ट देवारिया एण्ड एक्सप्लोरेसस इन द डिस्ट्रिक्स ऑफ गोरखपुर एण्ड बस्ती ऑफ उत्तर पद्रेश *हिस्ट्री एण्ड आर्कयालाजी,* वाल्यूम I 339–340

चतुर्वेदी, एस0 एन 1985 एडवास ऑफ विन्ध्यन नियोलिथिक एण्ड चाल्कोलिथिक कल्चर्स टू द हिमालयन तराई एक्सकैवेशस एण्ड एक्सप्लोरेसस इन सरयूपार रीजन ऑफ उत्तर प्रदेश, *मैन एण्ड इनवायरेन्मेट,* IX 101–108।

जोगलेकर पी0 पी0 वी0डी0 मिश्र और एम0 सी0 गुप्ता 2002 *एनीमल फाना फ्राम महदहा* इलाहाबाद प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

जोशी आर0 वी0 1978 द स्टोन कल्चर्स आफ सेन्ट्रल इण्डिया रिपोर्ट ऑफ द एक्सकैवेसन्स आफ दि राक शेल्टर एट आदमगढ एम0 पी0, पूना डेकन कालेज ।

जोशी एम0 सी0 और ए0 के0 सिन्हा 1981, पुरातात्विक साक्ष्य और प्राचीन मथुरा की खोज *उत्तर प्रदेश* (पुरातत्व पर विशेषाक), मई ।

तिवारी, राकेश 1998-99, एन्टीक्यूटी ऑफ आयरन इन साउथ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, *भारती* अक 25 भाग–I & II पृ0 124–137 ।

तिवारी आर0 और आर0 के0 श्रीवास्तव 1996-97, इक्शकैवेशस एट राजानल का टीला डिस्ट्रिक्ट सोनभद्र यू0पी0 प्रिलिमिनरी आवजरवेशन, *प्राग्धारा* न0 7, पृ0 77-96 ।

तिवारी आर0 और आर0 के0 श्रीवास्तव 1997-98, इक्शकैवेशस एट राजानल का टीला (96-97), डिस्ट्रिक्ट सोनभद्र, यू0पी0 प्रिलिमिनरी आवजरवेशन, *प्राग्धारा* न0 8, पृ0 992-106

तिवारी राकेश आर0 के0 श्रीवास्तव एव के0 एस0 सारस्वत, के0 के0 सिह 1999–2000 इक्शकैवेसन एट मल्हार डिस्ट्रिक्ट चन्दौली, उत्तर पद्रेश, 1999 ए प्रिलीमिनरी रिपोर्ट,*प्राग्धारा* अक 10 पृ0 69–98 ।

तिवारी राकेश, आर0 के0 श्रीवास्तव एव के0 के0 सिह, 2001–2002 इक्शकैवेसन एट लहुरादेव, डिस्ट्रिक्ट सन्त कबीर नगर उत्तर पद्रेश *पुरातत्व* अक 32 पृ0 54–59 ।

थापर बी0 के0 1975–76 प्राब्लम्स ऑफ द नियोलिथिक कल्चर्स इन इण्डिया पुरातत्व 7 61–65 ।

थामस पी0 के0 पी0 पी0 जोगलेकर, वी0 डी0 मिश्रा, जे0 एन0 पाण्डेय एव जे0 एन0 पाल 1996, फोनल इविडेस फार द मेसोलिथिक फूड एकोनमी आफ द गगेटिक प्लेन विथ स्पेशल रिफरेश टू दमदमा, *कोलोकियम 33, बायोआर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेग्रेटेड अप्ररोच* फोरली इटली इण्टरनेनशल यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 255-266 ।

थामस पी0 के0 पी0 पी0 जोगलेकर वी0 डी0 मिश्र जे0 एन0 पाण्डेय और जे0 एन0 पाल 1995, ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आफ द फानल रिमेश फ्राम दमदमा *मैन एण्ड इनवारनमेट* अक 20 (1) 29-36 ।

दास गुप्ता पी0 सी0, 1964, *एक्सकैवेशन ऐट पाण्डुराजारढिबि*, कलकत्ता ।

देश पाण्डे एम0 एन0 1969, रोमन पाटरी *पाटरीज इन एशियन्ट इण्डिया* सम्पादक वी0 पी0 सिन्हा पटना ।

दत्ता पी0 सी0 1971 अर्लियस्ट इण्डियन ह्यूमन रिमेन्स फाउण्ड इन ए लेट स्टोन एज साइट *नेचर* 223 पृ0 500–501 ।

दत्ता पी0 सी0 1973, द अर्लियस्ट स्केल्टन रिमेस आफ ए लेट स्टोन एज मैन फ्राम इण्डिया, एन्थ्रोपोलॉजी 11 249-53 ।

दत्ता पी0 सी0 1984, सराय नाहर राय मैन द फार्स्ट एण्ड ओल्डेस्ट ह्यूमन फासिल रिकार्ड इन साऊथ एशिया *एन्थ्रोपोलॉजी* 22 पृ0 35-50 ।

दत्ता पी0 सी0, ए0 पाल और बी0 सी0 दत्ता 1971, सराय नाहर राय ए लेट स्टोन एज साइट इन द प्लेन आफ गगा, *जरनल आफ द इन्डियन एन्थ्रोपालॉजिकल सोसाइटी* अक 6 पृ0 15-28 ।

दत्ता पी0 सी0 ए0 पाल और और जे0 एन0 विश्वास, 1972, लेट स्टोन एज ह्यूमन रिमेस फ्राम सराय नाहर राय द अर्लीयस्ट स्केल्टन एवीडेन्स आफ मैन इन इण्डिया *बुलेटिन आफ द एन्थ्रोपोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया,* अक 21, पृष्ठ 114-38

दत्ता, पी0 सी0 और ए0 पाल 1972, अर्लीयस्ट इण्यिन ह्यूमन स्केल्टन फाइन्ड एण्ड दि इस्टीमेशन आफ स्टेचर, *करेट साइस* अक 41, पृष्ठ 334-35 ।

दुबे अनिल कुमार 1997, *मध्यगगा घाटी मे अधिवास प्रक्रिया जौनपुर जिले के विशेष सन्दर्भ मे,* डी0 फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

दुबे, दयाशकर 1942 *श्रीगगा रहस्य* पृष्ठ 40—45 ।

धवलिकर एम0 के0 2000—2001 कल्चरल इकोलाजी आफ नार्दन इण्डिया *पुरातत्व अक* 31 पृ0 84—91 ।

नागर मालती 1997, फिशिंग एण्ड फिशिग गेयर, ट्राइबल्स आफ द बस्तर *इण्डियन प्रीहिस्ट्री* 1980 पृ0 210—217 ।

नागर, मालती, और वी0 एन0 मिश्र 1989, हन्टर—गैदरर्स इन ऐन अग्रेरियन सेटिग दि नाइन्टीन्थ सेचुरी सिचुएशन इन दि गगा प्लेन्स, *मैन एण्ड इनवायरमेन्ट,* अक 13, पृष्ठ 66-78।

नागर मालती, और बी0 एन0 मिश्र, 1990, दि कर्न्जस–ए हन्टिग–गैदरिंग कम्युनिटी आफ दि गगा वैली, उ0प्र0, *मैन एण्ड इनवायरमेट,* अक 15, पृष्ठ 71-78 ।

नारायण एल0 ए0 1970, नियोलिथिक सेटिलमेन्ट एट चिराद, *जर्नल आफ बिहार रिसर्च सोसायटी* अक 56 (1) पृष्ठ 1-35 ।

नारायण, ए0 के0 और टी0 एन0 राय 1968, *इक्सकैवेसन्स एट प्रहलादपुर,* वाराणसी ।

नारायण ए0 के0 और टी0 एन0 राय, 1976, *इक्सकैवेसन्स एट राजघाट* भाग–1 बी0एच0यू0 वाराणसी

नारायण ए0 के0 और टी0 एन0 राय 1977, *इक्सकैवेसन्स एट राजघाट भाग–2,* बी0 एच0 यू0 वाराणसी ।

नारायण, ए0 के0 और पुरूषोत्तम सिह *इक्सकैवेसन्स एट राजघाट* भाग–3, बी0 एच0 यू0 वाराणसी ।

नारायण ए0 के0 और पी0 के0 अग्रवाल *इक्सकवेसन्स एट राजघाट*–4, बी0 एच0 यू0 वाराणसी ।

नेगी, जे0 एस0 नहुष का टीला, 1975, *के0 सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम,* पृष्ठ 56-58 ।

पाल, जे0 एन0 1977, नव पाषाणिक सस्कृतियॉ डा0 राधाकान्त वर्मा द्वारा लिखित *भारतीय प्रागैतिहासिक सस्कृतियॉ* पृ0 278–279 ।

पाल जे0 एन0, 1980, प्रतापगढ जनपद मे पुरातात्विक अन्वेषण, *मानव* अक 2-3 ।

पाल जे0 एन0 1984, इपीपैलियोलिथिक साइटस इन प्रतापगढ डिस्ट्रिक्ट, उत्तर प्रदेश, *मैन एण्ड इनवायरमेट,* अक 8 पृष्ठ 28-38 ।

पाल जे0 एन0 1985, सम न्यू लाइट आन द मेसोलिथिक वरियल प्रेक्टिस आफ द गगा वैली इवीडेन्स फाम महदहा, *मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट* अक 9, 28-37 ।

पाल, जे0 एन0 1986, *आर्क्यालाजी ऑफ सर्दन उत्तर प्रदेश* सेरामिक इन्डस्ट्रीज आफ नार्दन विन्ध्याज इलाहाबाद स्वाभा प्रकाशन, इलाहाबाद।

पाल, जे0 एन0 1986a, माइक्रोलिथिक इडस्ट्री आफ दमदमा *पुरातत्व न0* 16, पृ0 37–38 ।

पाल जे0 एन0, 1988, मेसोलिथिक डबल वरियल्स फ्राम रिसेट इक्सकैवेसन्स एट दमदमा *मैन एण्ड इनवाइरनमेट* अक 12 पृष्ठ 115-122 ।

पाल, जे0 एन0 1989, फरदर इक्सकैवेसन्स एट दमदमा 1987, *डाइमेन्सस इन इण्डियन आर्क्यलाजी,* (सम्पा0) एस0 के0 पाण्डेय और के0 एस0 रामचन्द्रन नई दिल्ली पृष्ठ 42-45।

पाल, जे0 एन0 1990 ह्यूमन बूरियल प्रैक्टिस ऐट मीसोलिथिक दमदमा, इन *आर्कियोलाजिकल पर्सपेक्टिवस ऑफ उत्तर प्रदेश* भाग–1 (राकेश तिवारी सम्पादक) पृ0 59–65 लखनऊ यू0 पी0 स्टेट आर्कियोलाजिकल आर्गेनाइजेशन

पाल, जे0 एन0 1992a, मेसोलिथिक ह्ययूमन बरियल्स इन द गगेटिक प्लेन नार्थ इण्डिया, *मैन एण्ड एनवायरनमेण्ट,* वाल्यूम 17 (2) 35-44 ।

पाल, जे0 एन0, 1992b, बरियल प्रेक्टिसेस एण्ड आर्क्यालाजिकल रिकवरी, *ह्ययूमन स्केल्टन रिमेस फ्राम महदहा ए गगेटिक मेसोलिथिक साइट,* के0 ए0 आर0

केनेडी जे0 आर0 लुकास आर0 एफ0 पास्टर टी0 एल0 जान्सटन, एन0 सी0 लोवेल जे0एन0पाल, बी0 इ0 हेमफिल और सी0वी0 वरो कृत, साउथ एशिया अकेजनजल पेपर्स एण्ड थीसिस न0 13, कोरनेल यूनिवर्सिटी, इथाका, पृष्ठ 25-60 ।

पाल जे0 एन0 1992c, ह्ययूमन बरियल प्रैक्टिसेस एट मेसोलिथिक दमदमा आर्क्यलाजिकल प्रर्सपेक्टिव *आफ उत्तर प्रदेश एण्ड फयूचर प्रासपेक्ट्स* पार्ट । (सम्पा0) राकेश तिवारी, स्टेट आर्क्यलाजिकल आर्गनाइजेशन, उत्तर प्रदेश लखनऊ पृ0 59-65

पाल, जे0 एन0, 1994, मेसोलिथिक सेटेलमेन्ट इन द गगा वैली *मैन एण्ड इनवाइनमेण्ट* वाल्यूम 19 (1-2) पृष्ठ 91-101 ।

पाल जे0 एन0 1995, चाल्कोलिथिक विन्ध्याज *प्राग्धारा* अक 5, पृष्ठ 13-19 ।

पाल जे0 एन0 1996, लिथिक यूज वियर एनलिसिस एण्ड सगसिस्टेस एक्टिविटीज एमग द मेसोलिथिक पीपुल आफ नार्थ इण्डिया, *कोलोकियम 33, बायो आर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेगरेटेड अप्रोच* फोरली इटली इण्टरनेनशल यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 267-277।

पाल, जे0 एन0 1998 मीसोलिथिक डबल बरियल्स फ्राम दमदमा, *मैन एण्ड इनवायरमेन्ट* XIII 111 115–22 ।

पाल, जे0 एन0 2000, मेसोलिथिक एण्ड नियोलिथिक सोसाइटीज आफ द विन्ध्याज एण्ड द मिडिल गगेटिक प्लेन, *सोसल हिस्ट्री एण्ड सोसल थ्योरी* (सम्पा0) वी0 डी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद पृष्ठ 7-13 ।

पाल जे0 एन0 2002 मेसोलिथिक गैगेटिक प्लेन, *मेसोलिथिक इण्डिया* (सम्पादक वी0डी0 मिश्र एव जे0 एन0 पाल), पृ0 288–305, इलाहाबाद प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ।

पाल जे0 एन0, ओ0 पी0 श्रीवास्तव, अनामिका राय एम0 सी0 गुप्ता 2002 झूँसी आर्कलाजिकल एण्ड हिस्टारिकल इम्प्लीकेशन एज रीवील्ड फ्राम द एक्सकैवेसन्स एट एसियन्ट प्रतिष्ठानपुर *इलाहाबाद एस्पेक्ट्स ऑफ हिस्टोरिकल एण्ड कल्चरल प्रोफाइल* पृ0 1–14

पाण्डेय, जे0 एन0 1983, *पुरातत्व विमर्श* इलाहाबाद।

पाण्डेय, जे0 एन0 1985, *सेटिलमेण्ट पैटर्न एण्ड लाइफ इन द मेसोलिथिक पीरियड इन उत्तर प्रदेश,* डी0 फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ।

पाण्डेय, जे0 एन0 1988, *पुरातत्व विमर्श* (द्वितीय सस्करण), इलाहाबाद ।

पाण्डेय, जे0 एन0 1990 मीसोलिथिक इन द मिडिल गगा वैली *बुलेटिन ऑफ द डेक्कन कालेज रिसर्च इन्स्टीट्यूट* 49 311–16 ।

पाण्डेय जे0 एन0, 1996, बरियल प्रैक्टिसेज एण्ड फनरेरी प्रेक्टिसेज आफ मेसोलिथिक इण्डिया *कोलोकियम 33, बायो आर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेगरेटेड अप्ररोच,* फोरली इटली इण्टरनेनशल यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 279-290 ।

पार्जिटर एफ0 ई0, 1913, *पुराण टैक्सट्स आफ दि डायनेस्टीज आफ दि कलि एज* आक्सफोर्ड ।

पार्जिटर, एफ0 ई0 1962, *एन्सियन्ट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रैडिसन* दिल्ली ।

पाण्डेय ए0 बी0, 1960, *अर्लीमेडिवल इण्डिया* इलाहाबाद ।

पन्त आर0 के0 1979 माइक्रोबियर स्टडीज ऑन बुर्जहोम नियोलिथिक टूल्स *मैन एण्ड इनवायरनमेण्ट* III 11–17 ।

पन्त, आर0 के0 1979a फक्शनल स्टडीज ऑन स्टोन ब्लेड्स माइक्रोवियर पैटर्न्स, *मैन एन इनवायरमेन्ट* III 83–85 ।

पन्त, डी0 डी0 और रेखा पन्त 1980, प्रिलिमिनरी आवजरवेशन आन पोलेन फ्लोरा आफ चोपनी माण्डो (विन्ध्याज) एण्ड महदहा (गगा वैली) *बिगनिग्स आफ एग्रीकल्चर,* जी0 आर0 शर्मा, वी0 डी0 मिश्र, डी0 मण्डल बी0 बी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल पृष्ठ 229-30 ।

पन्त पी0 सी0 एण्ड वी0 जायसवाल 1991 *पैसरा द स्टोन एज सैटेलमेन्ट आफ बिहार,* दिल्ली अगम कला प्रकाशन ।

प्रसाद ए0 के0 1980-81, इक्शकैवेशन्स एट ताराडीह, *पुरातत्व* अक 12, पृष्ठ 138-139 ।

प्रसाद ए0 के0, 1997, ए नोट आन द हैविटस आफ द नियोलिथिक पिपुल आफ द बिहार *इण्डियन प्रीहिस्ट्री,* 1980, सम्पादक मिश्र वी0 डी0 एव जे0 एन0 पाल, पृ0 161-162 ।

बरनवाल प्रहलाद 1998, म*ध्य गागेय मैदान मे सजाति–पुरातात्विक अन्वेषण,* डी0 फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ।

भट्ट एस0 के0 1970 आर्कियोलोजिकल एक्सकैवेशन इन बस्ती डिस्ट्रिक्ट,उत्तर पद्रेश *पुरातत्व* न0 3 पृ0 78–88 ।

मण्डल, डी0 1972, *रेडियो कार्बन डेटस एण्ड इण्डियन आर्क्यालाजी,* इलाहाबाद वैशाली पब्लिकेशन ।

मण्डल, डी0 1997, नियोलिथिक कल्चर्स इन द विन्ध्याज *इण्डियन प्री हिस्ट्री 1980*, (सम्पा0) वी0 डी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल, पृ0 174, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

महाभारत, स्वर्गारोहण पर्व 18/23 ।

मेमोरिया चतुर्भज 1995, *आधुनिक भारत का वृहद भूगोल,* आगरा, पृष्ठ–1029 ।

मिश्र, वी0 डी0, 1970, चल्कोलिथिक कल्चर्स आफ इस्टर्न इण्डिया *द इस्टर्न एन्थ्रोपोलजिस्ट* अक 18, न0 3 पृष्ठ 243-249 ।

मिश्रा वी0 डी0, 1977 *सम ऐसपेक्टस ऑफ इण्डियन आर्कियोलॉजी* इलाहाबाद प्रभात प्रकाशन ।

मिश्र, वी0 डी0, 1996, प्री एन0बी0पी0डब्लू0 *कल्चर्स* इन द मिडिल गगा वैली, *प्रो0*

ए0 पी0 माथुर फेलिटिशन वाल्यूम पृष्ठ 21-34 ।

मिश्र, वी0 डी0, बी0 बी0 मिश्र जे0 एन0 पाण्डेय और जे0 एन0 पाल, 1995-96, ए प्रिलिमिनरी, रिपोर्ट आन द इक्सकैवेसन्स एट झूँसी 1995, *प्राग्धारा,* अक 6, पृष्ठ 63-67 ।

मिश्र, वी0 डी0, बी0 बी0 मिश्र जे0 एन0 पाल और एम0 सी0 गुप्ता, 2000, इक्सप्लोरेशन ऐट टोकवा ए नियोलिथिक–चल्कोलिथिक सेटेलमेन्ट आन दि कानफ्लूएन्स आफ बेलन एण्ड अदवा रिवर्स, *पीपिग थ्रू दि पास्ट प्रो0*

जी0 आर0 शर्मा मेमोरियल वाल्यूम एस0 सी0 भट्टाचार्य वी0 डी0 मिश्र, जे0 एन0 पाण्डेय और जे0 एन0 पाल (सम्पा0) इलाहाबाद पृष्ठ 45-57 ।

मिश्र वी0 डी0 जे0 एन0 पाल और एम0 सी0 गुप्ता, 1988, प्रोटोहिस्टोरिक इन्वेस्टिगेशन प्रतापगढ डिस्ट्रिक्ट उत्तर प्रदेश, *एडाप्टेशन एण्ड एसेज,* सम्पादक एन0 सी0 घोष और सुब्रत चक्रवर्ती, विश्वभारती, पृ0 196-200।

मिश्र, वी0 डी0 और एम0 सी0 गुप्ता 1996, प्री एन0 बी0 पी0 डब्लू0 कल्चर इन द मिडिल गगा वैली *प्रो0 अगम प्रसाद माथुर फेलिसिटेशन वाल्यूम* पृ0 27।

मिश्र, वी0 डी0, जे0 एन0 पाल और एम0 सी0 गुप्ता, 1998-1999 नियोलिथिक कल्चर ऑफ द नर्दान विन्ध्यन विथ स्पेशल, रिफर्रेन्स टू टोकवा, *भारती* वाल्यूम भाग एक–दो पृ0 211–233।

मिश्र, वी0 डी0, जे0 एन0 पाल और एम0 सी0 गुप्ता 2000-2001, इक्सकैवेसन्स एट टोकवा ए नियोलिथिक–चल्कोलिथिक सेटेलमेन्ट, *प्राग्धारा* अक 11, पृष्ठ 59-72 ।

मिश्र वी0 डी0 जे0 एन0 पाल और एम0 सी0 गुप्ता, 1998-99, फरदर इक्सकैवेसन्स एट झूँसी *प्राग्धारा* अक 9, पृष्ठ 45-49 ।

मिश्र, वी0 डी0, जे0 एन0 पाल और एम0 सी0 गुप्ता, 1999-2000, फरदर इक्सकैवेसन्स एट झूँसी (1998-99), *प्राग्धारा,* अक 10, पृष्ठ 23-30 ।

मिश्र, वी0 डी0 और जे0 एन0 पाल 1997, *इण्डियन प्रीहिस्ट्री 1980*, प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद।

मिश्र वी0 डी0 एण्ड जे0 एन0 पाण्डेय 1977 माइक्रोलिथिक इण्डस्ट्री ऑफ मैहर, सतना, मध्य प्रदेश मैन एण्ड इनवायरमेन्ट I 61–63 ।

मिश्र बी० बी० 1997, चाल्कोलिथिक, कल्चर्स आफ दि विन्ध्याज एण्ड सेट्रल गगा वैली, *इण्डियन प्री हिस्ट्री 1980,* (सम्पादक) वी० डी० मिश्र और जे० एन० पाल ।

मिश्रा वी० डी० 1996, हिस्ट्री एण्ड कान्टेक्स्ट आफ मेसोलिथिक रिसर्च एट इलाहाबाद यूनिवर्सिटी इलाहाबाद, इण्डिया, *कोलोकियम 33, बायो आर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेगरेटेड अप्रोच,* फोरली इटली, इण्टरनेनशल यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 245-250 ।

मिश्रा वी० एन० 1971 टू लेट मीसोलिथिक सैटेलमेन्ट इन राजस्थान ए ब्रीफ रिन्यू इनवेस्टीगेसन्स *जरनल ऑफ यूनिवर्सिटी ऑफ पूना* (ह्वयूमैनीटीज) 35 59–77 ।

मिश्रा वी० एन० 1973 बागोर– ए मेसोलिथिक सैटेलमेन्ट ऑफ नार्थ–वेस्ट इण्डिया *वर्ल्ड आर्कियोलॉजी* 5 (1) 92–110 ।

मिश्रा, वी० एन० 1973a न्यू लाइट ऑन द मीसोलिथिक पीरियड इन इण्डिया फ्राम एक्सकक्वेशन ऐट बागोर इन राजस्थान *रिसर्चर* XII-XIII 1–14 ।

मिश्रा वी० एन० 1973b प्राब्लम्स ऑफ पेलियोइकोलाजी पेलियोक्लाइमेट एण्ड क्रोनोलाजी ऑफ नार्थ– बेवेस्ट इण्डिया, *इन रेडियोकार्बन एण्ड इण्डियन आर्कियोलाजी* (डी० पी० अग्रवाल एण्ड ए० घोष सम्पादक), पृ० 58–72 मुम्बई टाटा इन्स्टीटयूट ऑफ फण्डामेन्टल रिसर्च ।

मिश्रा वी० एन० 1989 मीसोलिथिक, इन *ऐन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डियन आर्कियोलाजी* (ए० घोष सम्पादक) वाल्यूम 1, पृ० 37–43, नई दिल्ली मुन्शीराम मनोहरलाल ।

मिश्रा वी0 एन0 1989 मीसोलिथिक इन *ऐन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डियन आर्कियोलाजी* (ए0 घोष सम्पादक) वाल्यूम 2, पृ0 34–37 नई दिल्ली मुन्शीराम मनोहरलाल ।

मिश्र वी0 एन0, 1996, मेसोलिथिक इडिया हिस्ट्री एण्ड करेट स्टेटस आफ रिसर्च, *कोलोकियम 33ए बायो आर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेगरेटेड अप्ररोच* फोरली इटली इण्टरनेनशल यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 321-328 ।

मिश्र, वी0 एन0 2002, मेसोलिथिक कल्चर इन इण्डिया की नोट, *मेसोलिथिक इण्डिया* (वी0 डी0 मिश्र एव जे0 एन0 पाल सम्पादक), पृ0 1–66, इलाहाबाद प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

मिश्र वी0 डी0 और बी0 बी0 मिश्र 1983, मेसोलिथिक कल्चर आफ द अदवा वैली नार्दन विन्ध्याज IAS और IASPQS के वार्षिक सम्मेलन, पुणे मे प्रस्तुत शोधपत्रा ।

मिश्र वी0 डी0 और जे0 एन0 पाल (सम्पादक) 2000, *सोसल हिस्ट्री एण्ड सोसल थ्योरी,* प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

मिश्र वी0 डी0 और जे0 एन0 पाल (सम्पादक), 2001, *मेसोलिथिक इन इण्डिया,* प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ।

मिश्र, बी0 बी0 1997, चाल्कोलिथिक कल्चर्स आफ द विन्ध्याज एण्ड द सेन्ट्रल गगा वैली, *इण्डियन प्री हिस्ट्री 1980*, (सम्पादक) वी0 डी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद पृ0 286-292 ।

मिश्र वी0 डी0 बी0 बी0 मिश्र 2000, चाल्कोलिथिक कल्चर्स आफ दि नार्दन विन्ध्याज एण्ड द मिडिल गगा वैली सम आब्जर्वेशन्स *सोसल हिस्ट्री एण्ड सोसल थ्योरी* (सम्पादक) वी0 डी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद पृष्ठ 14-22 ।

मिश्र बी0 बी0 2000, चाल्कोलिथिक कल्चर्स आफ नादर्न विन्ध्याज एण्ड द मिडिल गगा वैली *पीपिग थ्रो द पास्ट प्रो0 जी0 आर0 शर्मा मिमोरियल वाल्यूम*, (सम्पादक) एस0 सी0 भट्टाचार्या वी0 डी0 मिश्र जे0 एन0 पाण्डेय और जे0 एन0 पाल, प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद पृ0 66–85।

मिश्र वी0 के0 1960, *अवध के प्रमुखकवि*, लखनऊ ।

मुकर्जी पी0 सी0 1898 *रिर्पाट ऑन द एक्सकैवेसन्स आन द एसियन्ट साइट ऑफ पाटलिपुत्र (पटना– बॉकीपुर)* कलकत्ता ।

मजूमदार आर0 सी0 ए0 डी0 पुसालकर (सम्पादक) 1951, *दि हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल वैदिक एज* वाल्यूम 1 बम्बई ।

मजूमदार, आर0 सी0 1960, *एन्शियन्ट इण्डिया* दिल्ली ।

मजूमदार, आर0 सी0 और ए0 डी0 पुसालकर 1954, *हिस्ट्री एण्ड कलचर आफ दि इण्डियन पीपुल द क्लासिकल एज*, वाल्यूम 4, बम्बई ।

रे रेबा 1987, एशियट सेटेलमेन्ट पैटर्न इन इस्टर्न इण्डिया, कलकत्ता ।

राय चौधरी एच0 सी0 1971, *बिहार,* न्यू दिल्ली ।

राय, टी0 एन0 1983, *दि गैगेटिक सिविलीजेशन* नयी दिल्ली ।

राय टी0 एन0 1985-86, इक्शकैवेशन एट माझी– 1983-85, ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट *पुरातत्व न0* 16 पृ0 29-32 ।

राय, टी0 एन0 1997, एन इन्डीकेशन आफ द चाल्कोलिथिक कल्चर्स एट सम साइट्स आफ उत्तर प्रदेश इण्डियन प्रीहिस्ट्री 1980 सम्पादक वी0 डी0 मिश्र एव जे0 एन0 पाल पृ0 298—300 ।

ली आर0 बी0 और डी0 वोरे, 1968, *मैन दि हटर,* शिकागो ।

लुकास जान0 आर0, जे0 एन0 पाल और वी0 डी0 मिश्र, 1996, क्रोनोलाजी एण्ड डायट इन मेसोलिथिक नार्थ इण्डिया ए प्रीहिस्ट्री रिपोर्ट आफ न्यू ए0 एम0 सी0 14 डेटस डी 13 जिस्टोप वैल्यूज एण्ड देयर सिग्नीफिकेस, *कोलोकियम 33, बायो आर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेगरेटेड अप्रोच* फोरली इटली इण्टरनेनशल यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 301-311 ।

लोवेल एन0 सी0 1992, पेलियोडेमोग्राफी, *ह्ययूमन स्केल्टन रिमेन्स फ्राम महदहा ए गगेटिक मेसोलिथिक साइट* मे के0 ए0 आर0 केनेडी और अन्य कोरनेल यूनिवर्सिटी साऊथ एशिया प्रोग्राम आकेजनल पेपर एण्ड थेसिस पृष्ठ 139-56 ।

लाल बी0 बी0 1954-55, एक्सकैवेसन्स एट हस्तिनापुर एड अदर एक्सप्लोरेसन्स इन द अपर गगा एड सतलज बेसिस 1950—52, *एशिन्ट इण्डिया* न0 10—11, पृ0 5—151 ।

लाल बी0 बी0 1979-80, आर द डिफेन्सेस ऑफ कौशाम्बी रियली एज ओल्ड एज 1025 बी0 सी0? पुरातत्व अक 11 पृ0 88–95 ।

लाल बी0 बी0 1989, की नोट एडेस श्री राम इन आर्ट आर्कयोलाजी एण्ड लिटरेचर, बिहार पुरातत्व परिषद पटना पृ0 1–11 ।

लाल बी0 बी0 और के0 एन0 दीक्षित 1978-79 श्रृगवेरपुर ए की–साइट आफ द प्रोटोहिस्ट्री एण्ड अर्ली हिस्ट्री आफ सेट्रल गगा वैली *पुरातत्व,* अक 10, पृ0 1-7 ।

लुकास जे0 आर0 1982 मीसोलिथिक हन्टर्स एण्ड फोरेर्जस ऑफ द गगैटिक प्लेन ए समरी ऑफ करेन्ट रिसर्च इन डेण्टल एन्थ्रोपोलाजी, *डेण्टल एन्थ्रोपोलाजी न्यूज लेटर* 6 (3) 3–8 ।

लुकास, जे0 आर0, और जे0 एन0 पाल, 1992, डेटल एन्थ्रोपोलाजी आफ मेसोलिथिक हटर–गैदर्स ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आफ द महदहा एण्ड सराय नहर राय डेन्टीशन *मैन एण्ड इनवाइरनमेट* अक 17 (2) पृ0 45-55 ।

लाल मक्खन 1984 सेटिमेट हिस्ट्री ऐण्ड राइज आफ सिविलाइजेशन इन गगा यमुना दोआब, नई दिल्ली ।

लुकास, जे0 आर0 और जे0 एन0 पाल, 1993 मेसोलिथिक सब्सीटेन्स इन नार्थ इण्डिया इन करेट एन्थ्रोपोलोजी, रेफिरेन्सेस फ्राम डेटल आर्टीब्यूट्यस, वाल्यूम 34, अक 5, पृष्ठ 745-765 ।

लुकास जे0 आर0, जे0 एन0 पाल और वी0 डी0 मिश्र 1996, क्रोनोलाजी एण्ड डायट इन मेसोलिथिक नार्थ इण्डिया ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन न्यू ए एम एस डेट्स, ^{13}C आइसोटोप वैल्यूज एण्ड देयर सिग्नीफिकेन्स कोलोकियम आफ इन्टरनेशनल काग्रेस आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड्र प्रोटोहिस्टारिक साइसेज

1996, जी0 ई0 एफनसेव एस क्यूजीवो जे0 आर0 लुकास और माराजिवो तोसी पृष्ठ 301-311, इटली ।

लिवेनस्टीन, सुजाने एम0 1987 स्टोन टूल यूज ऐट सेरटस आस्टीन टैक्सास यूनिवर्सिटी ऑफ टैक्सास प्रेस ।

वाडेल, एल0 ए0 1892 *डिस्कवरी ऑफ दि एक्जैक्ट साइट आफ अशोकाज क्लासिक कैपिटल ऑफ पाटलिपुत्र, दि पालीबोथ्रा ऑफ द ग्रीक्स एण्ड डिस्क्रप्सन ऑफ सुपरफीसीयल रिमेस,* कलकत्ता ।

वाडेल एल0 ए0 1903 *रिर्पोट आन द एक्सकैवेसन ऐट पाटलिपुत्र (पटना) पालीबोथ्रा ऑफ द ग्रीक्स* कलकत्ता ।

वर्मा, आर0 के0 1964 स्टोन एज कल्चरस ऑफ मिर्जापुर डी0 फिल0 डिसरटेशन इलाहाबाद यूनिवर्सिटी ऑफ इलाहाबाद ।

वर्मा आर0 के0 1965 कमेण्ट्स ऑन मीसोलिथिक फेज इन द प्रीहिस्ट्री ऑफ इण्डिया, इन इण्डियन प्रीहिस्ट्री 1964 । (बी0 एन0 मिश्रा एण्ड एम0 एस0 मेट सम्पादक) पृ0 73–7 पूना दक्कन कालेज ।

वर्मा, आर0 के0 1986 प्री एग्रीकल्चर मीसोलिथिक सोसायटी ऑफ द गगा वैली, *इन ओल्ड प्रोब्लेम्स एण्ड न्यू पर्सपेक्टिव इन द आर्कियोलाजी ऑफ साउथ एशिया।* (जे0 एम0 केन्योर सम्पादक), पृ0 55–58 विस्काम्यिन आर्कियोलाजिकल रिर्पोटस न0 2, मेडिसान एफ0 एण्ड एच0 प्रिन्टिग कम्पनी।

वर्मा, आर0 के0, 1986a भारतीय प्रागितिहास इलाहाबाद, परमज्योति प्रकाशन ।

वर्मा आर0 के0, 1996, सबसिस्टेस इकोनामी आफ द मेसोलिथिक फाक एज रिफलेक्टेड इन दि राक पेन्टिग्स आफ द विन्ध्यन रीजन *कोलोकियम 33,*

बायो आर्क्यलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया एन इन्टेगरेटेड अप्रोच, फोरली इटली, इण्टरनेनशल, यूनियन आफ प्रीहिस्टारिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेज के 13 वे अधिवेशन की प्रोसीडिग पृष्ठ 329-337।

वाटसन वी0 1955, आर्क्यालाजी एण्ड प्रोटीन्स, अमेरिकन एन्ॲीक्यूटी अक, 20 पृ0 288-296 ।

विन्टरनित्ज, एम0, 1927, *ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर,* वाल्यूम 1, कलकत्ता।

वर्मा राधाकान्त 1970, *भारतीय प्रागितिहास,* इलाहाबाद ।

वर्मा, राधाकान्त 1977, *भारतीय प्रागैतिहासिक सस्कृतियॉ,* इलाहाबाद ।

वर्मा, राधाकान्त 1987, *मेसोलिथिक एज इन मिर्जापुर* इलाहाबाद ।

वर्मा आर0 के0 वी0 डी0 मिश्र, जे0 एन0 पाण्डेय और जे0 एन0 पाल 1985, ए प्रिलीमिनरी रिपोर्ट आन द इक्सकैवेसप्स एट दमदमा (1982-84) *मैन एण्ड इनवाइरनमेण्ट* अक 9 पृष्ठ 45-65।

वर्मा आर0 के0, 2000, ए नोट आन सम ऐस्पेक्ट्स आफ सोसाइटी डियूरिंग द मेसोलिथिक पीरियड, वी0 डी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल द्वारा सम्पादित *सोसल हिस्ट्री एण्ड सोसल थ्योरी मे* इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद पृष्ठ 1-6 ।

वर्मा आर0 के0 2002 पुरातत्व अनुशीलन भाग–2 परमज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद।

वर्मा, विजय प्रकाश 1993, *फैजाबाद जनपद का पुरातत्व,* डी0 फिल उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद, विश्वविद्यालय इलाहाबाद।

वर्मा विजय प्रकाश 2000, *अवध और अयोध्या पुरातात्विक दृष्टि* इलाहाबाद ।

वर्मा, वी0 एस0 1969, ब्लैक एण्ड रेड वेयर इन विहार वी0 पी0 सिन्हा (सम्पादक) *पाटरीज इन एन्शियन्ट इण्डिया* पृष्ठ 102-111 ।

वर्मा वी0 एस0 1971, इक्सकैवेसन्स एट चिराद न्यू लाइट आन इण्डियन नियोलिथिक कल्चर काम्पलेक्स, *पुरातत्व* न0 4 ।

वर्मा वी0 एस0 1969, ब्लैक ऐड रेड वेयर इन बिहार, पाटरीज इन ऐशियट इण्डिया पृ0 103 104 ।

वैलियाना टोस एच0, 1999, प्रिल्यूड टू पैलियोडाइट (ए हिस्टोलोजिकल एण्ड एलीमेन्टल स्टडी आफ डायाजेनेसिस एमग अर्ली होलोसीन स्केलेटन्स फ्राम नार्थ इण्डिया इलाहाबाद ।

विष्णु मित्रे, 1972 नियोलिथिक प्लान्ट एकोनामी एट चिराद *द पेलियो वाटनिस्त् पुरातत्व* न0 1 पृ0 18–21 ।

शुक्ल, विमल चन्द, 1997, *भारतीय कला के विविध आयाम,* इलाहाबाद ।

शुक्ल विमल चन्द 1986, पुरानुसधान, इलाहाबाद ।

शर्मा, वाई0 डी0 1953, एक्सप्लोरेशन आफ आर्कियोलाजिकल साइट, *एशिन्ट इण्डिया* न0 9 पृ0 186 ।

शर्मा जी0 आर0 1949–50, *मेमोआर्यस आफ दि आर्कलोजिकल सर्वे आफ इण्डिया,* न0 74 न्यू दिल्ली ।

शर्मा, जी0 आर0, 1960, *इक्सकैवेसन्स एट कौशाम्बी 1957-59*, इलाहाबाद ।

शर्मा जी० आर०, 1969, *इक्सकैवेसन्स एट कौशाम्बी 1949-50* एम० ए० एस० 70 दिल्ली ।

शर्मा, जी० आर० 1973 मीसोलिथिक लेक कल्चरस इन द गगा वैली इण्डिया *प्रोसीडिग्स ऑफ द प्रीहिस्टोरिक सोसायटी* 39 129–146 ।

शर्मा जी० आर० 1973a, स्टोन एज इन द विन्ध्याज एण्ड दी गगा वैली *रेडियो कार्बन एण्ड इण्डियन आक्योलाजी* (सम्पादक) डी पी० अग्रवाल और ए० घोष बाम्बे पृष्ठ 106-110 ।

शर्मा, जी० आर० 1975, सीजनल माइग्रेसन्स एण्ड मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन द गगा वैली *के० सी० चटटोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम* इलाहाबाद पृष्ठ 1-20 ।

शर्मा, जी० आर० 1978, प्रागैतिहासिक मानव की कहानी गगाघाटी की प्राचीन सस्कृति पर नया प्रकाश *दिनमान,* भाग–14 अक 34, 20-26 अगस्त 1978।

शर्मा आर० एस० 1979 *मटेरियल कल्चर्स ऐण्ड सोसल फारमेशन इन एसियन्ट इण्डिया,* नई दिल्ली।

शर्मा जी० आर० 1980, हिस्ट्री टू प्री हिस्ट्री इलाहाबाद ।

शर्मा जी० आर० 1980a *रेह इस्क्रिप्सन आफ मेनाण्डर एण्ड इण्डोग्रीक इनवेजन आफ दी गगा वैली* इलाहाबाद ।

शर्मा, जी० आर०, वी० डी० मिश्र डी० मण्डल, बी० बी० मिश्र और जे० एन० पाल 1980, *विगनिग्स आफ एग्रीकल्चर,* इलाहाबाद ।

शर्मा जी0 आर0 और बी0 बी0 मिश्र 1980, *इक्सकैवेसन्स एट चोपानीमाण्डो* प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

शर्मा जी0 आर0 मिश्र वी0 डी0 मडल डी0 मिश्र वी0 वी0 और पाल जे0 एन0 1980b, फ्राम हटिग गैदरिंग टू फूछ प्रोडक्शन एण्ड डोमेस्टीकेशन आफ एनीमल्स इक्सकैवेशन्स एट चोपानीमाण्डो महदहा एव महदहा, *हिस्ट्री एण्ड आर्क्योलाजी,* वाल्यूम प्रथम इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

शर्मा जी0 आर0 वी0 डी0 मिश्र और जे0 एन0 पाल, 1980a, *इक्सकैवेसन्स एट महदहा,* इलाहाबाद।

स्पेट ओ0 एच0 के0 और ए0 एम0 लीरमान्थ 1960 *इण्डियन एण्ड पाकिस्तान* पृ0 210–217 ।

स्पूनर बी0 बी0 1912–13 आर्कियोलजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया– एनुवल रिर्पोट पृ0 53 ।

स्मिथ, वी0 ए0 1906 द पिग्मी फिलण्ट्स *इडिण्यन एण्टीक्वेरी* XXXV 185–95।

सर मार्शल जान 1911, आर्कियोलाजिकल एक्सप्लोरेशन इन इण्डिया, *जरनल आफ एशियाटिक सोसायटी* पृ0 127 के आगे *एन एनुवल रिपोर्ट आफ आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया* 1909–10 पृ0 40 और आगे एनुअल रिपोर्ट ए0 एस0 आई0, 1911–12, पृ0 29 से आगे ।

सेन डी0 1950, एन्सिट साइट इन सिहभूमि मैन एण्ड इनवायरमेन्ट, वाल्यूम 30 पृ0 1–12।

सकालिया, एच0 डी0, 1965, *इक्सकैवेसन्स एट लघनाज 1944-63* पार्ट 1–आर्क्यालाजी, डेकन कालेज, पुणे ।

सकालिया एच0 डी0 1974 *प्री0 हिस्ट्री एण्ड प्रोटोहिस्ट्री आफ इण्डिया एड पाकिस्तान* पूना डेकन कालेज ।

सिह अरविन्द कुमार 1993 *स्टडी आफ मैटेरियल कल्चर आफ द गगेटिक प्लेन एन द फर्स्ट मिलियन बी0 सी0* डी0 फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत आप्रकाशित शोध प्रबन्ध पृ0 160 बी0 एच0 यू0 वाराणसी ।

सिह आर0 एल0 1971, *इण्डिया ए रीजनल जाग्रफी* वाराणसी ।

सिह पुरूषोत्तम 1984 *एक्सकैवेशन एट नरहन* 1984 और इमलीडीह सिह, पी0 एक्सकैवेशन एट इमलीडीह खुर्द, *पुरातत्व न0* 22 पृ0 120–122 ।

सिह पुरूषोत्तम, 1994 *एक्सकैवेशन एट नरहन* (1984–89) बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय और बी0 आर0 कारपोरेशन, नई दिल्ली ।

सिह पुरुषोत्तम और अशोक कुमार सिह 1999–2000 एक्सकवेशन एट अगियाबीर, जनपद मिर्जापुर उत्तर पद्रेश, *प्राग्धारा* अक 10, पृ0 31–56 ।

सिह पी, ए0 के0 सिह और इन्द्रजीत सिह, 1991–92, एक्सकवेशन एट इमलीडीह खुर्द, *पुरातत्व न0* 22 पृ0 120–122 ।

सिह पी0 *प्रागधारा* न0 –1 ।

सिह पुरुषोत्तम 1996 *प्रिल्यूड टू अर्बनाइजेशन इन द सरयूपार प्लेन,* अध्यक्षीय भाषाण, भाग–5, द इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस 57 वॉ अधिवेशन चेन्नई।

सिह, बी0 पी0, 1987-88, खैराडीह ए चैल्कोलिथिक सेटेलमेट, *पुरातत्व* न0 18, पृ0 28-34 ।

सिह बी0 पी0, 1988-89, अर्ली फारमिग कम्यूनिटीज ऑफ कैमूर फूट हिल्स, *पुरातत्व* न0 19 पृ0 6–180 ।

सिह बी0 पी0 1989-90, चैल्कोलिथिक कल्चर आफ सर्दन बिहार ऐज रिवील्ड वाई दि इक्शप्लोरेशन एण्ड इक्शकैवेशन इल डिस्ट्रिक्ट रोहताज *पुरातत्व न0* 20, पृ0 83-92 ।

सिह बी0 पी0 1992 चैल्कोलिथिक कल्चर आफ ईर्स्टन उत्तर प्रदेश आर्कलाजिकल पर्सपेक्टिव उत्तर प्रदेश एण्ड फ्यूचर प्रास्पेक्ट्स, प्रोसीडिंग्स ऑफ द सेमिनार उत्तर प्रदेश राज्य पुरातत्व सगठन लखनऊ पृ0 77–84।

सिह बी0 पी0 2000–2001 स्टेजेज ऑफ कल्चर डेवलपमेट इन द मिडिल गगा प्लेन– ए केस स्टडी ऑफ सेनुवार, प्रागधारा अक 11 पृ0 109–118 ।

सिन्हा के0 के0, 1959 *एक्सकैवेशन एट श्रावस्ती* बी0 एच0 यू0, वाराणसी ।

सिन्हा वी0 पी0 1979, इक्शकैवेसन एट चम्पा आर्क्यालजी एण्ड आर्ट आफ इण्डिया दिल्ली ।

सिन्हा वी0 वी0 और वी0 एस0 वर्मा 1970, सोनपुर इक्शकैवेशन, पटना ।

सिन्हा बी0 पी0 और एस0 आर0 राय 1969, *वैशाली इक्शकैवसन 1958–62* पटना ।

सिन्हा बी0 पी0 और एल0 ए0 नारायन 1955–56 *पाटलिपुत्र एक्सकैवेसन्स,* पटना।

सिह बी0 पी0 1987-88, खैराडीह ए चाल्कोलिथिक सेटेलमेट, *पुरातत्व* न0 18, पृष्ठ 28-37 ।

सिह बी0 पी0 1995&96 ट्रासफारमेसन ऑफ कल्चर्स इन द मिडिल गगा प्लेन्स ए केस स्टडी आफ सेनुवार, *प्रागधारा,* अक 6, पृ0 75–93।

सिह, पुरूषोत्तम 1992-1993, आर्कयोलाजिकल एक्सकैवेशस एट इमलीडीह खुर्द– 1992 *प्राग्धारा*–3 पृ0 21–35 /

सिह पुरूषोत्तम 1994, *इक्सकैवेसन्स एट नरहन* (1984-89), नई दिल्ली ।

सिह पुरूषोत्तम और अशोक कुमार सिह 1999-2000, इक्सकैवेशन्स एट अगिया वीर डिस्ट्रिक्ट मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश) प्रागधारा अक 10, पृष्ठ 31-55 ।

सिह, पी0 ए0 के0 सिह और इन्द्रजीत सिह 1991-92, इक्सकैवेशन्स ऐट इमलीडीह खुर्द पुरातत्व न0 22, पृष्ठ 120-122 ।

सिह पुरूषोत्तम, और मक्खन लाल, 1985, नरहन 1983-85, ए प्रीलिमिनरी रिपोर्ट, *भारती* बुलेटिन न0 3 आफ दी डिर्पाटमेन्ट आफ एन्शियट इण्डियन हिस्ट्री कल्चर एण्ड आर्क्यालाजी बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी (एन0 एस0 3) ।

त्रिपाठी आर0 एस0, 1960 *हिस्ट्री आफ द एन्सियट इण्डिया,* दिल्ली ।

श्रीवास्तव के0 एम0 1986 *डिस्कवरी आफ कपिलवस्तु* नई दिल्ली ।

हैरिस डेविड आर0 1996 *दि ओरिजन्स एण्ड स्प्रेड ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड पैसटोरालिज्म इन यूरेशिया,* लन्दन यू0सी0एल0 प्रेस लिमिटेड।